

# साहित्य-सुधा

बारहवीं कक्षा



साहित्य-सुधा

• बारहवीं कक्षा

Odisha State Bureau of Textbook  
Preparation and Production  
Pustak Bhavan, Bhubaneswar



ओड़िशा राज्य पाठ्य पुस्तक प्रणयन एवं प्रकाशन संस्था  
पुस्तक भवन, भुवनेश्वर

# साहित्य - सुधा

बारहवीं कक्षा

आधुनिक भारतीय भाषा

अनिवार्य विषय - हिन्दी

संपादक मंडल

प्रो. डॉक्टर राधाकान्त मिश्र

प्रो. डॉक्टर स्मरप्रिया मिश्र

डॉक्टर अजय कुमार पटनायक

डॉक्टर अंजुमन आरा

डॉक्टर सनातन बेहेरा



प्रकाशक

ओड़िशा राज्य पाठ्य पुस्तक प्रणयन एवं प्रकाशन संस्था

पुस्तक भवन, भुवनेश्वर

## साहित्य - सुधा : ग्यारहवीं कक्षा

उच्च माध्यमिक (Higher Secondary) बारहवीं कक्षा परीक्षा के लिए ओड़िशा राज्य पाठ्य पुस्तक प्रणयन और प्रकाशन संस्था द्वारा प्रकाशित और उच्च माध्यमिक शिक्षा परिषद के द्वारा अनुमोदित।

संपादक मंडल

प्रो. डॉक्टर राधाकान्त मिश्र

प्रो. डॉक्टर स्मरप्रिया मिश्र

डॉक्टर अजय कुमार पटनायक

डॉक्टर अंजुमन आरा

डॉक्टर सनातन बेहेरा

### Published by

The Odisha State Bureau of Text Book preparation and production,  
Pustak Bhavan, Bhubaneswar, Odisha, India

First Edition : 2017/ 20,000 Copies

Publication No : 211

ISBN : 978-81-8005-406-8

©Reserved by the Odisha State Bureau of Text-Book preparation and production, Bhubaneswar, No part of this publication may be reproduced in any form without the prior written permission of the publisher.

Type Setting & Printing : M/s Print-Tech Offset Pvt. Ltd.

Price : 41/- (Rupees Forty one only )

# आमुख

ओड़िआभाषी हिंदी विद्यार्थियों के लिए उनके ज्ञान-स्तर के आधार पर यह पाठ्य-पुस्तक बड़ी मेहनत से बनायी गयी है। यह महत्वपूर्ण कार्य सफल होते देख हमें खुशी हो रही है।

आशा है, इस पुस्तक से विद्यार्थियों को लाभ होगा और अध्यापकों को मदद मिलेगी।

श्री उमाकान्त त्रिपाठी  
निदेशक

ओड़िशा राज्य पाठ्य पुस्तक प्रणयन एवं प्रकाशन संस्था  
पुस्तक भवन, भुवनेश्वर



# भूमिका

हिन्दी देश की राष्ट्रभाषा और राजभाषा है। इसका अध्ययन अत्यंत महत्वपूर्ण है। तदनुसार समुचित पाठ्यक्रम और पाठ्य-विषयों का निरूपण होना आवश्यक है। चूँकि पाठ्यक्रम का यह अंतिम वर्ष है, इसलिए इसमें चुनिंदा लेखकों की रचनाएँ शामिल की गई हैं।

भाषा-शिक्षण के लिए अपठित गद्यांश और पद्यांश, प्रयोजनमूलक हिन्दी तथा रचना और व्याकरण के आवश्यक विषय चुने गये हैं। अध्यापकों से अनुरोध है कि वे इन विषयों पर बराबर चर्चा करें और अभ्यास-कार्य करायें, ताकि विद्यार्थियों की भाषा-दक्षता सुदृढ़ हो।

साहित्यिक विषयों की सम्यक् व्याख्या और विवेचन भी किया जाय, इसलिए इस पुस्तक में हिन्दी के प्रख्यात कवियों और लेखकों की रचनाओं को समाविष्ट किया गया है। कविता (पुरानी और आधुनिक), कहानी और निबंध जैसी विधाओं की स्वतंत्र विशेषताओं पर ज्ञान प्रदान किया जाय। इससे राष्ट्रभावना, मानवता और यथार्थपरक चिंतन का विकास हो। शब्दार्थ और विवेचन पर जोर दिया जाय।

आशा है, यह संकलन सबको पसंद आएगा। इस कार्य में संस्था के निदेशक श्री उमाकांत त्रिपाठी, उनके सचिव श्री शिवप्रसाद जेना तथा संबंधित कर्मकर्ताओं का निरंतर उत्साह मिलता रहा है। वे धन्यवाद के पात्र हैं।

**लेखक-संपादक मंडल**



# सूची पत्र

काव्य-पाठ	पृष्ठ
१. रहीम के दोहे	01
२. तुलसीदास - राम-विभीषण मिलन	08
३. मैथिलीशरण गुप्त - नर हो, न निराश करो मन को	24
४. सूर्यकांत त्रिपाठी निराला - वीणावादिनि वरदे, बादल राग	29
५. बच्चन - अग्निपथ	37
६. सुभद्राकुमारी चौहान - झाँसी की रानी	43
७. मुक्तिबोध - पूँजीवादी समाज के प्रति	52
८. मंगलेश डबराल - ताकत की दुनिया	59
गद्य-पाठ	
निबंध	
१. बालकृष्ण भट्ट- आत्मनिर्भरता	67
२. रामचंद्र शुक्ल- उत्साह	74
३. शरद जोशी- तुम कब जाओगे अतिथि	91
४. बचेन्द्री पाल- एवरेस्ट : मेरी शिखर यात्रा	100
कहानी और एकांकी	
१. अज्ञेय - खितीन बाबू	113
२. मोहन राकेश- परमात्मा का कुत्ता	124
३. मन्नू भंडारी- मजबूरी	136
४. भारत भूषण अग्रवाल- महाभारत की एक साँझ	157



व्याकरण, कार्यालयी हिन्दी और रचनात्मक लेखन

१. संज्ञा	174
२. लिंग	177
३. वचन	182
४. विशेषण	183
५. पुल्लवन	187
६. पत्र लेखन	193
७. अपठित गद्यांश और पद्यांश	203



# रहीम

(१५५६-१६२७ ईस्वी)

रहीम का पूरा नाम अब्दुरहीम खानखाना था। वे अकबर बादशाह के संरक्षक बैरम खाँ के पुत्र थे। पिता हज में गए और रास्ते में मारे गए। सो, इनका पालन पोषण शाही महल में हुआ। लेकिन सुख, प्राचुर्य, विलास आदि रहीम पर कोई बुरा असर नहीं डाल सके। वे अकबर के प्रधान सेनापति थे, लेकिन उन्होंने सर्वदा सामान्य जन, साधारण जीवन, सरलता पर जोर दिया।

रहीम अत्यंत लोकप्रिय कवि इसलिए हुए क्यों कि उन्होंने साधारण मनुष्य के जीवन की अनुभूतियों पर लिखा, वह भी सरल और सहज भाषा में। इससे रहीम के दोहे लोगों की जीभ पर नाचते हैं।

‘रहीम सतसई’, ‘श्रृंगार सतसई’, ‘रास पंचाध्यायी’, ‘रहीम रत्नावली’, ‘नायिका भेद वर्णन’ आदि इनकी रचनाएँ हैं। ये भक्ति और रीतिकाल की एक मधुर कड़ी हैं। राम, कृष्ण, आदि के भक्ति संबंधी दोहे भी रचे हैं। दोहा, कवित्त, सवैया, सोरठा तथा बरवै आदि अनेक छंदों का प्रयोग सफलतापूर्वक किया है।

इसलिए रहीम बड़े लोकप्रिय कवि हैं क्यों कि उनके दोहे सामान्य और विद्वान् दोनों के द्वारा आदृत होते हैं। दैनिक जीवन की अनुभूतियों को प्रत्यक्ष दृष्टांतों के द्वारा अभिव्यक्त करने से रहीम के दोहे नीरस नहीं होते, उनके कथन सीधे मर्म को स्पर्श करते हैं। रहीम बड़े महल में रहते हुए भी मानवीय गुण-दोषों की अच्छी जानकारी रखते थे। उनकी भले-बुरे की पहचान बहुत अच्छी थी।

रहीम ने ज्यादातर दोहे लिखे हैं। लेकिन उनके द्वारा रचित कवित्त, सवैया, सोरठा, बरवै छन्दों का अच्छा प्रयोग हुआ है। उनका ब्रज और अवधी दोनों भाषाओं पर समान अधिकार था।

सीधी बात करने की उनकी शैली अनोखी है। न तो अलंकार का बोझ है न कोई दूर की कल्पना। बात सुनते ही चित्र अंकित हो जाता है। उनमें धार्मिक संकीर्णता नाम मात्र को नहीं थी। इसलिए उन्होंने जहाँ भी कार्य किया, उन्हें आदर मिला।

## दोहे

तैं रहीम मन आपुनो, कीन्हों चारु चकोर ।  
निसि-बासर लागि रहै, कृष्णचन्द्र की ओर ॥१॥  
रहिमन धागा प्रेम का, मत तोरो छिटकाय ।  
टूटे से फिर ना मिले, मिले गाँठि परिजाय ॥२॥  
कह रहीम निज संग लै, जनमत जगत कोय ।  
बैर, प्रीति अभ्यास जस, होत होत ही होय ॥३॥  
कहि रहीम संपत्ति सगे, बनत बहुत बहुरीत ।  
बिपत्ति कसौटी जे कसे, ते ही साँचे मीत ॥४॥  
रहिमन कठिन चितान ते, चिंता को चित चेत ।  
चिता दहति निर्जीव को, चिंता जीव समेत ॥५॥  
जो गरीब पर हित करै, ते रहीम बड़ लोग ।  
कहाँ सुदामा बापुरो, कृष्ण-मिताई जोग ॥६॥  
कदली, सीप, भुजंग-मुख, स्वाति एक गुन तीन ।  
जैसी संगति बैठिए, तैसोई फल दीन ॥७॥  
चाह गई चिंता मिटी, मनुआ बेपरवाह ।  
जिनको कछु न चाहिए, वे साहन के साह ॥८॥  
रहिमन पानी राखिये, बिन पानी सब सून ।  
पानी गए न ऊबरैं, मोती, मानुष, चून ॥९॥  
समय पाय फल होत है, समय पाय झरि जाय ।  
सदा रहे नहिं एक सी, का रहीम“ पछिताय ॥१०॥  
‘रहिमन’ निज मन की बिथा, मनही राखो गोय ।  
सुनि अठिलैहैं लोग सब, बाँटि न लैहैं कोय ॥११॥

## शब्दार्थ / भावार्थ:

तैं = तू; आपनों = अपना; कीन्हों = किया; चारु = सुंदर; चकोर = चकोर नामक पक्षी जो चन्द्रमा का बड़ा प्रेमी है और उसे एकटक देखता रहता है। निसि-बासर = रातदिन; कृष्णचन्द्र = कृष्ण रूपक चन्द्र; धागा-सूत; प्रेम रूपी सूत को, छिटकाकर न तोड़ो। एकबार धागा टूट जाता है तो जुड़ता नहीं। अगर जुड़ता है तो उसमें गाँठ पड़ जाती है, अर्थात् जैसे गाँठ कर्कश होती है, उसमें मिठास नहीं रहती, वैसे ही एक बार प्रेम का संपर्क बिगड़ जाता है तो फिर नहीं जुड़ता और कभी जुड़ता भी है तो कहीं न कहीं गाँठ रह जाती है, पूर्व मिठास नहीं रहती। २ । रहीम कहते हैं कि इस संसार में कोई अपने जन्म के साथ शत्रुता या मित्रता को लेकर जन्म नहीं लेता। वह तो अभ्यासवश- करते करते किसके साथ दोस्ती या किसीसे दुश्मनी हो जाती है। ३ रहीम कहते हैं कि संपत्ति के सभी मित्र (सगे) हैं। बहुत तरह के मित्र बनते हैं जब पास में धन होता है। लेकिन मित्रता की कसौटी (परख) तो विपत्ति होती है। जो विपत्ति में साथ देते हैं, वे ही सच्चे मित्र होते हैं। ४ रहीम यहाँ एक अनुभूति की बात कहते हैं-जरा चेत कर, जाग्रत होकर विचार करने से चिंता से चिंता ज्यादा कठिन लगती है। क्योंकि चिता निर्जीव (शव) को दहन करती है मगर चिंता तो जीवंत व्यक्ति को ही जला डालती है। इसलिए चिंता से सदा मुक्त रहना ही उचित है। ५ रहीम कहते हैं कि धनसंपत्ति आदि से कोई बड़ा नहीं होता, यह गलत है कि हम अमीर को बड़ा आदमी मान लेने हैं। बड़े लोग तो वे हैं जो गरीब लोगों का हित साधन करते हैं, उन्हें मदद करते हैं। कृष्ण इसलिए बड़े नहीं कि वे द्वारकाधीश थे, बल्कि उन्होंने बेचारे सुदामा जैसे गरीब को अपना मित्र बनाया था और उनकी खूब मदद की थी। बापुरो = बेचारा, कृष्ण-मिताई- जोग = कृष्ण की मित्रता के योग्य ६ वर्षा ऋतु में स्वाती नक्षत्र के समय जो वर्षा की बूँदें गिरती हैं, वे बड़े काम की चीजें हैं। वे अगर कदली (केला)पर बरसती

हैं तो वह कपूर बन जाती हैं। अगर सीप पर पड़ जाती हैं तो उसमें मोती भरती हैं और यदि भुजंग याने सर्प के मुख पर पड़ती हैं तो भयानक विष बनती हैं। उसीसे स्पष्ट होता है कि कोई वस्तु भली भी हो लेकिन अगर वह कुसंग में पड़ जाती है तो वह अत्यंत मंद वस्तु बन जाती है, खराब और हानिकारक बनती है। इसलिए मनुष्य को सावधान होकर संग करना चाहिए। सर्वदा सुसंग में ही रहना चाहिए, वरना जीवन में कष्ट भोगना पड़ता है। जैसी संगति होगी, वैसा फल मिलेगा। १७ रहीम कहते हैं मनुष्य इस संसार में अनेक कामना-वासनाओं को लेकर सर्वदा चिंतित रहता है, उनको पूरा करने में लगा रहता है। लेकिन जो व्यक्ति किसी की चाह नहीं रखता, कोई इच्छा पोषण नहीं करता वह बेपरवाह मन का, निश्चित स्वभाव का हो जाता है। जिनको कुछ नहीं चाहिए वे लोग बादशाहों (राजाओं) के भी शाह = बादशह जैसे हो जाते हैं। रहीम कहते हैं कि मनुष्य को अपनी आत्ममर्यादा का ध्यान रखना चाहिए, उसे छोड़ना नहीं चाहिए। क्योंकि पानी = इज्जत नहीं रही तो सबकुछ सूना या बेकार है। मोती में पानी (आभा) न हो तो उसे कोई नहीं पूछता। चूने में पानी (जल) न हो तो वह सूखकर नष्ट हो जाता है। यहाँ पानी“ शब्द के तीन अर्थ लिए गए हैं - मनुष्य के लिए स्वाभिमान, मोती के लिए आभा या तेज और चूने के लिए जल ॥८॥ हम मनुष्यों की एक आदत है कि जब कोई काम करते हैं तो उसके फल के लिए उतावले हो उठते हैं। वह नहीं मिलता या मिलने के बाद नहीं रहता तो हम चिंतित होते हैं। रहीम एक प्रत्यक्ष उदाहरण द्वारा बताते हैं कि पेड़ पर फल लगते हैं फिर समय आने पर झड़ भी जाते हैं, यह स्वाभाविक है, प्रकृति का नियम है। कोई चीज सर्वदा एक जैसी नहीं रहती, बदलती जाती है। उसके लिए पछतावा क्यों? ११० रहीम एक सच्ची अनुभूति की बात बताते हैं। हमारी आदत है कि हम अपने मनकी व्यथा या कष्ट को दूसरों के आगे बिना विचार के बताए देते हैं। लेकिन इससे किसी प्रकार का लाभ नहीं होता,

उल्टे नुकसान है। कोई दूसरा मन की व्यथा को बाँटकर हल्का नहीं करता, अपितु हँसी उड़ाता है या इठलाकर और खुश होता है। इसलिए सबसे अच्छा चुप रहो। अपने मन की व्यथा को अपने मन में ही छिपा कर रखो 1११

### प्रश्न और अभ्यास

#### सही विकल्प चुनिए:

- (i) रहीम कृष्णचन्द्र की ओर किसको लगाना चाहते हैं?
- (क) मनरूपी चकोर (ख) हृदय की डोर  
(ग) जंगल का मोर (घ) निसि-बासर
- (ii) प्रेम के धागे को तोड़ देने पर क्या होता है?
- (क) मित्रता दृढ़ होती है (ख) शत्रुता बढ़ती है  
(ग) फिर वह नहीं मिलता (घ) छिटक जाता है
- (iii) सच्चा मित्र कौन है?
- (क) जो संपत्ति का हिस्सा ले (ख) जो खूब मिले  
(ग) जो हँसमुख हो (घ) जो विपत्ति में मदद करे
- (iv) मन की व्यथा को छिपाकर क्यों रखना चाहिए?
- (क) कहने से दूसरे दुःखी होते हैं (ख) कहने से दूसरे हँसते हैं  
(ग) कहने से झगड़ा बढ़ता है (घ) कहने से दूसरे मित्र बनते हैं
२. इन प्रश्नों के उत्तर एक - एक वाक्य में दीजिए:
- (i) प्रत्येक धागे को छिटकाने से वह टूट जाता है, फिर मिलता नहीं, लेकिन अगर मिलता भी है तो क्या बुरा नतीजा होता है?
- (ii) चिंता चिंता से अधिक खतरनाक क्यों है?
- (iii) संपत्ति के समय क्या होता है?

३. दो-तीन वाक्यों में उत्तर दीजिए:

- (i) पानी के विभिन्न अर्थ स्पष्ट कीजिए।
- (ii) वैर-प्रीति जन्म से होती या बाद में? क्यों?
- (iii) सुदामा और कृष्ण की मित्रता से क्या सीख मिलती है?
- (iv) जिनको कुछ नहीं चाहिए वे क्या होते हैं?

४. विस्तार से उत्तर दीजिए:

- (i) रहीम के दोहे मानव जीवन के अनुभवों पर आधारित हैं, कैसे? बताइए।
- (ii) शाहों के शाह कौन हैं? और कैसे हैं?
- (iii) फल की गति को देख रहीम मनुष्य के जीवन के सत्य पर कैसे प्रकाश डालते हैं, समझाइए।
- (iv) कदली, सीप, भुजंग मुख के उदाहरण द्वारा कौन-सी गंभीर बात कही गई है? स्पष्ट कीजिए।

**आपका काम**

ऐसे प्रश्न बनाइए और अभ्यास करके उत्तर अपनी कॉपी में लिखिए।





## गोस्वामी तुलसीदास

तुलसीदास का जन्म संवत् १५८९ (१५३२ ईस्वी) को उत्तरप्रदेश के राजापुर में हुआ और देहांत संवत् १६८० को श्रावण शुक्ल सप्तमी के दिन गंगा के तीर पर काशी के अस्सी घाट में हुआ। पिता का नाम आत्माराम और माता का हुलसी था। जन्म हुआ तो भाद्र शुक्ल एकादशी को था, लेकिन नक्षत्र था अभुक्त मूल। इस नक्षत्र में जन्म लेना अशुभ माना जाता था, तो माता पिता ने उन्हें त्याग दिया पालन एक धाय के द्वारा हुआ। बचपन बड़े कष्ट में बीता। बाद में गुरु नरहरि तीर्थ ने इस बृद्धिमान बालक को अपने पास रखा, वेदशास्त्र पढ़ाया, भक्ति की दीक्षा दी। गुरु थे नरहरि दास जो शूकर क्षेत्र में रहते थे। तुलसीदास का विवाह हुआ दीनबंधु पाठक की कन्या सुंदरी रत्नावली से। एक बार रत्नावली अपने मैके गई। तुलसीदास भी उनके पीछे वहाँ चले गए। पत्नी को लज्जा हुई। उन्होंने कहा -

लाज न आई आपको दौरे आए हो साथ।

धिक् धिक् ऐसे प्रेम को कहा कहीं मैं नाथ॥

अस्थि चर्ममय देह मम तामें ऐसी प्रीति

होति जो श्रीराम महँ होति न भव भीति॥

तुलसीदास को बात लग गई। उनको वैराग्य ने अभिभूत कर लिया। वे संसार छोड़ राम की शरण में काशी चले आए। घर छोड़ दिया।

तुलसीदास रामभक्त कवि थे। उनके अनेक प्रसिद्ध ग्रंथ हैं, जिनमें 'रामचरितमानस', 'विनयपत्रिका', 'कवितावली', 'गीतावली', 'दोहावली', 'वरवै रामायण', 'जानकीमंगल', 'रामललानहछू', पार्वतीमंगल आदि काफी प्रसिद्ध हैं।

हिंदी में एक उक्ति प्रसिद्ध है- 'सूर सूर तुलसी ससि'। अर्थात् सूरदास सूर्य के समान हैं तो तुलसीदास चन्द्रमा के समान। इन दोनों कवियों की रचनाओं के कारण ही भक्तिकाल को स्वर्णकाल कहा गया। सूरदास का बाल-किशोर-लीलावर्णन कृष्ण के प्रेम और भक्ति के गंभीर भावात्मक रूप को प्रस्तुत करता है। 'सूरसागर' जैसी भावपूर्ण काव्यात्मक रचना दुर्लभ है। लेकिन तुलसी दास की रचना मानवजीवन के पूर्ण रूप को समेटती है। तत्कालीन हताश जनजीवन को मर्यादा पुरुषोत्तम राम का आदर्श जीवन चरित द्वारा तुलसी ने बड़ा भरोसा प्रदान किया।

गोस्वामी तुलसीदास ने तत्कालीन परिस्थितियों के अनुकूल साहित्य-सर्जन किया। विषय भक्ति है, किंतु, उद्देश्य लोकसंग्रह और लोकमंगल है। उनकी सभी रचनाओं में विविध भाव और विचार मिलते हैं, जो जीवन के लिए उपयोगी है। उन्होंने जनता के मन में विश्वास पैदा कर दिया कि यह संसार नश्वर और मिथ्या नहीं है। रामभक्ति के द्वारा उन्होंने मनुष्य के मन में प्रेम-भाव जगाया। राम- कथा के माध्यम से राजनीतिक, सामाजिक एवं पारिवारिक जीवन के आदर्शों को प्रस्तुत किया। तुलसी ने विश्रुद्धल, अनुशासनहीन समाज के आगे मर्यादा पुरुषोत्तम राम में शील, शक्ति, सौंदर्य संवलित अद्भुत रूप का गुणगान करके उसे नया संयम और संजीवनी से प्राणवंत किया। सभी मतवादों (शैव-वैष्णव, सगुण-निर्गुण, योग-भक्ति आदि) में समन्वय किया। विविध भावों के अनुसार विभिन्न शैलियों, छन्दों को अपनाकर काव्य का वैभव प्रस्तुत किया।

उन्होंने प्रबंध काव्य और गीतिकाव्य दोनों लिखे। उनका 'राम चरित मानस' आज भी अत्यंत लोकप्रिय ग्रंथ है और देश-विदेशों में बराबर पढा जाता है।

तुलसीदास ने अवधी और ब्रजभाषा दोनों में समान अधिकार के साथ लिखा है। 'रामचरितमानस' अवधी में लिखा गया है, तो 'कवितावली',

‘गीतावली’, ‘विनयपत्रिका’ जैसे अन्य प्रसिद्ध ग्रंथ सुंदर ब्रजभाषा में लिखे गए हैं। तुलसी की काव्य भाषा की एक अलग पहचान है। उसमें शब्दों के सहित संस्कृत के तत्सम ब्रजभाषा में तद्भव शब्दों का इतना सुंदर मेल है कि भाषा अत्यंत सरल, बोधगम्य परंतु भावगर्भक हो उठी है। अभिधा, लक्षणा, व्यंजना जैसी शब्द-शक्तियों का सुचारु उपयोग हुआ है। अलंकारों का इस्तेमाल अत्यंत सहज और स्वाभाविक तरीके से किया गया है। इसलिए तुलसी की भाषा अत्यंत जीवंत लगती है। ‘रामचरित मानस’ को तो अन्य भाषी लोग पढ़कर समझते हैं और आनंद उठाते हैं।

## राम-विभीषण मिलन

“सरनागत कहूँ जे तजहिं निज अनहित अनुमानि।  
ते नर पावँर पापमय तिन्हहि बिलोकत हानि” ॥१॥

कोटि बिप्र बध लागहिं जाहू। आएँ सरन तजउँ नहिं ताहू॥  
सनमुख होइ जीव मोहिं जबहीं। जन्म कोटि अघ नासहिं तबहीं॥  
पापवंत कर सहज सुभाऊ। भजन मोर तेहि भाव न काऊ॥  
जौँ पै दुष्ट हृदय सोइ होई। मोरें सनमुख आव कि सोई॥  
निर्मल मन जन सो मोहि पावा। मोहि कपट छल छिद्र न भावा॥  
भेद लेन पठवा दससीसा । तबहुँ न कछू भय हानि कपीसा॥  
जग महुँ सखा निसाचर जेते। लछिमनु हनइ निमिष महुँतेते॥  
जो सभीत आवा सरनाई। रखिहउँ ताहि प्रान की नाई॥  
“उभय भाँति तेहि आनहु हँसि कह कृपानिकेत॥  
जय कृपाल कहि कपि चले अंगद हनू समेत” ॥२॥

सादर तेहि आगें फरि बानर। चले जहाँ रघुपति करुनाकर॥  
दूरिहि ते देखे हों भ्राता। नयनानंद दान के दाता॥  
बहुरि राम छबिधाम बिलोकि। रहेउ ठटुकि एकटक पल रोकी॥  
भुज प्रलंब कंजारुन लोचन। स्यामल गात प्रनत भय मोचन॥  
सिंध कंध आयत उर सोहा। आनन अमित मदन मन मोहा॥  
नयन नीर पुलकित अति गाता। मन धरि धीर कही मृदु बाता॥  
नाथ दसानन कर मैं भ्राता। निसिचर बेस जनम सुरत्राता॥  
सहज पापप्रिय तामस देहा। जथा उलूकहि तम पर नेहा॥

“श्रावन सुजस, सुनि आयउँ प्रभु भंजन भव भीर।  
त्राहि त्राहि आरति हरन सरन सुखद रघुबीर” ॥३१

अस कहि करत दंडवत देखा। तुरत उठे प्रभु हरष बिसेषा ॥  
दीन बचन सुनि प्रभु मन भावा। भुज बिसाल गहि हृदयँ लगावा।  
अनुज सहित मिलि दिग बैठारी। बोले बचन भगत भयहारी ॥  
कहु लंकेस सहित परिवारा। कुसल कुठाहर बास तुम्हारा ॥  
खल मंडली बसहु दिनराती। सखा धरम निबहइ केहि भाँती ॥  
मैं जानउँ तुम्हारि सब रोती। अति नय निपुन न भाव अनीती  
बरु भल बास नरक कर तता। दुष्ट संग जनि देइ विधाता ॥  
अब पद देखि कुसल रघुराया। जौँ तुम्ह कीन्ह जानि जन दाय  
“तब लागि कुसल न जीव कहूँ समनेहुँ मन बिश्राम।  
जब लागि भजत न राम कहूँ सोक धाम तजि काम” ॥३४  
तब लागि हृदयँ बसत खल नाना। लोभ मोह मच्छर मदमाना ॥  
जब लागि उर न बसत रघुनाथा। घरें चाप सायक कटि भाथा ॥  
ममता तरुन तमि अँधियारी। राग द्वेष उलूक सुखकारी ॥  
तब लागि बसति जीव मन माहीं। जब लागि प्रभु प्रताप रबि नाहीं ॥  
अब मैं कुसल मिटे भय भारे। देखि राम पद कमल तुम्हारे ॥  
तुम्ह कृपाल जो पर अनुकूल। ताहि न ब्याप त्रिविधभवसूल ॥  
मैं निसिचर अति अधम सुभाऊ। सुभ आचरन कीन्ह नहीं काऊ ॥  
जासु रूप मुनि ध्यान न आवा। तेहिं प्रभु हरषि हृदयं मोहिलावा ॥  
“अहोभाग्य मम अमित अति राम कृपा सुख पुंज।  
देखेउँ नयन बिरंचि सिव सेव्य जुगल पदकंज” ॥५॥

सुनहु सखा निज कहउँ सुभाउ। जान भुसुंङि सं गिरिजाऊ ॥  
 जौं नर होई चराचर द्रोही। आवै सभय सरन तकि मोही ॥  
 तजि-मद मोह कपट छल ताना। करउँ सद्य तेहि साधु समाना ॥  
 जननी जनक बंधु सुत दारा। तनु धनु भवन सुहृदय परिवारा।  
 सबकै ममता ताज वटोरी। मम पद मनहि बाँध बरि डोरी ॥  
 समदरसी इच्छा कछु नाहीं। हरष सोक भय नहिं मन माहीं ॥  
 अस सज्जन मम उर बस कैसें। लोभी हृदयँ बसइ धनु जैसें ॥  
 तुम्ह सरिखे संत प्रिय मोरें। धरउँ देह नहिं आन निहोरें ॥  
 “सगुन उपासक परहित निरत नीति दृढ नेम।

ते नर प्रान समान मम जिन्ह कें द्विजपद प्रेम” ॥६॥

सुनु लंकेस सफल गुन तोरें। तातें तुम्ह अतिसय प्रिय मोरें ॥  
 राम बचन सुनि बानरजूथा। सफल कहहिं जय कृपा बरूथा ॥  
 सुनत बिभीषनु प्रभु कै बानी। नहिं अघात श्रावनामृत जानी ॥  
 पद अंबुज गहि बारहिं बारा। हृदय सम समात न प्रेमु, अपारा ॥  
 सुनहु देव सचराचर स्वामी। प्रनतपाल उर अंतरजामी ॥  
 उर कछु प्रथम वासना रही। प्रभु पद प्रीति सरित सो बही ॥  
 अब कृपाल निज भजति पावनी। देह, सदा सिव मन भावनी ॥  
 एवमस्तु कहि प्रभु रनधीरा। मागा तुरत सिंधु कर नीरा ॥  
 जदपि सखा तव इच्छा माहीं। मोर दरसु अमोघ जग माहीं ॥  
 अस कहि राम तिलक तेहि सारा। सुमन बृष्टि नम भई अपारा ॥  
 “ रावन क्रोध अनल निज स्वास समीर प्रचंड।

जरत बिभीषनु राखेउ दीन्हेउ राजु अखंड” ॥७॥

“जो संपत्ति सिव रावनहि दीन्हि दिऐँ दसमाथा  
सोइ संपदा विभीषन हि सकुचि दीन्हि रघुनाथा” ॥८॥

(‘रामचरित मानस’के सुंदरकांड से)

### शब्दार्थः

सरनागत = शरणागत; कहुँ = को; जे = जो; तजहिँ = छोड़ देता; अनहित = नुकसान; पावरँ = पामर, अधम; तिन्हहिँ = उनको; विलोकत = देखने पर: कोटि = बहुत; जाहू = जिसको; ताहू = उसको; सनमुख = सम्मुख; मोहिँ = मेरे; अघ = पाप; तबहीं = तब; सुभाऊ = स्वभाव; मोर = मेरा; भाव = अच्छा लगनाह काऊ = किसीको; सीई = सो; मोहि = मुझे; प्राणपाता है; भावा = अच्छा लगता है। पठवा = भेजा, दससीसा = रावण; दस सिर वाल; कपीसा = वानरराज; जग = संसार, महुँ = में; हनइ = मार सकता है; तेते-उतने; सरनाई = शरण में; नाई = तरह; तोहि = उसको; छबिधाम = सौंदर्य का भंडार; बिलोकि = देखकर; ठटुकि = चौंक कर; एकटक = एक ही नजर से; पल = पलक; प्रलंब = काफी लंबे; कंजारुन = कमल जैसे लाल; गात = गात्र, शरीर; प्रनत = जो आश्रय में आया है; मोचन = दूर करनेवाला; सिंघ = शेर; आयत = चौड़ा, उर = छाती; सोहा = अच्छा लगना; सुरत्राता = देवताओं के रक्षक, उलूक = उल्लू! तम = अंधकार, नेहा = स्नेह; आय उँ = आया हूँ; भव भीर = सांसारिक कष्ट; आरति हरन = कष्ट दूर करनेवाले; बिसेषा = विशेष, ज्यादा; दीन = नम्र; गहि = लेकर; ढिग = पास; बैठारी = बिठाया; भगत = भक्त; कुठाहर = कुस्थान; निबहइ = निर्वाह होता है; केहि भाँती = किस प्रकार, कैसे; बरू = वरं; बास = रहना; जनि = नहीं; जन = अपना; दाया = दया; लगि = तक; कुसल = कुशल, अच्छा; काम = कामना, सोकधाम = संसार जो दुःख स्थान है; खल = दृष्ट, भदृगर्व; मच्छर-ईषर्या; माना = अभिमान, अहंकार; चाप-सायक =

धनु और बाण; कटि = कमर; भाथा = तुणीर, तरकस; ममता = स्नेह; तरुन तमि आँधियाती = घोर रात का अंधकार; त्रिविध भव सूला = तीन प्रकार के सांसारिक कष्ट, त्रिताप; काऊ = कोई; जासु = जिसके; चराचर = स्थावर जंगम; द्रोही = विरोधी, सान = शरण, तकि = खोज कर, इच्छा करके; धनु = धन; ताग = सूत, डोरी; बटोरी = इकट्टा करके; मनहि = मन को, बर डोरी = जच्छी डोरी से; समदरसी = शत्रु मित्र आदि सबको समान मानने वाला; सरिखे = सदृश, निहोरें = अनुरोध से., आन्य = अन्य; निरत = लगा हुआ; नेम = नियम, व्रत; द्विजपद = ब्राह्मण के पद में, जूथा = युथ, दल, कृपा बरूथा = कृपा के भंडार; अघात = तृप्त होना; श्रवनामृत = श्रवण के लिए अमृत, श्रुतिमधुर; अमोघ = सफल, तिलक = राज्याभिषेक; सारा = समाप्त किया; राजु = राज्य, दसमाथ = दससिर, सकुचि = संकोच के साथ।

### भावार्थ :

विभीषण रावण द्वारा प्रताड़ित होकर उसे छोड़ श्रीराम की शरण में आए। यह खबर सेनापति सुग्रीव को मिली तो उन्होंने श्रीराम को यह बात बतायी। सुग्रीव का विचार था कि शत्रु का भाई आया है, पता नहीं क्या मतलब लेकर आया होगा। उसपर विश्वास नहीं किया जा सकता। उसकी भेंट रघुनाथजी से क्यों कराया जाय। सुग्रीवने यह बात राम को बतायी तो राम ने कहा- सुग्रीव, तुम ठीक कह रहे हो, लेकिन मेरा विचार है कि जो शरण में आए व्यक्ति को शरण नहीं देता, उसे छोड़ देता है, सोचता है कि इससे मुझे नुकसान होगा, तो वैसा आदमी पामर है, पापमय है; उसे देखना भी अमंगल कारक है इसलिए अब विभीषण शरण में आया है तो उसे ले आओ। क्यों कि जो आदमी अनेक बिप्र या ब्राह्मणों की हत्या की हो, जिसपर ब्रह्म हत्या का पाप लगा हो, अगर मेरी शरण में आता है तो मैं उसे त्याग नहीं सकता। जब कोई जीव मेरी ओर सम्मुख होता है, उसके अनेक जन्मों के पाप कट जाते हैं। जो पापवन्त है, वह मेरा भजन करता ही नहीं। इसलिए दुष्ट हृदयवाला कभी भी मुझसे मिलने नहीं आएगा,



जिसका मन निर्मल है, वही मुझे पा सकता है। मुझे कपट, छलना या दोष अच्छा नहीं लगता। फिर एक बात और है। अगर शठ रावण ने उसे भेद लेनेको भेजा होगा, तो भी हमें न तो कोई डर है और न हानि ही। आए देख ले। हमें छिपानेको कुछ नहीं है। हे सखा, यह जान लो, कि संसार में जितने निशाचर या असुर हैं उनको एक ही क्षण में लक्ष्मण मार सकता है। इसलिए अगर विभीषण दशानन से डर कर मेरी शरण में आया है, तो मैं प्राण की तरह उसकी रखवाली करूँगा। वह भेद लेने आया हो, या शरण में आया हो, दोनों कारण मेरेलिए हानिकारक नहीं, तुम उसे मेरे सामने ले आओ। हँसकर दयामय श्रीराम ने ऐसा कहा तो वानरदल जय कृपाल कहकर अंगद हनुमान आदि को साथ लेकर उसे लाने के लिए गए। दोबारा विभीषण को ही वानर बड़े आदर के साथ आगे करके ले आए। रघुपति के पास लाए। विभीषण ने दूर से ही राम और लक्ष्मण दोनों भाइयों को देखा। वे नयनों को आनन्द प्रदान कर रहे थे। इतने सुंदर थे नयनों को आनंद देते थे। फिर उन्होंने श्रीराम के रूप-सौंदर्य को देखा, तब अत्यंत विस्मित होगए और उनको अपलक नेत्रों से देखते रहे। राम के भुज काफी लंबे (प्रलंब) थे, उनके लोचन (आँखें) कमलकी भाँति लाल-लाल थे। शरीर का साँवला रंग प्रणत व्यक्ति के भय को दूर (मोचन) करता था। विभीषण का भय भाग गया। राम के कंधे सिंह या शेर के कंधे की तरह प्रशस्त थे, उनकी छाती काफी चौड़ी (आयत) थी, अत्यन्त काफी सुंदर लग रही थी। उनके मुख का सौंदर्य सैकड़ों मदन (कामदेव जो संसार का सबसे सुंदर पुरुष माना जाता है) के सौंदर्य के समान अत्यंत मनमोहक था। विभीषण ने ऐसे पुरुष के रूप को देखा तो उनका शरीर रोमांचित हो उठा और आँखों से प्रेमाश्रु बहने लगे। फिर उन्होंने (विभीषण ने) अपने मन को स्थिर किया, धैर्य धारण किया और अति कोमल (मृदु) वाणी (बात) से कहा-

हे प्रभो (नाथ)! मैं। (आपके शत्रु) दशानन या रावण का सगा भाई हूँ। (शत्रु का भाई शत्रु ही होता है ना)! मेरा जन्म असुर कुल (निसिचर वंश) में हुआ है। आप तो सुरों (देवताओं) के त्राता या रक्षाकर्ता हैं (इसलिए मैं दोगुना शत्रु हूँ)। फिर मेरा

शरीर (देह) पापप्रिय है, अर्थात् सर्वदा पापकर्म करता रहता है। क्योंकि असुर स्वभाव से तामसिक होते हैं, जैसे उल्लू को अंधकार बेहद पसंद है, वैसे असुरों को पाप। लेकिन मैंने अपने श्रवणों (कानों) से आपका सुयश सुना है कि आप बड़े दयालु हैं, किसी पर क्रोध या वैर नहीं रखते, अपने स्वभाव के कारण सब पर दया करते हैं। आप भव भीर या सांसारिक क्लेशों को नाश (भंजन) करते हैं। आपकी शरण अत्यंत सुखदायी है। इसलिए, आप मेरी रक्षा कीजिए, मुझे बचाइए (त्राहि त्राहि) क्यों कि आप किसी भी आर्त (दुःखी) व्यक्ति की आर्ति (दुःख) को हरण करने वाले हैं। आप रघुवंश के परमवीर हैं, अजेय हैं, मुझे शरण दीजिए। (दोहा- ३)

यह कहकर विभीषण ने दंडवत् प्रणाम किया। प्रभुने उनको प्रणाम करते देख तुरंत उठकर विशेष हर्षित हो विभीषण के पास गए। विभीषण के विनय-वचन उनको बहुत अच्छा लगा। राम ने अपने विशाल भुज या बाहुओं में विभीषण को भरलिया और हृदय (छाती से) लगा लिया आलिंगन में भर लिया। उनको ले आए। छोटे भाई लक्ष्मण के साथ मिलकर पास पास बैठ गए। राम ने भक्त (विभीषण) के भय को हरण करनेवाले वचन कहे-

हे लंकेश (लंका के राजा विभीषण) अपना कुशल समाचार कहो। तुम सपरिवार कुशल में हो न। क्योंकि तुम्हारा निवास कुस्थान (कुठाहर) में है। खल (दुष्ट) मंडली (दल) के भीतर दिनरात बसते हो। सखा, कैसे निर्वाह करते हो? कैसे जिन्दगी बीताते हो? (तुमने तो अपना विशेष परिचय दिया) लेकिन मैं जानता हूँ कि तुम असुर-कुल में जन्म लेने पर भी तुम्हारी सब रीती, जीवन-शैली भिन्न है। तुम अत्यंत न्यायपरायण हो, कभी-कभी अनीति को पसंद नहीं करते हो (अर्थात्, असुर पाप करते हैं, तुम नहीं करते)। हे मित्र, नरक में वास करना अपेक्षाकृत अच्छा है, दुष्टों के संग विधाता न रखे।

विभीषण ने कहा- हे रघुराज (रघुराया), अब आपके पद के दर्शन होने के बाद मेरा सब कुशल हो गया है। क्योंकि आपने अपना जन (आदमी) जानकर मुझ पर दया

की। हे प्रभो, जीव का तब तक संसार में रहते हुए सपने में भी सुख नहीं होता, उसका मन कभी स्थिर नहीं हो सकता, विश्राम नहीं पा सकता, जब तक वह इस शोकधाम (दुःख का घर) इस संसार की अनेक कामनाओं को छोड़कर सुखधाम राम (आप) का भजन नहीं करता। दोहा। ४।

विभीषण कहते हैं- हे प्रभो, लोभ, मोह, मत्सर (ईर्ष्या जलन) मद और मान आदि दुष्ट तब तक मनुष्य के हृदय में बसते हैं जब तक कि धनुष बाण और कमर में तरकस धारण किए हुए श्रीराम वहाँ नहीं बसते। ममता से भरी अँधेरी रात (तभी) है, जो राम-द्वेष (आसक्ति और ईर्ष्या) जैसे उल्लुओं को सुख देती है। ऐसी तभी तक जीव के मन में बसती है, जब तक हे प्रभु, आप का प्रताप रूपी सूर्य उदित नहीं होता प्रभो, आपके चरण कमल के दर्शन करके अब कुशल से हूँ। मेरे बड़े (भारी) भय मिट गए हैं। हे कृपालु आप जिसपर अनुकूल होते हैं उस मनुष्य को तीन प्रकार के सांसारिक कष्ट (भव सूल - आध्यात्मिक, आधिदैविक और आधिभौतिक ताप) नहीं व्यापते। मैं तो अत्यंत नीच स्वभाव का राक्षस हूँ। मैं ने कभी शुभ आचरण नहीं किया। आपका रूप तो मुनि लोग भी ध्यान नहीं कर पाते, (उनके ध्यान में नहीं आता), आप प्रभु ने स्वयं खुश (हर्षित) होकर मुझे हृदय से लगा लिया। अतः मुझसे बड़ा भाग्यशाली और कौन होगा ? मेरा असीम और बड़ा सौभाग्य (अहोभाग्य) है कि हे कृपा और सुख के पुंज श्रीराम ! मैंने आपके उन दो चरण कमलों को देखा, जिनकी सदा ब्रह्मा और शिव जी सेवा करते हैं। दोहा ५।

विभीषण के इन मीठे वचनों को सुनकर श्रीराम ने कहा- हे सखा ! सुनो, मैं तुम्हें अपना स्वभाव कहता हूँ जिसे काकभुशुण्डि, शिवजी और पार्वतीजी भी जानते हैं (उ = भी)। अगर कोई मनुष्य संपूर्ण जड (अचर) और चेतन (चर) जगत का द्रोही हो और वह भी यदि भयभीत होकर मेरी शरण खोजकर आया हो- और अगर वह मद, मोह और विविध छल कपट त्याग दे, तो मैं उसे बहुत शीघ्र साधु के समान कर देता हूँ। जो व्यक्ति माता-पिता, भाई, पुत्र, स्त्री, शरीर, धन, घर, मित्र और परिवार-इन सब के

॥ 18 ॥

ममत्व रूपी तागों को (सूतों को) बटोर कर और उन सबको एक डोरी बटकर उसके द्वारा अपने मन को मेरे चरणों में बाँध देता है (अर्थात् समस्त सांसारिक संबंधों को एकमात्र केन्द्र मुझे बना लेता है। जो समदर्शी होता है, जिसके मन में कोई इच्छा नहीं है और जिसके मन में हर्ष, शोक और भय नहीं है- ऐसा सज्जन मेरे हृदय में कैसे बसता है? जैसे लोभी के हृदय में धन बसा करता है। राम कहते हैं - हे मित्र, तुम्हारे सरीखे (सदृश) संत मुझे प्रिय हैं। मैं और किसीके निहारे से (अनुरोध से या किसी के प्रति अनुग्रह करने के लिए) देह धारण नहीं करता। राम फिर कहते हैं जो मनुष्य सगुण याने साकार भगवान के उपासक हैं, जो दूसरों के हित में लगे रहते हैं, और जो ब्राह्मणों के चरणों में प्रेम रखते हैं, वे तो मेरे प्राणों के समान हैं। (दोहा- ६) राम बड़ी खुशी से कहते हैं कि हे लंकेश विभीषण, तुम्हारे अन्दर उपयुक्त सभी गुण विद्यमान हैं। इसीसे तुम मुझे अत्यंत प्रिय हो।

श्रीरामजी के वचन सुनकर सभी वानर कहने लगे कृपा के भंडार (वरूथा) श्रीराम जी की जय हो।

प्रभु की वाणी सुनकर और उसे कानों के लिए अमृत जानकर विभीषण अघाते (संतुष्ट) नहीं हो पाते। वे बारबार श्रीराम के चरणों को पकड़ते हैं। उनका अपार प्रेम उनके हृदय में नहीं समाता।

तब विभीषण ने कहा- हे देव! हे चराचर जगत् के स्वामी! हे शरणागत के रक्षक (प्रणतपाल)! हे सबके हृदय को जाननेवाले अन्तर्यामी! मेरे हृदय में पहले कुछ वासना (इच्छा) थी। लेकिन अब तो वह प्रभु के चरणों की प्रीति रूपक नदी में बह गई। अब तो हे कृपालु! मुझे शिवजी के मन को सर्वदा प्रिय लगनेवाली अपनी पवित्र भक्ति दीजिए। प्रभु ने कहा-एवमस्तु (ऐसा ही हो)। फिर रणधीर (युद्ध में स्थिर रहनेवाले) प्रभु राम ने तुरंत समुद्र का जल माँगा और कहा- हे सखा, यद्यपि तुम्हारी इच्छा नहीं है, पर जगत् में मेरा दर्शन अमोघ है (निष्फल नहीं होता)। ऐसा कहकर राम ने विभीषण

का राजतिलक कर दिया। आकाश से फूलों की बड़ी वर्षा हुई।

रावण की क्रोध रूपी अग्नि जो विभीषण श्वास (वचन) रूपी पवन से प्रचण्ड हो रही थी और उसमें वे जल रहे थे, श्रीराम ने उनको बचा लिया और अखंड राज्य दिया। दोहा।

शिवजी ने जो संपत्ति रावण को दी थी, जब उसने अपने दस सिरों की बलि देने पर दी थी, उसी संपत्ति को श्री रघुनाथ ने विभीषण को बड़े संकोच से दिया। दोहा। ८।

**इस पाठ के बारे में:**

तुलसीदास वाल्मीकि रामायण का अनुसरण करते हुए भी अपनी मौलिकता नहीं छोड़ते। विभीषण रावण को समझाते हैं, वह समझता नहीं, उल्टे विभीषण को लात मारकर गाली देकर तिरस्कार करता है। विभीषण उसे यह बताकर चले आते हैं कि लंकेश्वर! तेरी सभा पाप से वशीभूत है। मैं अब राम की शरण में जा रहा हूँ, मुझे दोष मत देना।

विभीषण आता है तो सुग्रीव के सैनिक उसे उनके सामने पेश करते हैं। सुग्रीव राम से पूछते हैं कि रावण का भाई आपसे मिलना चाहता है। राम कहते हैं तो इसमें पूछने की क्या बात। उसे मेरे सामने आने दो। लेकिन सुग्रीव राजनीति की बात करते हैं। राम कहते हैं-तुम ठीक कहते हो। लेकिन शरणागत को सुरक्षा देना ही मानवता है। मैं उस मानव-धर्म का पालन करता हूँ, क्योंकि शास्त्रों के अनुसार शरणागत (चाहे वह जो कोई हो) को आश्रय न देना पाप है। मैं पाप नहीं कर सकता। मेरे व्यवहार को आदर्श मानकर संसार के लोग उसका अनुसरण और अनुकरण करेंगे। इसलिए मैं विभीषण से मिलूँगा। दूसरी बात है कोई पाप-कार्य, दोष-कार्य करता है तो उसे छिपाता है। अपना भेद दूसरे को नहीं बताता। हमारा कोई भेद (रहस्य, गुप्त षडयंत्र आदि) है नहीं। इसलिए मेरा विभीषण से मिलने में कोई अड़चन नहीं है। उसे लेते आओ।

विभीषण राम के सामने पेश होते हैं। उनके मन में स्वाभाविक संशय उपजता है कि एक तो मैं रावण का भाई हूँ, असुर हूँ और श्रीराम सुर या देवताओं के रक्षक और हितैषी हैं-मुझे क्यों शरण देने लगे। वह इन बातों को नम्रतापूर्वक राम से कहता है। फिर उनके समदर्शी और मानवीय स्वभाव की चर्चा करता है।

तुलसीदास ने यहाँ राम के अवतार (इस पृथ्वी पर प्रकट होने का) को एक नया अर्थ देते हैं। वे विभीषण से कहते हैं-तुमने अपना परिचय दिया। लेकिन मैं तुमको पहले ही जानता हूँ। तुम न्यायी हो, पुण्यश्लोक हो, संत स्वभाव के हो। मैं तुम जैसे लोगों से मित्रता करने, तुमसे मिलने-जुलने, लीला करने आता हूँ। अर्थात् भगवान संसार में दुष्ट दलन के लिए नहीं, शिष्ट, संतजनों से मित्रता करने आते हैं। इसमें संत लोगों का महत्व बहुत बढ़ जाता है। दुष्टों का विनाश तो स्वाभाविक प्रक्रिया से होता रहता है।

### प्रश्न और अभ्यास

#### १. निम्नलिखित में से सही विकल्प चुनिए:

(i) अपना अहित होगा- ऐसा अनुमान कर शरणागत को त्याग करनेवाला क्या है ?

(क) पण्डित (ख) पाँवर (ग) प्राज्ञ (घ) प्रमत्त

(ii) अगर विभीषण सभित शरण में आए हों तो श्रीराम उसे कैसे रखेंगे ?

(क) सखा जैसे (ख) अतिथि जैसे

(ग) प्राण जैसे (घ) नेत्र जैसे

(iii) विभीषण ने प्रभु का सुयश सुना है कि वे-

(क) भवभीर भंजन (ख) पाप हरण

(ग) शरणरक्षण (घ) मनारंजन

(iv) विभीषण के प्रति राम के वचन कैसे थे ?

(क) अत्यंत मधुर (ख) भगत भयहारी

(ग) मनोहारी (ध) सुखकारी

(v) विभीषण ने राम की आश्वासन- वाणी सुनकर उनके पाँव पकड़े और उनके हृदय से अपार \_\_\_\_\_ उभड़ा।

(क) क्रोध (ख) घृणा (ग) प्रेम (घ) कुछ नहीं

२. निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर एक-एक वाक्य में दीजिए:

(i) राम को क्या अच्छा नहीं लगता ?

(ii) विभीषण भेद लेने आए हों तो भी क्या नहीं है ?

(ii) सुग्रीव विभीषण को कैसे राम के सामने लाए ?

(iv) असुर का पाप से प्रेम होता है, कैसे ?

(v) विभीषण ने कहा कि प्रभो, पहले कुछ वासनाएँ थीं, लेकिन अब ?

३. निम्न प्रश्नों के उत्तर दो-दो वाक्यों में दीजिए

(i) दृष्ट हृदय श्रीराम को समझाने नहीं आएगा, क्यों ?

(ii) राम को देख विभीषण की क्या दशा हुई ?

(iii) विभीषण ने राम से क्या कहा ?

(iv) राम को कौन प्रान समान प्रिय होते हैं ?

(v) क्रोधानल में जलते विभीषण को राम ने क्या दिया ?

४. निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर तीन-चार वाक्यों में दीजिए:

(i) जीव को विश्राम कब तक नहीं मिलता ?

(ii) विभीषण ने अपना कुशल किसमें माना ?

(iii) राम का स्वभाव कैसा है जिसे शंभु भुसुण्डि भी नहीं जानते हैं ?

(iv) सगुण उपासक का मतलब क्या है ?

(v) राम ने विभीषण को लंका का राज्य किस-प्रकार दिया ?

५. निम्नलिखित प्रश्नों का दीर्घ उत्तर दीजिए :

(i) श्रीराम ने क्या-क्या समझाकर सुग्रीव को विभीषण को उनके सामने लाने को कहा ?

(ii) विभीषण ने अपना परिचय किन शब्दों में दिया और उसका क्या तात्पर्य था ?

(iii) राम ने विभीषण को कैसे आश्चस्त किया ?

(iv) राम के स्वभाव की क्या-क्या विशेषताएँ हैं ?

(v) विभीषण ने आश्चस्त होकर श्रीराम से क्या माँगा ?





# मैथिली शरण गुप्त

(१८८६-१९६४)

मैथिलीशरण गुप्त का जन्म झाँसी के पास चिरगाँव में १८८६ ई. को हुआ। देहांत १९६४को।

वे द्विवेदी युग के लोकप्रिय कवि हुए। उन्हें महावीरप्रसाद द्विवेदी का संरक्षण और मार्गदर्शन मिला। द्विवेदीजी खड़ीबोली हिंदी को कविता की भाषा बनाना चाहते थे। उनके इस उद्देश्य को पूर्ण करने में मैथिलीशरण काम करने लगे। मैथिलीशरण ने अनेक रचनाएँ कीं जिन में से कुछ प्रमुख हैं-

रंगमें भंग (१९०३२, जयद्रथ वध (१९१०), भारत भारती (१९११), मौर्य विजय (१९१५), पंचवटी (१९२५), अनघ (१९२५), स्वदेश-संगीत (१९२५), हिंदू (१९२७), त्रिपथगा (१९२५), साकेत (१९३२), यशोधरा (१९३३), प्रदक्षिणा (१९५१), पृथ्वी पुत्र (१९५१), जय भारत (१९५२), अर्जन विसर्जन, विश्ववेदना, हिडिंबा, अंजलि, विष्णुप्रिया। इनमें अधिकांश खंडकाव्य हैं। 'साकेत' महाकाव्य है।

मैथिलीशरण युगचेतना के साथ चले। पराधीन भारत में उन्होंने लिखना शुरु किया। देश प्रेम उनकी रचनाओं का मुख्य स्वर है। भारत का अतीत गौरव, वर्तमान की दुर्दशा, समाज सुधार, राष्ट्रीय और सांस्कृतिक जागरूकता, वीरता का चित्रण उनके काव्य की विशेषताएँ हैं। उनकी अधिकांश रचनाएँ ऐतिहासिक और पौराणिक हैं। वे भारतीय संस्कृति के उपासक थे तथा वेष्णव धर्म के संरक्षक। उनकी रचनाओं छायावादी सौंदर्य-चेतना और काव्य-शैली भी मिलती है। द्विवेदी युग और छायावाद युग के वे सेतु जैसे हैं।

मैथिलीशरण गुप्तने काव्य भाषा के रूप में खड़ी बोली को प्रतिष्ठित किया। सरल, अर्थगर्भित मार्जित भाषा का प्रयोग उनकी विशेषता है। रचनाओं में साधारण स्थल हैं तो काव्यात्मकता से भरी मधुर पक्तियाँ भी हैं।

राष्ट्र की आत्मा को वाणी देने के कारण उनको राष्ट्रकवि की मान्यता मिली। यहाँ एक उपदेशात्मक कविता दी जा रही है। जीवन में बाधाएँ आती रहती हैं। परंतु इससे मनुष्य को निराश नहीं होना चाहिए। बार बार विघ्नों का सामना करने से ही सफलता मिलती है।

## नर हो, न निराश करो मन को

कुछ काम करो, कुछ काम करो।  
जग में रहकर कुछ नाम करो॥  
यह जन्म हुआ किस अर्थ अहो।  
समझो, जिसमें यह व्यर्थ न हो॥  
कुछ तो उपयुक्त करो मन को।  
नर हो, न निराश करो मन को॥

सँभलो कि सुयोग न जाए चला।  
कब व्यर्थ हुआ सदुपाय भला ?  
समझो जग को न निरा सपना।  
पथ आप प्रशस्त करो अपना॥  
अखिलेश्वर हैं अवलंबन को।  
नर हो, न निराश करो मन को॥

निज गौरव का मित ज्ञान रहे।  
हम भी कुछ हैं, यह ध्यान रहे॥  
सब जाए अभी, पर मान रहे।  
मरने पर गुंजित गान रहे॥

कुछ हो, न तजो निज साधन को।  
नर हो, न निराश करो मन को।।

प्रभु ने तुमको कर दान किए।  
सब वांछित वस्तु-विधान किए।।  
तुम प्राप्त करो उनको न अहो।  
फिर है किसका यह दोष कहो।।  
समझो न अलभ्य किसी धन को।  
नर हो, न निराश करो मन को।।

### शब्दार्थ/ भावार्थ:

जग-जगत्, अर्थ-कारण

कवि देशवासियों से आग्रह करता है कि कुछ ऐसे काम करो कि जिससे संसार में तुम्हारा यश हो, नाम हो। मानव का जीवन अनमोल है, दुर्लभ है। इसे बेकार नष्ट न करो। समझो। मन को उपयुक्त करो। निराश मत होओ।

सुयोग हाथ आया है तो चला भी जाएगा। इसलिए वक्त रहते काम में लग जाओ। सत्कर्म कभी बेकार नहीं जाता। यह संसार सपना नहीं है, मिथ्या नहीं है। अपना रास्ता खुद बनाओ। ईश्वर अवलंबन हैं। वह सर्वदा विराजमान है। वह दया करेगा ही। इसलिए अपने मन को निराश न करो।

मनुष्य अपने स्वाभिमान और इज्जत का खयाल सर्वदा रखे। अपने को अत्यंत लघु नहीं समझना चाहिए। आत्मविश्वास रखना चाहिए। सब जाए पर अपना गौरव संभाले रखो। मरने पर भी नाम सुना जाए। अपनी साधना को कभी न छोड़ो। निराश मत होओ।

ईश्वर ने तुम को कर्म करने का साधन-हाथ (कर) दिए हैं। सब तरह की सुविधाएँ दी हैं। तुम्हारी मनोकामनाएँ पूर्ण होंगी। अगर तुम उद्यम न

करोगे, वे कैसे मिलेंगे? इसलिए उनको पाने की चेष्टा करो। तुम न करोगे तो दोष किसका है? कोई वस्तु, उद्यम करने पर अलभ्य नहीं रहेगी। इसलिए निराश न हो।

### इस कविता के बारे में:

मैथिलीशरण गुप्त नवजागरण युग के प्रतिनिधि कवि हैं। उस समय देश की जनता में चेतना जगाने का प्रयास चल रहा था। निराश सुप्त, आलसी जन-जन को कर्मठ बनाना था; उनमें देशप्रेम जगाना था; स्वतंत्रता संग्राम के लिए तैयार करना था।

संस्कृत में एक श्लोक है- “उद्यमेन हि सिध्यन्ति कार्याणि न मनोरथैः” “नहि सुप्तस्य सिंहस्य प्रविशन्ति मुखे मृगाः”। भारतवासियों को अपना भाग्य बनाना होगा। इसके लिए उन्हें कठिन श्रम करना पड़ेगा- यह संदेश इस कविता के माध्यम से दिया गया है। “उत्तिष्ठत जाग्रत प्राप्य वरान् निबोधत।”

### प्रश्न और अभ्यास

#### १. सही विकल्प चुनिए

- (i) जग में रहकर कुछ \_\_\_\_\_ करो।  
(क) काम (ख) नाम (ग) धाम (घ) जाम
- (ii) निराश न होकर मन को क्या करना होगा?  
(क) उपयुक्त (ख) संयुक्त (ग) वियुक्त (घ) नियुक्त
- (iii) जगत् को क्या नहीं समझना चाहिए?  
(क) व्यर्थ सपना (ख) कर्म करना  
(ग) निरा सपना (घ) घर अपना

(iv) प्रभु ने तुम को क्या दान दिया है ?

(क) प्रखर                      (ख) द्वार                      (ग) धन                      (घ) कर

२. इन प्रश्नों के उत्तर एक-एक वाक्य में दीजिए।

(i) यह जन्म किस अर्थ हुआ है ?

(ii) सुयोग चला न जाए इसलिए क्या करना होगा ?

(iii) अपने पथ को कौन प्रशस्त करेगा ?

(iv) अवलंबन हमारा कौन है ?

३. इन प्रश्नों का उत्तर तीन-चार वाक्यों में दीजिए:

(i) जीवन में निराश न होकर क्या करना चाहिए ?

(ii) सब जाए लेकिन क्या सुरक्षित रहना चाहिए और क्यों ?

(iii) किसी धन को अलभ्य क्यों नहीं समझना चाहिए ?

४. निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर विस्तार से दीजिए:

(i) जगत में नाम करने के लिए क्या-क्या करना होगा ?

(ii) नर को क्यों निराश नहीं होना चाहिए ?

(iii) प्रभुने तुमको क्या -क्या दिया है, और तुम्हें क्या करना आवश्यक है ?



# सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला'

(सन १८९७-१९६२)

सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला' का जन्म माघ शुक्ल एकादशी को बंगाल के मेदिनपुर जिले के महिषादल रियासत में १८९७ को हुआ। उनके पिता पं. रामसहाय उन्नाव जिले के गढकोला के थे, महिषादल राज्य में नौकरी करते थे। बचपन में ही निराला की माता चल बसीं। हाईस्कूल में नौवीं कक्षा में थे तब उनका विवाह हुआ। १९१८ में पत्नी भी चल बसीं। एक पुत्र और पुत्री सरोज थे। १९२० में निराला कलकत्ता आए। 'मतवाला' पत्रिका में उनकी कविताएँ छपीं और शीघ्र प्रसिद्ध हो गए। जीवन घोर आर्थिक संकट में गुजरा।

कवि का व्यक्तिगत तथा साहित्यिक जीवन अत्यंत संघर्षमय रहा। उनको कष्ट भी मिला और लड़ने की प्रेरणा भी। निराला के साहित्य में संघर्ष की प्रवृत्ति दिखाई देती है। इसीलिए उनको 'पौरुष के कवि', 'महाप्राण' आदि भी कहा गया है। उनकी प्रख्यात रचनाओं में- अनामिका भाग १ (१९२२), परिमल (१९३०), गीतिका (१८३६), अनामिका भाग-२ (१९३८), तुलसीदास (खंडकाव्य-१९३८), कुकुरमुता (१९४२), अपरा, आराधना (१९५३), अर्चना (१९५०), रामचरित मानस का खड़ीबोली में रूपांतर आदि। निराला ने उपन्यास, कहानी, निबंध, रेखाचित्र, आलोचना भी लिखे हैं, अनुवाद किया है। जीवनियाँ लिखी हैं।

विश्वम्भर मानव के शब्दों में- "छयावादी कवियों में निराला जीवन के सबसे अधिक निकट थे। उससे उनका घनिष्ठ परिचय था। जीवन अपनी पूर्ण विविधता के साथ ही नहीं, पूरी गहराई के साथ उनके काव्य में चित्रित हुआ। ओज और करुणा, विनय और विद्रोह, रोमांस और भक्ति, क्लासिक गंभीरता और हास्य-व्यंग्य सभी को,

समान शक्ति से सँभालते दिखाई देते हैं। वे एक साथ छायावादी, प्रगतिवादी, प्रयोगवादी, राष्ट्रवादी, मानवतावादी और ब्रह्मवादी हैं... वे मुक्त छंद के प्रवर्तक हैं, पर छंदबद्ध काव्य पर उनका असाधारण अधिकार है।” भाव, विचार, कल्पना और कला के क्षेत्र में विरोधी तत्वों के संपूर्ण सामंजस्य का दूसरा नाम उनका काव्य है। निराला अपने युग की सभी प्रवृत्तियों पर पूर्ण अधिकार से लिखते हैं। वे स्वयं एक युग हैं। परोक्ष रूप से कहना चाहते हैं कि भारतवासी जो दलित हैं, विदेशी शासन से उन्हें स्वतंत्रता के लिए लड़ने को नई प्रेरणा मिले मेघ के इन काव्यों से। फिर जो छोटे हैं, जो शोषित हैं वे क्रांति के लिए तैयार हो जायें। अतएव इस कविता में राष्ट्रीय भावना के साथ - साथ प्रगतिवादी चेतना को जगाने का उद्देश्य निहित है।

कवि कहता है- हे विप्लव करने वाला मेघ, तू बार-बार आ, गर्जन कर, मूसलाधार वर्षा कर। ऐसी जोरदार वारिश हो कि संसार डर जाए। (ऐसा आन्दोलन हो कि सारा संसार चकित हो जाए।) तेरे वज्र भयंकर को सुनकर समझौता हो जाए। (भारत का स्वतंत्रता आन्दोलन ऐसा जोरदार हो।) हे मेघ! तुझसे ऐसी विजली गिरे कि जो गर्व से तनकर सैकड़ों वीर (जैसे पहाड़, बड़े वृक्ष और धनी, अमीर, शोषक, अत्याचारी आदि) डर जाएँ। लेकिन छोटे पौधे वे सब हिलडुलकर तुम्हें बुलायेंगे, स्वागत करेंगे। क्योंकि विप्लव के गर्जन करते हुए छोटे लोग, दलित-शोषित क्रांति करते हुए शोभा पाते हैं। जो अट्टालिकाएँ देखते हो, वे बड़े या महान् (धनी-अमीर इसीमें बसते हैं) नहीं हैं। ये तो आतंक (डर) फैलाने वाले भवन हैं। इनका क्या ? पंक या कीचड़ (दलदल) पर ही विप्लव-जल पवित्र होता है, छोटे-छोटे कमल फूलों से ही जल की शोभा बढ़ती है (पानी मानों उछल उठता है)। जैसे- रोगशोक से पीड़ित होकर भी शिशु का सुकुमार मुख खिल उठता है। हँसता-सा लगता है। लेकिन जो धनी लोग हैं - वे तो अपनी धन-संपत्ति को रूंधे घर में रखते हैं, फिर भी डरते हैं कहीं यह नष्ट न हो, जल प्लावन से बाढ़ से नष्ट न हो जाए। वे घर के भीतर सुख से (स्त्री के संग होते हैं) आतंकित या भयभीत रहते हैं। कातिल से बड़े लोग डरते हैं। और गाँव के कृषक जो शोषित होकर केवल हड्डी भर शरीर धरते हैं, जीर्ण-शीर्ण हैं। वे डर

से अपने आँख-मुँह छिपाए हुए हैं- हे विप्लव वीर, देख कि तेरे आने से कितना सुंदर दृश्य है। कितने परिवर्तन आनेवाले हैं! तू आ, जल्दी है। दुःखियों को सुख दे।

## वर दे वीणा वादिनि

वर दे! वीणा वादिनि वर दे!  
प्रिय स्वतंत्र-रव अमृत-मन्त्र नव भारत में भर दे।  
काट अन्ध-उर के बन्धन-स्तर  
बहा जननि, ज्योतिर्मय निर्झर,  
कलुष-भेद-तम उर प्रकाश भर जगमग जग कर दे।  
नव गति, नव लय, ताल-छन्द नव,  
नवल कंठ, नव जलद-मन्द्र रव,  
नव नभ के नव विहग-वृन्द को नव पर, नव स्वर दे!



## बादल राग

तिरती है समीर-सागर पर  
अस्थिर सुख पर दुख की छाया-  
जग के दग्ध हृदय पर  
निर्दय विप्लव की प्लावित माया  
यह तेरी रण-तरी,  
भरी आकांक्षाओं से,  
धन, भेरी-गर्जन से सजग, सुप्त अंकुर  
उरमें पृथ्वी के, आशाओं से  
नवजीवन की, ऊँचा कर सिर,



ताक रहें, ऐ विप्लव के बादल ।  
फिर फिर  
बार बार गर्जन,  
वर्षण है मूसलाधार,  
हृदय थाम लेता संसार,  
सुन-सुन घोर वज्र-हुंकार ।  
अशनि-पात से शायित उन्नत शत-शत वीर,  
क्षत-विक्षत-हत अचल शरीर,  
गगनस्पर्शी / स्पदर्घा-धीर ।  
हँसते हैं छोटे पौधे लघु-भार-शस्य-अपार  
हिल-हिल  
खिल-खिल  
हाथ हिलाते,  
तुझे बुलाते,  
विप्लव-रव से छोटे ही हैं शोभा पाते ।  
अट्टालिका नहीं है रे  
आतंक भवन  
सदा पंक पर ही होता जल-विप्लव-पावन,  
क्षुद्र प्रफुल्ल जलज से सदा छलकता नीर,  
रोग शोक में भी हँसता है शैशव का सुकुमार शरीर ।  
रुद्ध कोष, है विक्षुब्ध तोष,  
अंगना अंग से लिपटे भी

आतंक अंक पर काँप रहे हैं  
धनी, वज्र-गर्जन से बादल !  
त्रस्त नयन मुख काँप रहे हैं।  
जीर्ण बाहु, है जीर्ण शरीर,  
तुझे बुलाता कृषक अधीर,  
ऐ विप्लव के वीर !  
चुस लिया है उसका सार,  
हाड़ मात्र ही आधार,  
ऐ जीवन के पारावार !

### शब्दार्थ / भावार्थ :

वीणावादिनि- हे वीणा बजानेवाली माता सरस्वती, (संबोधन होने से वादिनी वादिनि“ हुआ है) तू हम भारतवासियों को विद्या का वरदान दे! हमारे कठों में प्रिय लगनेवाले स्वतंत्र, नए स्वर, नए गीत, स्वतंत्र होने का गीत), अमृत (मधुर, कभी न समाप्त होने वाले, अमरता को प्राप्त करने वाले नए मंत्र नई चेतना जगानेवाले मंत्र) मूर्च्छना भर दे। (पुराने मंत्र काम नहीं आए, इसीलिए तो देश पराधीन हो गया !)

हे माता, भारतीयों के हृदय (उर) में जो रूढ़ियों का, जड़ता का, अज्ञानता का, रक्षणशीलता का बंधन है, उनके सभी प्रकार (स्तर) के बंधनों को काट दे! उनके भीतर अज्ञान का जो अंधकार है। उसे दूर कर दे एवं ज्योतिर्मय (ज्ञान रूपी ज्योति या प्रकाश) स्रोत (निर्झर) बहा दे। ज्ञान रूपी ज्योति का झरना बहा दे, ताकि उस ज्ञान की वन्या से अज्ञान, अंधकार, पाप सब दूर मिट जाएँ और यह संसार (जग) जगमगा उठे, उद्भासित हो उठे।

हे माता, अब सारी पुरानी जीर्ण वस्तुओं को त्याग कर हमें नए छंद दे जिनमें

नई गति हो नया ताल और छन्द सब नए हो। पुराने छंद, पुरानी कविता नहीं। हमारे कंठ को नया बना, उसमें नए मेघ का रव (गर्जन) भर दे, वह मन्द्र या गंभीर हो। युवा भारतीय रूपी नए पक्षियों को नई उड़ान भरने के लिए नए पक्ष (पर) दे, नया स्वर (संगीत) दे। यह संगीत नया हो अर्थात् स्वतंत्रता स्वच्छंदता को ले आए। ऊपर पराधीनता के बंधन को काटकर फेंक दे। (व्यंजना है कि विदेशी शासन की परतन्त्रता से मुक्त होने के लिए हमें नया ज्ञान नया कौशल प्रदान कर।

सरस्वती की वन्दना के बहाने कवि देशवासियों को नए ज्ञान और कौशल को प्राप्त करके देश को स्वतंत्र करने की शक्ति आहरण करने की प्रेरणा देता है।

## बादल राग

**शब्दार्थ / भावार्थ :**

कवि निराला पौरुष, शक्ति, कर्मप्रवणता वीरत्व के कवि हैं। महाप्राण हैं। मेघ उस वीर पुरुष का प्रतीक है जो अपनी ताकत से धरती को नई शक्ति, ऊर्जा, जीवनी-शक्ति प्रदान करता है। वर्षा के द्वारा धरती को नए जीवन और सरसता से हराभरा कर देता है। कवि बादल का आह्वान करता है-तू आ, मुरझाए, सूखे, छोटे जीवों, वृक्षलताओं को सरसा दे, अपनी वर्षा की बूंदों से। जो बड़े हैं, घमण्ड से चूर हैं, उन बड़े पर्वतों, वृक्षों आदि को अपने वज्र-प्रहार से तहस-नहस कर दे।

कवि कहता है- ऐ बादल! मैं जानता हूँ कि तू विप्लव लानेवाला है, क्रांतिकारी है। तू सूखी भूमि को, झाड़, पौधे, तृण आदि को सरसता प्रदान करके जो धरती के रस के शोषक हैं, बड़े बने हुए हैं उनको नष्ट कर देने को उतर कर आ जा।

तू पवन के समुद्र पर तैर रहा है, जैसे- अनिश्चित, अस्थिर सुख पर दुःख की छाया तैरती है; अर्थात् सुख कुछ समय के लिए आता है, वह क्षणस्थायी होता है, क्योंकि उस पर दुःख धावा बोल देता है, दुःख की छाया सुख के ऊपर मँड़राती है। जीवन में सुख कम और अधिकतर दुःख ही होता है। तू जगत के दग्ध (जले हुए-ग्रीष्म के ताप से संतुष्ट, धनी शोषकों द्वारा शोषित गरीब जनसाधारण) हृदय पर

निर्दयता से विप्लव की वन्याप्लावन प्लाविता माया जैसा टूट पड़। मेघ को गरज घुमड़ कर आने का अनुरोध करते हुए कवि कहता है कि अपनी रण-तरी याने युद्ध जहाज पर चढ़कर चल-आकांक्षाओं याने इस इच्छा या उद्देश्य से कि कुछ कर दिखाऊँगा-हे घन, (याने बादल) अपनी घेरी (मेघ का गर्जन, गड़गड़ाहट) बजाते हुए चल। तेरे गर्जन से जो अंकुर (छोटी वस्तु) सोया हुआ था (ताप से जलकर) था, फिर फूट निकले, तेरी वर्षा से घास-पास जैसे छोटी चीजें पनप उठें। इससे यह पृथ्वी नई आशाओं से प्रेरित हो जाए। नए जीवन प्राप्त करके अपना सिर ऊँचाकर उठ खड़ी हो। जन जन का जीवन नए उत्साह से कार्य करने लगे।

## इन कविताओं के बारे में

### वीणा वादिनि वर दे!

‘निराला’ ने जिन परिस्थितियों में लिखना शुरू किया तब देश परतंत्र था, अंग्रेजों का शासन चल रहा था। किसीको बोलने की स्वतंत्रता नहीं थी। शासन का अत्याचार हर क्षेत्र में था। राजनीति और प्रशासन में अंग्रेजों का दबदबा था। यह देश और यहाँ के लोग उनके अधीन थे। इसके लिए एक नई चेतना जगाने की जरूरत थी, जो हमें आजादी दिला सके। ऐसी बुद्धि, ऐसे चिंतन जो पुराने और रूढ़िग्रस्त न होकर नव्यता तथा प्रगतिशील हो, ताकि स्वतंत्र रूप से अपने विचार, अपनी आशा आकांक्षाओं को अभिव्यक्त कर सके। इसीलिए कवि विद्या दात्री वीणा हस्ता देवी सरस्वती से प्रार्थना करता है कि तुम हम भारतवासियों को नये विचार दो, नया स्वर दो, वे खुल कर अपनी बात कहें। इस प्रकार एक नव युग का निर्माण हो।

### बादल राग

कवि ‘निराला’ देखते हैं कि देश की सामान्य जनता अत्यंत दीन, दुःखी हैं। बीमारी, भूखभरी, गरीबी और लाचारी से अधिकांश जनता परेशान है। कुछ लोग सुख से हैं। जनजीवन तो मरुभूमि बन गया है। ग्रीष्मकाल में जैसे सब कुछ सूख जाता, ताप से जल जाता है, वैसी हालत है। ग्रीष्म के बाद वर्षा आती है। बादल आते

हैं। वे बरसाते हैं तो धरती हरीभरी शस्यश्यामला होती है। जब धमाकेदार मूसलाधार वर्षा होती है, जब झड़ी लगती है, तूफान चलता है तब जो घमंड के साथ सिर उठाकर खड़े हैं, जो तथाकथित बड़े हैं- बड़े वृक्ष, बड़े घर, अट्टालिका आदि उनको काफी नुकसान पहुँचता है लेकिन घास, दूब, छोटे पौधे फिर से जाग उठते हैं। हरे भरे होते हैं। उनमें जीने की नई शक्ति आती है। बादल मानो सूखी, सुप्त, अवसन्न, विषण्ण धरती को सामान्य जन के जीवन को जगा देता है। इसलिए बादल आन्दोलन, क्रांति का प्रतीक है। कवि उससे आग्रह करता है कि हे बादल, तुम एक बार फिर जागो, नई चेतना, नई शक्ति, नई प्रेरणा दो। भारतवर्ष फिर से जाग उठे।

इस कविता में राष्ट्रीय भावना मूल प्रेरणा है। बादल, बरसात, बिजली, गर्जन आदि क्रांति के साधन हैं। इनके बल पर हमारा देश, हमलोग फिर से जाग उठेंगे।

### प्रश्न और-अभ्यास

१. निम्नलिखित प्रश्नों में से सही विकल्प चुनिए:

(i) वीणावादिनी कौन है?

(क) दुर्गा (ख) सरस्वती (ग) लक्ष्मी (घ) वीणा बजानेवाली

(ii) उर के बंधन को काटने से कवि का क्या अभिप्राय है?

(क) बंधन (ख) परतंत्रता (ग) रूढ़ियाँ (घ) निर्झर

(iii) समीर सागर पर कौन तैर रहा था?

(क) अस्थिर सुख (ख) विप्लवी बादल (ग) माया (घ) पृथ्वी

(iv) मूसलाधारा वर्षा होती है तो कौन हँसता है

(क) छोटे पौधे (ख) शत शतवीर (ग) वज्र हुंकार (घ) हृदय

२. निम्न प्रश्नों के उत्तर एक-एक वाक्य में दीजिए

(i) बादल को कवि क्या करने को कहता है?

(ii) मूसलाधार बरसता है तो संसार क्या करता है?



## हरिवंशराय बच्चन

हरिवंश राय 'बच्चन' का जन्म २७ नवंबर १९०७ को प्रयाग के चौक मोहल्ले में हुआ। वहीं पर उन्होंने प्रारंभ से लेकर एम.ए. तक का अध्ययन किया। अध्ययन समाप्त करने के बाद वहीं पर अंग्रेजी के लेकचरर बने। उनका जीवन बड़ा संघर्षमय रहा है। सन् १९२७ में विवाह श्यामादेवी के साथ हुआ। सन् १९३६ में यक्ष्मा से पीड़ित होकर उनकी मृत्यु हो गयी। सन् १९४२ में तेजी के साथ इन्होंने दूसरा विवाह किया। डॉक्टरेट की उपाधि के लिए केंब्रिज विश्वविद्यालय चले गये और भारत सरकार के राज्य-सभा के मनोनीत सदस्य रहे।

आधुनिक हिंदी-कविता के विकास में बच्चन जी का महत्वपूर्ण योगदान है। उनकी कविता में हालावाद भोगवाद और आनंदवाद का स्वर सबसे ऊँचा है, फिर भी उसमें निराशा, वेदना तथा नियतिवाद की बातें भी वर्णित हुई हैं। बाद में उन्होंने जो कवितायें लिखीं उनमें आशावादिता, कर्तव्यशीलता तथा जीवन से जूझने का संकल्प दिखाई देता है। 'हालावाद' के प्रवर्तक के रूप में वे हिंदी साहित्य में अमर हैं। काव्य के क्षेत्र में 'मधुशाला' के प्रकाशन के उपरांत ही इन्हें ख्याति मिलनी शुरू हो गयी थी।

बच्चन जी की भाषा बोलचाल की सरल एवं सजीव है। उनकी भाषा में कहीं बनाव-श्रृंगार नहीं है। भाषा में कहीं भी कृत्रिमता या गतिरोध नहीं है। सरल उर्दू-फारसी के शब्दों का सही उपयोग करते हैं। उनकी शैली 'गीति-शैली' है। गीत लिखने में उन्हें विशेष सफलता मिली है। उनकी शैली में सादगी और सरलता मौजूद है तथा संगीतात्मकता का भी सुंदर निर्वाह हुआ है।

उनकी प्रमुख रचनायें- ‘मधुशाला’, ‘मधुबाला’, ‘मधु-कलश’,  
‘निशा-निमंत्रण’, ‘रंगिनी सूत की माला’, ‘प्रणय पत्रिका’ आदि।

## अग्निपथ

वृक्ष हों भले खड़े  
हों घने, हों बड़े  
एक पत्र छाँह भी  
मांग मत! मांग मत! मांग मत!  
अग्निपथ! अग्निपथ! अग्निपथ!

तू न थकेगा कभी  
तू न थमेगा कभी  
तू न मुड़ेगा कभी  
कर शपथ! कर शपथ! कर शपथ!  
अग्निपथ! अग्निपथ! अग्निपथ!

यह महान दृश्य है  
चल रहा मनुष्य है  
अश्रु-स्वेद-रक्त से  
लथ-पथ! लथपथ! लथ-पथ!  
अग्निपथ! अग्निपथ! अग्निपथ!

## शब्दार्थ

अग्निपथ-कठिन रास्ता जो अग्नि से भरे रास्ते के समान है। शपथ  
करना - प्रण करना। अश्रु-स्वेद-रक्त- आँसू, पसीना और खून। लथपथ-  
भीगा हुआ।

## इस कविता के बारे में

‘अग्नि-पथ’ कविता में कवि ने मनुष्य के संघर्षमय जीवन को अग्नि के समान मार्ग कहा है। जीवन के इस मार्ग पर चलना प्रत्येक मनुष्य के लिए बहुत कठिन है। कवि हरिवंश राय बच्चन ने मनुष्य से कहा है हे मनुष्य! यह जीवन अग्नि भरे रास्ते के समान है—जिसमें कठिनाइयाँ ही कठिनाइयाँ हैं, संघर्ष ही संघर्ष है, वादे ही वादे हैं।

हे मनुष्य! भले ही तुम्हारे रास्ते में पेड़ हों जो घने होने के साथ बड़े हों पर तुम्हें उससे एक पत्ते भरे छाँव की उम्मीद नहीं करनी चाहिए। तुम्हें निरंतर संघर्ष करते रहना चाहिए। जीवन यह अग्नि से भरा हुआ पथ है। कठिनाइयों से भरे इस रास्ते पर तुम्हें आगे बढ़ते जाना है।

कवि हरिवंश राय बच्चन ने मनुष्य को अपने संकल्प में रहने की प्रेरणा देते हुए कहा है कि हे मनुष्य! तुम्हें हिम्मत नहीं हारनी चाहिए। हे मनुष्य! इस संघर्षमय जीवन में कठिनाइयों का सामना करना है। लक्ष्य को आँख के सामने रखकर निरंतर आगे बढ़ना है। तू यह शपथ कर कि इस संघर्षमय जीवन में न तू कभी थकेगा और न पीछे मुड़कर देखेगा। इस संघर्षमय जीवन में तुझे कभी थकना नहीं है और न हताश होकर मुड़ना है। तू निरंतर ओग बढ़ता रहेगा। अग्निपथ में चलते हुए तुझे हिम्मत नहीं हारनी चाहिए।

कवि ने मनुष्य को आगे बढ़ने की प्रेरणा देते हुए कहा है हे मनुष्य! यह इस जीवन की राह का सबसे खूबसूरत दृश्य होगा कि मनुष्य निरंतर आगे बढ़ता चला जा रहा है। इस जीवन में निरंतर संघर्ष करते हुए उसकी आँखों से आँसू बह रहे हैं। कठिनाई के रास्ते आगे बढ़ते हुए, परिश्रम करते हुए उसकी आँखों से आँसू बह रहे हैं। वह बराबर आगे बढ़ता चला जा रहा है खून और पसीने से लथपथ होकर।



## प्रश्न - अभ्यास

सही विकल्प चुनिए

अंक-१

1. हवा यदि बड़े या घने हों तो भी हमें क्या नहीं करना चाहिए?  
(क) पेड़ ना काटें (ख) पत्ते न तोड़ें  
(ग) एक पत्ते की छाँह भी न माँगें (घ) पेड़ के नीचे न बैठे
2. तू न \_\_\_\_\_ कभी  
(क) खेलेगा (ख) चलेगा (ग) थकेगा (घ) बैठेगा
3. तू न थकेगा, न थमेगा और क्या न करेगा?  
(क) चलेगा (ख) खेलेगा (ग) बढ़ेगा (घ) मुड़ेगा
4. मनुष्य किस पथ पर चल रहा है?  
(क) अग्निपथ (ख) सत्यपथ (ग) जीवन पथ (घ) न्याय पथ
5. मनुष्य का चलना कैसा दृश्य है?  
(क) अच्छा (ख) महान (ग) सुखद (घ) आनन्दमय
6. अग्निपथ पर मनुष्य क्या कर रहा है?  
(क) चल रहा है (ख) लेटा हुआ है  
(ग) खेल रहा है (घ) संभल रहा है
7. मनुष्य किससे लथ पथ है?  
(क) पानी से (ख) अश्रु-स्वेद-रक्त से  
(ग) अश्रु और प्रेम से (घ) आनन्द और प्रेम से

2. निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर एक-एक वाक्य में दीजिए। अंक-१

- (i) 'अग्निपथ' का अर्थ बतलाइए।
- (ii) कवि किससे कुछ न माँगने की बात कहता है ?
- (iii) मनुष्य किस पथ पर चल रहा है ?
- (iv) कौन सा दृश्य महान है ?
- (v) कवि किससे एक पत्ते भरे छाँव की उम्मीद न रखने के लिए कहता है ?
- (vi) कवि ने मनुष्य को किसकी प्रेरणा दी है ?
- (vii) मनुष्य किससे लथपथ होकर आगे बढ़ रहा है ?

3. निम्न प्रश्नों के उत्तर दो-दो वाक्यों में दीजिए। अंक-२

- (i) कैसे - कैसे दृश्यों की बात कवि ने कही है ?
- (ii) वृक्षों से क्या न माँगने पर कवि बल देता है ?
- (iii) कवि किस तरह की शपथ की प्रेरणा देता है ?
- (iv) अग्निपथ पर चलना महान दृश्य क्यों है ?

4. निम्न प्रश्नों के उत्तर तीन-तीन वाक्यों में दीजिए। अंक-३

- (i) मनुष्य को किस बात की शपथ करनी है ?
- (ii) बच्चन जी की कविता में किस वाद का स्वर सबसे ऊँचा है ?
- (iii) अतिशय थके हुए आदमी का क्या हाल है ?
- (iv) बच्चन जी की तीन रचनाओं के नाम लिखिए।
- (v) अग्निपथ कविता में कवि मनुष्य को कठिनाइयों से जूझने के लिए कैसे आह्वान देता है ?

- (vi) किस – किस तरह के वृक्ष हमें सहायता देने को खड़े रहते हैं ?
- (vii) मनुष्य का पथ अग्निपथ क्यों है ?
- (viii) अग्निपथ पर चलते हुए मनुष्य को किन – किन कठिनाइयों सामना करना पड़ता है ?

5. निम्न प्रश्नों के उत्तर दीजिए।

अंक-५

- (i) ‘अग्निपथ’ कविता का सार अपने शब्दों में लिखिए।
- (ii) कवि यह बार- बार क्यों कहते हैं कि मनुष्य का पथ अग्निपथ है ?
- (iii) मनुष्य जीवन के महान दृश्य का नायक कैसे बन सकता है ?
- (iv) ‘अग्निपथ’ कविता में व्यक्त कवि के विचारों को अपने शब्दों में लिखिए।
- (v) ‘अग्निपथ’ कविता के माध्यम से कवि हमें क्या संदेश देना चाहते हैं ?



# सुभद्रा कुमारी चौहान

## कवि परिचय:

सुभद्रा कुमारी चौहान का जन्म १६ अगस्त, १९०४ को प्रयाग के निहालपुर मुहल्ले में हुआ था। सन् १९१९ में इनका विवाह खंडवा-निवासी ठाकुर लक्ष्मणसिंह चौहान के साथ हुआ। दानों ही राष्ट्रीय विचारों के निकले। कलकत्ते के कांग्रेस अधिवेशन में असहयोग का प्रस्ताव पास होने पर सुभद्राजी ने पढ़ना छोड़ दिया और उनके पति ने भी एल-एल० बी. करके भी वकालत न करने का निश्चय किया। सन १९४२ के भारत छोड़ो आंदोलन में दोनों साथ-साथ गिरफ्तार हुए।

बीसवीं शताब्दी में राष्ट्रीय कवि तो अनेक हुए, पर वीर भाव की कवयित्री में वे अकेली थीं। सुभद्रा कुमारी चौहान भारतीय नवजागरण काल की एक ऐसी इकलौती महिला लेखिका हैं जिन्होंने सामाजिक वर्चस्व और उससे उत्पन्न अन्याय और शोषण के विरुद्ध आवाज उठाई है। पुरुष और नारी दोनों की स्वतंत्रता को उन्होंने महत्वपूर्ण माना। उन्होंने देशानुराग की कविता लिखी है जिसमें अपने अंतर के राष्ट्र-प्रेम को पूरी सच्चाई के साथ व्यक्त किया है। चित्तौड़ की महारानी पद्मिनी और झाँसी की रानी लक्ष्मीबाई इनका आदर्श रही हैं। महात्मा गाँधी जी के आदर्शों में ढलकर इन्होंने उनके असहयोग, स्वाधीनता और स्वराज्य संबंधी विचारों का प्रचार किया।

बुंदेलखंड की लोक शैली में लिखी गई उनकी कविता 'झाँसी की रानी' आज भी अमर है। आजादी की लड़ाई के दौरान इस कविता ने भारतीयों

में ऐसी हिम्मत और संघर्ष की शक्ति भरी कि अंग्रेजों की शासन सत्ता डोल उठी।

काव्य के अतिरिक्त कहानी के क्षेत्र में भी सुभद्रा कुमारी ने कलम चलाई है। राष्ट्रीय भावनाएँ, आदर्श तथा यथार्थ के धरातल पर उनकी कहानियाँ आधारित हैं। 'पापी पेट', 'वेश्या की लड़की', 'ताँगेवाला', हींगवाला और 'सुभागी' उनकी कुछ चर्चित कहानियाँ हैं जो बिखरे मोती, उन्मादिनी तथा सीधे-सादे चित्र संग्रहों में संकलित हैं। कथा-लेखन के लिए इन्हें हिंदी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग की ओर से दो बार 'सेक्सरिया पुरस्कार' भी प्राप्त हुआ है।

१५ फरवरी, १९४८ ई. को सिवनी (मध्यप्रदेश) के निकट मोटर दुर्घटना से इनकी मृत्यु हो गयी।

## झाँसी की रानी

सिंहासन हिल उठे, राजवंशों ने भ्रूकुटी तानी थी,  
बूढ़े भारत में भी आयी फिर से नयी जवानी थी,  
गुमी हुई आजादी की कीमत सबने पहचानी थी,  
दूर फिरंगी को करने की सबने मन में ठानी थी,  
चमक उठी सन् सत्तावन में

वह तलवार पुरानी थी।

बुन्देले हरबोलों के मुँह

हमने सुनी कहानी थी।

खूब लड़ी मर्दानी वह तो

झाँसी वाली रानी थी।।

कानपुर के नाना की मुँहबोली बहन 'छबीली' थी,  
लक्ष्मीबाई नाम, पिता की वह सन्तान अकेली थी,  
नाना के संग पढ़ती थी वह , नाना के संग खेलती थी,  
बरछी ढाल, कृपाण, कटारी उसकी यही सहेली थीं,  
वीर शिवाजी की गाथाएँ

उसको याद जबानी थीं।

बुन्देले हरबोलों के मुँह

हमने सुनी कहानी थी।

खूब लड़ी मर्दानी वह तो

झाँसी वाली रानी थी।।

लक्ष्मी थी या दुर्गा थी वह स्वयं वीरता का अवतार,  
देख मराठे पुलकित होते उसकी तलवारों के वार,  
नकली युद्ध व्यूह की रचना और खेलना खूब शिकार,  
सैन्य घेरना, दुर्ग तोड़ना ये थे उसके प्रिय खिलवार,

महाराष्ट्र-कुल देवी उसकी  
भी आराध्य भवानी थी।  
बुन्देले हरबोलों के मुँह  
हमने सुनी कहानी थी।  
खूब लड़ी मर्दानी वह तो  
झाँसी वाली रानी थी।।

### इस पाठ के बारे में

‘झाँसी की रानी’ कविता के पूर्वार्द्ध में सन् १९५७ के प्रथम स्वाधीनता संग्राम के अथक संघर्ष का उल्लेख है। कवयित्री कहती हैं कि इस प्रथम स्वाधीनता संग्राम में सभी राजाओं में अंग्रेजों के खिलाफ लड़ने की चेतना जाग्रत हुई। सभी भारतीयों ने अंग्रेजों को भारत से खदेड़ने का निर्णय ले लिया था। तत्कालीन भारतीय राजाओं में आक्रोश की भावना भड़क उठी। पराधीन भारत मानो बूढ़ा हो चुका था अब उसमें नयी जवानी के रूप में राष्ट्रीय भावना का संचार हो रहा था। आजादी प्रत्येक के लिए प्यारी और बेशकीमती होती है; जो अंग्रेजों के हाथ में सत्ता आने के बाद खो चुकी थी। अब भारतीय जनता आजादी की कीमत को समझ रही थी। अतः सबने यह ठान लिया था कि फिरगियों से देश को आजाद करना है। सोये हुए भारत में फिर से चेतना का संचार हो गया था। और इस स्वाधीनता की क्रांति का प्रवर्तक थी लक्ष्मीबाई।

अतः म्यान में जो तलवार इतने दिनों से रखी हुई थी वह लड़ने के लिए म्यान से बाहर निकल आयी। और यह तलवार सिद्ध तलवार थी अर्थात् इस तलवार की मदद से अतीत में बहुत सारे युद्धों को जीता गया था। ‘वह तलवार पुरानी थी’ का आशय है कि यह तलवार परीक्षित थी। यह अपनी बहादुरी के मिसाल की पुष्टि कर रही थी।

कानपुर के नाना की वह मुँहबोली बहन थी और दोनों के बीच भाई बहन का प्यार था। लक्ष्मीबाई का व्यक्तित्व बहुत सुंदर और आकर्षक था। वह अपने पिता की इकलौती पुत्री थी। नाना के संग पढ़ने और खेलने में उनका सारा समय व्यतीत होता था। बचपन से ही रानी लक्ष्मीबाई को वीरगाथाएँ और वीरतापूर्ण चरित्र वाले महापुरुष विशेष रूप से पसंद थे। अपने बाल्यकाल से ही रानी लक्ष्मीबाई ने वीर शिवाजी की संपूर्ण कहानियाँ कंठस्थ कर ली थीं। अतः कवयित्री सुभद्रा कुमारी चौहान बुंदेलखंड के लोगों की दुहाई देते हुए कहती हैं कि बुंदेलखंड के जन-जन के मुँह से उन्होंने रानी लक्ष्मीबाई की वीरता की अनेक कहानियाँ सुनी थीं। रानी लक्ष्मीबाई की मर्दानी वीर की तरह बहादुरी से लड़ने वाली ।

कवयित्री ने रानी लक्ष्मीबाई की वीरता को देखकर उन्हें धन का प्रतीक लक्ष्मी और शक्ति का प्रतीक दुर्गा से तुलना की है। मराठे उनकी तलवार का वार यानी कौशल को देखकर प्रसन्न हो जाते थे। उनके व्यक्तित्व का निर्माण बचपन से ही होने लगा था। बचपन से ही रानी लक्ष्मीबाई विभिन्न घातक अस्त्रों से क्रीड़ा करती थी; और शिकार खेलना, नकली युद्ध व्यूह की रचना, सैन्य टुकड़ियों को घेरना, दुर्गों को ध्वस्त करना जैसे वीरतापूर्ण खेलों में शामिल होती थी। रानी लक्ष्मीबाई की आराध्य देवी महाराष्ट्र की कुलदेवी भवानी थी।

कविता के अंत में पुनः झाँसी की रानी लक्ष्मीबाई की प्रशंसा करती हुई कवयित्री कहती हैं कि बुंदेलखंड के जन-जन के मुँह से सबने रानी लक्ष्मीबाई की वीरता की यह कहानी सुनी थी कि झाँसी की रानी लक्ष्मीबाई ने अंग्रेजों के खिलाफ मर्दों की तरह बहादुरी से लड़ाई लड़ी थी।



## शब्दार्थ :

सिंहासन हिल उठे-राजाओं में अंग्रेजों के खिलाफ लड़ने की चेतना जागृत हुई। राजवंशों ने भृकुटी तानी-तत्कालीन भारतीय राजाओं में देश को आजाद-करने के लिए आक्रोश की भावना भड़क उठी।

फिरंगी-विदेशी (अंग्रेज)

ठानी-दृढ़ निश्चय करना

गुमी हुई-खोई हुई

चमक उठी-म्यान में रखी हुई तलवार लड़ने के लिए म्यान से बाहर चमकती निकल आयी।

हरबोलों के मुँह-जन-जन के मुख से।

मुँहबोली-रिश्ते की नहीं, मानी हुई बहन।

छबीली-सुंदर, आकर्षक

बरछी, ढाल-लड़ाई में उपयोग किये जाने वाले अस्त्र

गाथाएँ-वीरता भरी कहानियाँ

लक्ष्मी-धन की देवी

दुर्गा-शक्ति का प्रतीक - देवी

पुलकित- रोमांचित

वीर-प्रहार

दुर्ग तोड़ना-किला तोड़ना

आराध्य देवी-इष्ट देवी

## प्रश्न-अभ्यास

१. नीचे दिए गए प्रश्नों के चार विकल्प दिए गए हैं। उनमें से सही विकल्प चुनिए:

i) क्या हिल उठे ?

(क) कुर्सियाँ (ख) सिंहासन (ग) आसन (घ) पीढ़ा

ii) किसमें फिर से नयी जवानी आयी ?

(क) औरत में (ख) यूरोप में

(ग) बूढ़े भारत में (घ) अमेरीका में

iii) किसकी कीमत सबने पहचानी थी ?

(क) गुमी हुई आजादी की (ख) व्यक्तित्व की

(ग) अस्मिता की (घ) क्रोध की

iv) सन् सत्तावन में चमकने वाली तलवार कैसी थी ?

(क) नयी (ख) तेज (ग) बेकार (घ) पुरानी

v) किसके मुँह से कहानी सुनी थी ?

(क) घरवालों के (ख) बुंदेले हरबोलों के

(ग) बाहर वालों के (घ) सबके

vi) किसकी मुँहबोली बहन छबीली थी ?

(क) कानपुर के नाना की (ख) शिवाजी की

(ग) राणा प्रताप की (घ) हिमू की।

vii) तलवारों के वार को देखकर कौन पुलकित होते थे ?

(क) बंगाली (ख) ओड़िआ (ग) मराठे (घ) तमिल

२. निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर एक-एक वाक्य में दीजिए:

i) 'झाँसी की रानी' कविता के आधार पर बताइये किसने भूकुटी तानी थी ?

i) किसकी कीमत सबने पहचानी ?

ii) छबीली किसकी मुँहबोली बहन थी ?

iii) रानी लक्ष्मीबाई किन हथियारों के संग खेला करती थी ?

iv) लक्ष्मीबाई को किसकी गाथाएँ जबानी याद थीं ?

v) नकली युद्ध-व्यूह की रचना कौन करती थी ?

vii) बुंदेले हरबोले किसकी कहानी कहा करते थे ?

viii) महाराष्ट्र की कुलदेवी किसकी आराध्य देवी थी ?

३. निम्न प्रश्नों के दो-दो वाक्यों में उत्तर दीजिए:

i) सुमद्रा कुमारी चौहान की किन्हीं दो काव्यगत विशेषताओं पर प्रकाश डालिए।

ii) फिरगी को दूर करने की सबने मन में क्यों ठान ली ?

iii) झाँसी की रानी ने किस तरह लड़ाई की ?

iv) नाना के संग लक्ष्मीबाई का समय किस तरह बीतता था ?

४. निम्न प्रश्नों के उत्तर तीन-तीन वाक्यों में दीजिए:

i) राजवंशों के भूकुटी तानने के कारणों पर प्रकाश डालिए।

- ii) रानी लक्ष्मीबाई कैसे खेल खेला करती थी ?
- iii) बुंदेले हरबोलों ने किसकी कहानी सुनाई थी ?
- iv) रानी लक्ष्मीबाई के साहस का परिचय दीजिए।

५. निम्न प्रश्नों के उत्तर दस-बारह वाक्यों में दीजिए:

- i) सुभद्रा कुमारी चौहान का साहित्यिक परिचय दीजिए
- ii) भारत में आजादी पाने के लिए कैसी भावना जाग उठी ?
- iii) रानी लक्ष्मीबाई के बचपन का चित्र आँकिए।
- iv) रानी लक्ष्मीबाई किस तरह वीरता का अवतार थी ?
- v) झाँसी की रानी कविता का मर्म समझाइए।



# गजानन माधव मुक्तिबोध

(१९१७-१९६४)

## कवि परिचय-

हिंदी की प्रगतिशील काव्यधारा के एक मूर्धन्य कवि के रूप में मुक्तिबोध ख्यात रहे हैं। मुक्तिबोध का जन्म मध्य प्रदेश के ग्वालियर जिले में श्योपुर कस्बे के एक मराठी परिवार में हुआ। उनकी प्रारंभिक शिक्षा उज्जैन में हुई। सन १९४० में उन्होंने एम.ए. किया और राजनंद गाँव के दिग्विजय कॉलेज में प्रवक्ता हो गए।

मुक्तिबोध ने सन १९३५ में लिखना शुरू किया। सन १९४३ में प्रकाशित 'तार सप्तक' में उनकी कविता संकलित थी। लेकिन अज्ञेय की व्यक्तिवादी विचारधारा से वे बँध नहीं पाए। मूलतः मुक्तिबोध मार्क्सवादी विचारधारा से प्रभावित रहे हैं। वे जिन्दगीभर लड़ते रहे हैं। डॉ. हरिचरण शर्मा ने ठीक ही लिखा है- 'उन्होंने कितनी ही लड़ाइयाँ लड़ीं-समाज से- इतिहास से- जीवन से और सब से ज्यादा अपने आप से। उनकी इन तमाम भीतरी-बाहरी लड़ाइयों को उनकी कविताओं में देखा जा सकता है। उनकी कविताएँ उनकी जिन्दगी का 'एक्सरे' हैं और उनकी जिन्दगी कविताओं की अविस्मरणीय संदर्भ-संकेतिका। वे जिंदगी से कविता और कविता से जिंदगी को जोड़कर प्रस्तुत करने वाले प्रतिबद्ध कलाकार थे।'

मुक्तिबोध का पहला काव्य संकलन, 'चाँद का मुह टेढ़ा है' जो उनके अंतिम दिनों में प्रकाशित हुआ। एक अन्य काव्य संकलन- 'भूरी-भूरी खाक' भी मृत्यु के उपरान्त प्रकाशित हुआ। इधर उनकी ग्रंथावली प्रकाशित हुई है, जिसके प्रथम दो खण्डों में उनकी सभी कविताएँ संकलित हैं।

## पूँजीवादी समाज के प्रति

इतने प्राण, इतने हाथ, इतनी बुद्धि  
इतना ज्ञान, संस्कृति और अन्तःशुद्धि  
इतना दिव्य, इतना भव्य, इतनी शक्ति  
यह सौन्दर्य, वह वैचित्र्य, ईश्वर-भक्ति,  
इतना काव्य, इतने शब्द, इतने छन्द-  
जितना ढोंग, जितना भोग है निर्बन्ध  
इतना गूढ़, इतना गाढ़, सुन्दर जाल-  
केवल एक जलता सत्य देने टाल।  
छोड़ो हाथ, केवल घृणा औ' दुर्गन्ध  
तेरी रेशमी वह शब्द-संस्कृति अन्ध  
देती क्रोध मुझको, खूब जलता क्रोध  
तेरे रक्त में भी सत्य का अवरोध  
तेरे रक्त से भी घृणा आती तीव्र  
तुझको देख मितली उमड़ आती शीघ्र  
तेरे हास में भी रोग-कृमि हैं उग्र  
तेरा नाश तुझ पर क्रुद्ध, तुझ पर व्यग्र।  
मेरी ज्वाल, जन की ज्वाल होकर एक  
अपनी उष्णता से धो चलें अविवेक  
तू है मरण, तू है रिक्त, तू है व्यर्थ।  
तेरा ध्वंस केवल एक तेरा अर्थ।

**कठिन शब्दों के अर्थ-** अंतःशुद्धि-हृदय की पवित्रता, दिव्य-अलौकिक, भव्य - सुंदर, वैचित्र्य-विचित्रता, छंद-तुक, लय आदि का बंधन, निर्बंध-बाधाहीन, गूढ़-गुप्त अवरोध-बाधा, मितली-उलटी आना, हास-हँसी रोग-कृमि-रोग के कीड़े, व्यग्र-बेचैन, ज्वाल-ज्वाला, रिक्त-खाली।

**कविता का अर्थ-** 'पूँजीवादी समाज के प्रति' कविता 'तार सप्तक' में प्रकाशित हुई थी। यह कविता मुक्तिबोध के प्रगतिशील दृष्टिकोण का परिचायक है। कवि यहाँ पूँजीवादी समाज की शोषण-सभ्यता की आलोचना करते हैं।

कवि पूँजीवादी समाज का बाह्य चित्र उपस्थित करता हुआ कहता है कि इसमें बहुत सारे व्यक्ति हैं, जो जीवंत हैं तथा प्राण धारण किये हुए हैं। उनके हाथ कर्मशील दिखाई देते हैं। इतने लोगों की बुद्धि का यहाँ समूह दिखाई देता है। यहाँ ज्ञान, संस्कृति तथा अंत शुद्धि के भी दर्शन होते हैं।

यह पूँजीवादी समाज है जो बड़ा दिव्य तथा भव्य दिखाई देता है। उसके साथ - साथ यहाँ शक्ति भी मौजूद है। यह समाज सौंदर्यवान है तथा विचित्रता से भरा हुआ है। यहाँ के लोगों में ईश्वर भक्ति की कमी नहीं। वे दिव्य शक्ति के प्रति आस्थावान हैं।

यहाँ लोगों का कथन काव्य सत्य वहन करता है जहाँ शब्द मार्मिक होने के साथ-साथ छंदयुक्त होते हैं। मगर उसके भीतर ढोंग ही ढोंग है; और यहाँ पूँजीवादी समाज निर्बंध होकर भोग में डूबा हुआ है।

पूँजीवाद का यह स्वरूप बड़ा ही गूढ़ है, रहस्यों से भरा हुआ। यह इतना गाढ़ा है कि यहाँ धोखा छिपा हुआ है। बाहर से इसका रूप सुंदर है। उसके सौंदर्य जाल में समाज के भोले भाले व्यक्ति फँस जाते हैं। यह सौंदर्य जाल एक ज्वलंत सत्य को टालने की तथा उसे छिपाने की कोशिश में निरंतर लगा हुआ है। यह सत्य और वह दरिद्र समाज जो शोषण की चक्की में शोषक समाज के द्वारा निरंतर पिस रहा है।

कवि स्पष्ट कर रहे हैं कि पूँजीवादी समाज की सभ्यता, संस्कृति, जीवन मूल्य, साहित्य आदि बाहरी रूप से भले ही सुंदर भव्य और उदात्त दिखाई देते हैं, पर वे सभी शोषण के हथियार होते हैं। इसीलिए इस दोगली सभ्यता के प्रति कवि के मन में क्रोध है, घृणा है।

कवि फिर कहता है कि ऐसे पूँजीवादी समाज से उन्हें घृणा है, क्योंकि यह दुर्गंध युक्त है। यहाँ की जो शब्द-संस्कृति है उसे कवि रेशमी संस्कृति कहता है। यह भोगवादी दिखावटी संस्कृति है जो अंधी है। ऐसी संस्कृति को देखकर कवि क्रोधित हो उठता है। उसका क्रोध उबलने लगता है। पूँजीवादी मनुष्य सच्चा नहीं है। अतः कवि आक्षेप करके कहता है कि उसके बहते हुए रक्त में सत्य का अवरोध दिखाई देता है। और कवि ऐसे रक्त से घृणा करता है। कवि की नफरत इस तरह बढ़ जाती है कि पूँजीवादी मनुष्य को देखकर तुरंत मितली उमड़ आती है। कारण पूँजीवाद घृणा के योग्य है।

पूँजीवादी की हँसी भी कवि को पसन्द नहीं आती है। अतः कवि कहता है तेरी हँसी में रोग के कीटाणु हैं जो इतने उग्र हैं कि शोषित समाज को ग्रास कर रहे हैं।

कवि शोषणमुक्त स्वस्थ समाज की कल्पना करता है, इसलिए वह विषमता और शोषण की नींव पर खड़े पूँजीवादी समाज का नाश चाहते हैं। यह तभी संभव है। जब कवि की ज्वाला जन समाज की ज्वाला बने। मैं जैसी विषमता महसूस कर रहा हूँ वैसा दूसरे भी महसूस करें। लोगों का विवेक जाग्रत हो और अपनी उष्णता से, दूरदर्शिता से अविवेकिकता का सफाया हो। जब जनमानस की ज्वाला प्रज्वलित हो उठेगी तो जनमानस से अज्ञान, अविवेक जल जाएँगे और उन्हें अपने शोषण का अहसास होगा।



कवि को विश्वास है कि पूँजीवादी व्यवस्था एक न एक दिन जर्जर होगी। जब जनता जाग जाएगी उसका एक ही उद्देश्य होगा पूँजीवाद का ध्वंस। यह व्यवस्था वास्तव में रिक्त और व्यर्थ है, क्योंकि इससे जनता का नुकसान होता है। अतः एक न एक दिन इसका अंत होगा।

### प्रश्न -अभ्यास

अंक-01

१. नीचे दिए गए प्रश्नों के चार विकल्प दिए गए हैं। उनमें से सही विकल्प चुनिए।

i) 'पूँजीवादी समाज के प्रति' कविता कहाँ प्रकाशित हुई थी ?

- (क) तारसप्तक (ख) रामचरितमानस  
(ग) इतिहास (घ) दूसरा सप्तक

ii) कवि किस समाज की शोषण-सभ्यता की आलोचना करते हैं ?

- (क) जमींदारी (ख) पूँजीवादी  
(ग) अमीर (घ) कुलीन

iii) किसके हाथ कर्मशील दिखाई देते हैं ?

- (क) साहूकार समाज (ख) ग्रामीण समाज  
(ग) पूँजीवादी समाज (घ) कर्मठ समाज

iv) मुक्तिबोध का जन्म किस परिवार में हुआ ?

- (क) पंजाबी (ख) मराठी  
(ग) ओड़िआ (घ) बंगाली

v) पूँजीवादी समाज कैसा दिखाई देता है ?

- (क) दिव्य तथा भव्य (ख) धुँधला  
(ग) चमकीला (घ) फीका

vi) पूँजीवादी समाज के सौंदर्यजाल में समाज के कौन व्यक्ति फँस जाते हैं ?

(क) धूर्त

(ख) चालाक

(ग) भोले-भाले

(ग) सीधे सरल

vi) शोषण की चक्की में कौन पिस रहा है ?

(क) धनी

(ख) संभ्रांत

(ग) शोषक

(घ) जन साधारण

२. निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर एक-एक वाक्य में दीजिए।

(क) पूँजीवादी समाज किसे कहते हैं ?

(ख) पूँजीवादी समाज का चेहरा कैसा है ?

(ग) पूँजीवादी समाज किस तरह सौंदर्यवान है ?

(घ) पूँजीवादी समाज में लोगों का कथन कैसा होता है ?

(ङ) पूँजीवादी समाज के शोषक रूप का वर्णन कीजिए।

(च) पूँजीवादी समाज किस प्रकार चिचित्रता से भरा हुआ है ?

३. निम्न प्रश्नों के उत्तर दो-दो वाक्यों में दीजिए।

अंक-02

i) मुक्तिबोध की किन्हीं दो साहित्यिक विशेषताओं पर प्रकाश डालिए।

ii) पूँजीवादी समाज की शोषण सभ्यता कैसी होती है ?

iii) किसे देखकर कवि को मितली आती है और क्यों ?

iv) किसकी ज्वाल जन की ज्वाल बने और क्यों ?

४. निम्न प्रश्नों के उत्तर तीन वाक्यों में दीजिए।

अंक-03

i) पूँजीवादी सभ्यता की कौन सी बात कवि को पसंद नहीं ?

ii) पूँजीवादी समाज का बाह्य चित्र कैसा है ?

iii) पूँजीवादी सभ्यता का अंत कैसे हो सकता है ?

iv) ज्वलंत सत्य को कौन टालता है और कैसे ?

५. निम्न प्रश्नों के उत्तर दस-बारह वाक्यों में दीजिए। अंक-05

i) मुक्तिबोध का साहित्यिक परिचय दीजिए।

ii) कवि को पूँजीवादी समाज से घृणा क्यों है ?

iii) पूँजीवादी समाज के स्वरूप को स्पष्ट कीजिए।

iv) पूँजीवादी समाज को कवि क्यों दुर्गंधयुक्त मानता है ?

v) पूँजीवादी समाज को कवि क्यों घातक मानता है ?



## मंगलेश डबराल

**कवि परिचय:** मंगलेश डबराल का जन्म १६ मई सन १९४८ में टिहरी गढ़वाल उत्तराखंड के कापफलपानी गाँव में हुआ। शिक्षा- दीक्षा हुई देहरादून में। दिल्ली आकर हिंदी 'पोट्रियट', 'प्रतिपक्ष' और 'आसपास' में काम करने के बाद भोपाल में भारत भवन से प्रकाशित होनेवाले 'पूर्वग्रह' में सहायक संपादक हुए। इलाहाबाद और लखनऊ से प्रकाशित 'अमृत प्रभात' में भी कुछ दिन नौकरी की। सन १९८३ में 'जनसत्ता' अखबार में साहित्य-संपादक का पद संभाला।

उनके चार कविता संग्रह प्रकाशित हुए हैं- 'पहाड़ पर लालटेन', 'घर का रास्ता', 'हम जो देखते हैं' और 'आवाज भी एक जगह है'।

कविता के अतिरिक्त वे साहित्य, सिनेमा, संचार के माध्यम और संस्कृति के सवालों पर नियमित लेखन भी करते हैं। मंगलेश की कविताओं में सामंती एवं पूजीवादी छल-छदम दोनों का प्रतिकार है। वे यह प्रतिकार किसी शोर-शराबे के साथ नहीं, बल्कि प्रतिपक्ष में एक सुंदर सपना रचकर करते हैं। उनका सौंदर्यबोध सूक्ष्म है और भाषा पारदर्शी।

मंगलेश का आग्रह है कि जो मनुष्य भूख से तड़पता है, उसे अपना आक्रोश व्यक्त करना चाहिए। वे तानाशाह और साम्राज्यवाद को बेनकाब करते हैं।

निष्कर्ष रूप में कहा जा सकता है कि मंगलेश डबराल आम आदमी की पीड़ा, टूटे सपनों, जीने की विवशताओं के यथार्थवादी कलाकार हैं। उनकी कविता में हुंकार है, जिसे अनसुना करना असंभव है।

वे साहित्य अकादमी पुरस्कार, पहल सम्मान से सम्मानित हुए।

## ताकत की दुनिया

ताकत की दुनिया में जाकर मैं क्या करूँगा  
मैं सैकड़ों हजारों जूते चप्पल लेकर क्या करूँगा  
मेरे लिए एक जोड़ी जूते ही ठीक से रखना कठिन है  
हजारों लाखों कपड़ों मोजों दस्तानों का मैं क्या करूँगा  
उन्हें पहनने का हिसाब रखना असंभव ही होगा  
मैं इतने सारे कमरों का क्या करूँगा  
यह दुनिया घर है कोई होटल नहीं  
और मेरी नींद का आकार हृद से हृद एक चिड़िया के बराबर है  
मैं सिक्कों पर अपना नाम और चेहरा क्यों खुदवाऊँगा  
मैं जानता हूँ बाजार से बाहर उनका कोई मोल नहीं है  
मैं क्यों बनवाऊँगा कोई मंदिर मस्जिद गिरजा या ऐसा ही कुछ  
मुझे पता है वहाँ कोई ईश्वर नहीं रहता  
मैं क्यों जमा करूँगा इतने टोप तमगे छाते इतने घोड़े कुत्ते  
हीरे मोती इतना हरबा हथियार ऐसे-ऐसे जहाज  
मैं क्यों रहने जाऊँगा चाँद पर  
वह मुझे धरती से ही दिखाई देता है बहुत सुंदर  
तीन डग में ही मैं क्यों नाप लूँगा तीन लोक  
सब कुछ छीनकर किसी को क्यों भेजूँगा पाताल  
मैं क्यों कब्जा करूँगा इस धरती पर  
किसी को जरूरत हुई तो दे दूँगा उसे जो भी होंगे मेरे खेत खलिहान  
मैं कोई दरिंदा नहीं जो किसी धरती पर बम गिराने चला जाऊँगा  
मैं मनुष्य हूँ  
तेल पीते और खून चूसते हुए क्यों बिता दूँगा अपना जीवन  
(२००७ : मुझे दिखा एक मनुष्य)

**शब्दार्थ-** दस्ताना- हाथ में पहनने का बुना हुआ या चमड़े का गिलाफ, दरिदा-हिंस्र, हरबा हथियार-अस्त्र-शस्त्र, टोप-टोपी, तमगे-पीतल आदि के बने सरकारी निशान जिसे छाती के बायीं तरफ वस्त्र पर लगाया जाता है, छाते-छाता, छतरी

**इस कविता के बारे में-** 'ताकत की दुनिया' कविता में कवि ताकत की दुनिया को नकारता है। यह ऐसी दुनिया है जहाँ बेवजह पैसे खर्च किये जाते हैं। कवि को फिजुलखर्ची पसंद नहीं। अतः कवि को ताकत की दुनिया निरर्थक लगती है। वह कहता है ताकत की दुनिया में लोग अर्थ के बल पर सैकड़ों, हजारों जूते चप्पल रखते हैं। पर मुझे इतने सारे जूते चप्पलों की जरूरत नहीं। उसके लिए एक जोड़ी जूते को अच्छी तरह रख पाना मुश्किल है, क्यों कि जूते को पालिश लगाकर उसकी हिफाजत की जाती है। उसी तरह कवि हजारों, लाखों मोजों और दस्तानों से भी इंकार करता है। इन्हें पहनने का हिसाब रखने में कवि असमर्थ है। क्योंकि उसे याद नहीं रहेगा अनगिनत मोजों और दास्तानों में से उसने कितने पहने और कितने नहीं पहने। इनके खोने का डर भी बना रहता है।

फिर कवि रहने की समस्या को लेकर बात करता है। कवि कहता है उसे बहुत सारे कमरों की कोई जरूरत नहीं। होटल में बहुत सारे कमरे होते हैं, जहाँ लोग किराया देकर ठहरते हैं। इस दुनिया में हमें रहने के लिए बस एक ही कमरा चाहिए। ज्यादा कमरों की लालच इंसान को नहीं करनी चाहिए। कवि नींद को बहुत छोटी यानी हल्की बताता है। अगर उसकी नींद का आकार एक चिड़िया के बराबर है तो फिर इसी दुनिया में उसके लिए एक घर यानी एक कमरा काफी है। अतः एक छोटे से घर में ही इंसान को संतुष्ट हो जाना चाहिए। बहुत ज्यादा कमरों की उसे जरूरत नहीं है।

कवि को अपने नाम या चेहरे को स्थायी करने की भी कोई चाह नहीं है।

वह सिक्कों पर अपना नाम और चेहरा खुदवाने का पक्षपाती नहीं है। सिक्का बाजार में चीज खरीदने के काम आता है। पर एक बार सिक्का बाजार से बाहर निकल जाता है तो वह मूल्यहीन वस्तु के बराबर हो जाता है। अतः इस अस्थायित्व की वजह से कवि के अनुसार धार्मिक पीठों पर ईश्वर नहीं रहता इसलिए वह मंदिर, मस्जिद, गिरजा या और किसी भी प्रकार के उपासना स्थल के निर्माण से इंकार करता है। साथ-ही साथ कवि संचय की प्रवृत्ति को भी इंकार करता है। वह कहता है इतने टोप, तमगे, छाते, घोड़े-कुत्ते, हीरे मोती और हरबा हथियार जमा करने की उसे कोई जरूरत नहीं। बड़े-बड़े जहाज का मालिक बनने से वह इंकार करता है। यह संसार अस्थायी है। मनुष्य की जिंदगी चार दिन की है। अतः इंसान के लिए बेहतर है कि वह संचय की प्रवृत्ति को त्याग दे। इंसान की जो ताकत पाने की लालसा है, यह कविता उसके खिलाफ आवाज बुलंद करती है।

आजकल लोग चाँद पर जमीन खरीदने की इच्छा रखते हैं। कवि चाँद पर रहने को इच्छुक नहीं है। वह कहता है इस धरती से जब वह चाँद की तरफ देखता है तो चाँद उसे बहुत ज्यादा सुंदर दिखाई देता है। इस धरती से ही चाँद को अवलोकन करना चाहिए। इंसान के पाँव धरती पर रहें तो अच्छा है, ताकि वह अपनी औकात न भूले। अतः चाँद पर जाकर रहने से कवि इंकार करता है।

पुनः कवि तानाशाह के खिलाफ आवाज उठाता है। राजा बली एक सुशासक थे और न्यायप्रिय थे। पर उनकी न्यायप्रियता से देवता भयभीत हो गये। और राजा बली को देवताओं के षड़यंत्र का शिकार होना पड़ा। राजा बली महादानी थे। अतः विष्णु ने वामन अवतार का रूप धारण करके तीन पग जमीन उनसे माँगी। बली ने वचन दिया; और तीन पग में ही वामनावतार ने तीन लोक को नाप लिया और राजा बली से सबकुछ छीनकर उन्हें

पाताल लोक भेज दिया। कवि इस प्रकार के छल से सहमत नहीं है। अतः वह संदेश देता है कि वह छल पूर्वक किसी से कुछ छीनने के पक्ष में नहीं है। ओणम दक्षिण भारतीय त्योहार है। इस त्योहार में राजा बली को याद किया जाता है।

कवि उन सत्ताधारियों का भी विरोध करता है जो इस धरती पर कब्जा करते हैं। कल, बल, कौशल से किसी की जमीन छीनने के पक्ष में कवि नहीं है। अतः कवि अवैध तरीके से इस धरती पर कब्जा करना नहीं चाहता। कवि इतना ज्यादा वदान्य है कि वह किसी जरूरतमंद को अपने खेत-खलिहान तक देने को तैयार हैं। जो कोई भी तकलीफ में है, कवि उसकी मदद करने को तैयार है।

फिर कवि दुनिया के शक्तिशाली देशों की तरफ इशारा करते हुए उनके वर्चस्व की निंदा करता है। वह कहता है कि वह कोई दरिंदा नहीं है जो किसी कमतर अथवा कम शक्तिशाली देश पर बम गिराने चला जाएगा, शक्तिशाली देश कमजोर देश पर बम गिराकर वहाँ के निरीह लोगों को मारता है। विश्व की महाशक्तियों का अत्याचार छोटे देश को झेलना पड़ता है। कवि ने अमरीका के वर्चस्व की ओर संकेत किया है।

अंत में कवि इंसानियत की दुहाई देते हुए कहता है कि वह मनुष्य है और हर मनुष्य को मनुष्य के साथ मनुष्योचित व्यवहार करना चाहिए। बड़े बड़े देश तेल पर कब्जा करने के लिए छोटे-छोटे देशों पर (जिनके पास तेल है) हमला करते हैं। वहाँ के लोगों का शोषण करते हैं। अतः कवि गलत तरीके से उन छोटे देश पर तेल की खातिर कब्जा करने और निरीह लोगों का खून चूसने से इंकार करता है। अमरीका ने इराक पर जो हमला किया था, कवि उसकी तरफ इशारा करते हैं।

यह कविता एक उत्कृष्ट कविता है जो मानवतावाद का संदेश देती है।



## प्रश्न-अभ्यास

1. नीचे दिए गए प्रश्नों के चार विकल्प दिए गए हैं। उनमें से सही विकल्प चुनिए।

अंक-१

i) मंगलेश डबराल का जन्म कब हुआ था ?

(क) १६ मई १९४८ (ख) १५ मई १९४५

(ग) १ जून १९४१ (घ) २ जून १९४२

ii) मंगलेश डबराल का जन्म किस गाँव में हुआ था ?

(क) धरमपुर (ख) कापफलपानी

(ग) लमही (घ) रानीगंज

iii) सन १९८३ में किस अखबार में मंगलेश ने साहित्य संपादक का पद संभाला ?

(क) हिंदुस्तान टाइम्स (ख) समाज

(ग) जनसत्ता (घ) दि हिन्दू

iv) मंगलेश अपनी कविताओं में किसका प्रतिकार करते हैं ?

(क) कपटाचार (ख) राजसी वृत्ति

(ग) घृणा (घ) सांमती बोध और पूँजीवादी छल छदम

v) कवि के लिए क्या ठीक से रखना कठिन है ?

(क) दो जोड़ी जूते (ख) एक जोड़ी जूते

(ग) तीन जोड़ी चप्पल (घ) एक जोड़ी चप्पल

vi) कवि के लिए किन्हें पहनने का हिसाब रखना असंभव होगा

(क) पैंट-शर्ट-बुश शर्ट (ख) लुंगी, अत्तरीय

(ग) कपड़ों, मोजों, दस्तानों (घ) स्वेटर, मफलर

vii) कवि दुनिया को क्या मानता है?

(क) घर (ख) मकान (ग) होटल (घ) रेस्तराँ

viii) कवि की नींद का आकार किसके बराबर है?

(क) तोता (ख) गौरैया (ग) कौआ (घ) चिड़िया

२. निम्नलिखित प्रश्नों में से किन्हीं पाँच के उत्तर एक-एक वाक्य में दीजिए।

i) मंगलेश डबराल का साहित्यिक परिचय दीजिए।

ii) मंगलेश जी ने कविता के अतिरिक्त और क्या क्या लिखे?

iii) मंगलेश की कविता की मुख्य चिन्ता क्या है?

iv) कवि कितने जोड़ी जूते पहनना चाहते हैं?

v) बाजार से बाहर किसका कोई मोल नहीं है?

vi) कवि कहाँ कब्जा नहीं करना चाहते?

vii) कवि को धरती से कौन सुंदर दिखाई देता है?

viii) कवि क्या पीकर और क्या चूसकर अपना जीवन बिताना नहीं चाहते?

३. निम्न प्रश्नों के दो-दो वाक्यों में उत्तर दीजिए:

अंक-२

i) मंगलेश डबराल की किन्हीं दो काव्यगत विशेषताओं पर प्रकाश डालिए।

- ii) मंगलेश जी को किन सम्मानों से नवाजा गया ?
- iii) मंगलेश जी जरूरतमंद को अपनी कौन सी चीज देना चाहते हैं ?
- iv) कवि स्वयं को दरिंदा न होने की बात कैसे प्रमाणित करते हैं ?

४. निम्न प्रश्नों के उत्तर तीन-तीन वाक्यों में दीजिए: अंक-३

- i) कवि कितने जूते, कपड़े, मोजे और दस्ताने रखना चाहता है ?
- ii) 'ताकत की दुनिया' कविता के आधार पर कवि की तीन चाहों पर प्रकाश डालिए।
- iii) मंगलेश डबराल किसे बेनकाब करते हैं और क्यों ?
- iv) मंगलेश को कविता में किसकी हुंकार सुनाई पड़ता है ?

५. निम्न प्रश्नों के उत्तर दस-बारह वाक्यों में दीजिए। अंक-५

- i) मंगलेश डबराल का साहित्यिक परिचय दीजिए।
- ii) 'ताकत की दुनिया' कविता के माध्यम से कवि क्या संदेश देना चाहते हैं ?
- iii) 'ताकत की दुनिया' कविता की समीक्षा कीजिए।
- iv) मंगलेश डबराल के साहित्यिक व्यक्तित्व का आकलन कीजिए।
- v) 'ताकत' की दुनिया' कविता के माध्यम से कवि किस तरह संचय की प्रवृत्ति को नकाराता है।



## बालकृष्ण भट्ट

(३ जून १८४४ ई. ३० जुलाई १९१४ ई.)

बालकृष्ण भट्ट भारतेंदु युग के प्रतिनिधि निबंधकार, पत्रकार और नाटककार माने जाते हैं। वे मूलतः पत्रकार थे। दिसम्बर १८७७ ई. में इलाहाबाद की हिन्दी वर्धनी की ओर से मासिक पत्र 'हिन्दी प्रदीप' का प्रकाशन किया। भट्टजी भारतेंदु मण्डल के निबंधकार हैं। भट्टजी के राजनीतिक निबंधों में तत्कालीन राजनीति के प्रति कठोर आक्रोश देखने को मिलता है। इनके निबंधों में भावना का भी समावेश है। इन्होंने निबंध साहित्य को एक नई दिशा और प्रतिष्ठा दी। साहित्यिक, सामाजिक, राजनीतिक, नैतिक आदि विषयों पर निबंध लिखे। उनके निबंधों में हास्य और व्यंग्य का सुसमन्वय मिलता है। उनकी शैली परिचयात्मक और भावात्मक है। उनकी भाषा प्रवाहमयी तथा सरल है। उनके निबंध 'साहित्य सुमन' और 'निबंधावली' पुस्तकों में संकलित हैं। 'सौ अज्ञान एक सुजान, नूतन ब्रह्मचारी, रेल का विकट खेल, भाग्य की परख, जैसा काम वैसा परिणाम' आदि उनकी प्रमुख रचनाएँ हैं।

## आत्मनिर्भरता

आत्मनिर्भरता (अपने भरोसे पर रहना) ऐसा श्रेष्ठ गुण है कि जिसके न होने से पुरुष में पौरुषेयत्व का अभाव कहना अनुचित नहीं मालूम होता। जिनको अपने भरोसे का बल है, वे जहाँ होंगे, जल में तूँबी के समान सब के ऊपर रहेंगे। ऐसों ही के चरित्र पर लक्ष्य कर महाकवि भारवि ने कहा है कि तेज और प्रताप से संसार भर को अपने नीचे करते हुए ऊँची उमंग वाले दूसरों के द्वारा अपना वैभव नहीं बढ़ाना चाहते। शारीरिक बल, चतुरंगिनी सेना का बल, प्रभुता का बल, ऊँचे कुल में पैदा होने का बल, मित्रता का बल, मंत्र-तंत्र का बल इत्यादि जितने बल हैं, निज बाहु-बल के आगे सब क्षीण बल हैं। आत्मनिर्भरता की बुनियाद यह बाहु-बल सब तरह के बलों को सहारा देने वाला और उभारने वाला है।

यूरोप के देशों की जो इतनी उन्नति है तथा अमेरिका, जापान आदि जो इस समय मनुष्य-जाति के सरताज हो रहे हैं, इसका यही कारण है कि उन देशों में लोग अपने भरोसे पर रहना या कोई काम करना अच्छी तरह जानते हैं। हिन्दुस्तान का जो सत्यानाश है, इसका यही कारण है कि यहाँ के लोग अपने भरोसे पर रहना भूल ही गए। इसी से सेवकाई करना यहाँ के लोगों से जैसी खूबसूरती के साथ बन पड़ता है, वैसा स्वामित्व नहीं। अपने भरोसे पर रहना जब हमारा गुण नहीं, तब क्यों कर संभव है कि हमारे में प्रभुत्व-शक्ति को अवकाश मिले।

निरी किस्मत और भाग्य पर वे ही लोग रहते हैं जो आलसी हैं। किसी ने अच्छा कहा है - “दैव दैव आलसी पुकारा”।

ईश्वर भी सानुकूल और सहायक उन्हीं का होता है, जो अपनी सहायता अपने आप कर सकते हैं। अपने आप अपनी सहायता करने की वासना आदमी में सच्ची तरक्की की बुनियाद है। अनेक सुप्रसिद्ध सत्पुरुषों की

जीवनियाँ इसके उदाहरण तो हैं ही, वरन् प्रत्येक देश या जाति के लोगों में बल और ओज तथा गौरव और महत्व के आने का सच्चा द्वार आत्मनिर्भरता है। बहुधा देखने में आता है कि किसी काम के करने में बाहरी सहायता इतना लाभ नहीं पहुँचा सकती, जितनी आत्मनिर्भरता।

समाज के बंधन में भी देखिये, तो बहुत तरह के संशोधन सरकारी कानूनों के द्वारा वैसे नहीं हो सकते, जैसे समाज के एक-एक मनुष्य के अलग - अलग अपने संशोधन अपने आप करने से हो सकते हैं।

कड़े से कड़े नियम आलसी समाज को परिश्रमी, अतिव्ययी को परिमित व्ययशील, शराबी को संयमी, क्रोधी को शांत या सहनशील, क्रूर को उदार, लोभी को संतोषी, मूर्ख को विद्वान्, दर्पान्ध को नम्र, दुराचारी को सदाचारी, कदर्य को उन्नतमना, दरिद्र भिखारी को धनाढ्य, भीरू-डरपोक को वीर-धुरीण, झूठे गपोड़िये को सच्चा, चोर को सहनशील, व्यभिचारी को एक-पत्नी व्रतधारी इत्यादि नहीं बना सकता किन्तु ये सब बातें हम अपने ही प्रयत्न और चेष्टा से अपने में ला सकते हैं।

सच पूछो जो जाति भी ऐसे ही सुधरे एक-एक अलग-अलग अपने को सुधारे, तो जाति-की-जाति या समाज-का समाज सुधर जाय।

सभ्यता और है क्या? यही कि सभ्य जाति के एक-एक मनुष्य आबाल, वृद्ध, वनिता सबों में सभ्यता के सब लक्षण पाये जाएँ। जिसमें आधे या तिहाई सभ्य हैं, वही जाति अर्द्धशिक्षित कहलाती है। जातीय उन्नति भी अलग-अलग एक-एक आदमी के परिश्रम, योग्यता-सुचाल और सौजन्य का मानो जोड़ है। उसी तरह जाति की अवनति एक-एक आदमी की सुस्ती, कमीनापन, नीची प्रकृति, स्वार्थपरता और भाँति-भाँति की बुराइयों का बड़ा जोड़ है। इन्हीं गुणों और अवगुणों को जाति-धर्म के नाम से भी पुकारते हैं, जैसे सिक्खों में वीरता और जंगली जातियों में लुटेरापन।

जातीय गुणों को सरकार कानून के द्वारा रोक या जड़-मूल से नष्ट-भ्रष्ट नहीं कर सकती, वे किसी दूसरी शक्ति में न सिर्फ फिर से उभर आएँगे वरन् पहले से ज्यादा तरोताजगी और हरियाली की हालत में हो जाएँगे। जब तक किसी जाति के हर एक व्यक्ति के चरित्र में आदि से मौलिक सुधार न किया जाए, तब तक पहले दर्जे का देशानुराग और सर्वसाधारण के हित की वांछा सिर्फ कानून के अदलने-बदलेन से, या नए कानून के जारी करने से, नहीं पैदा हो सकती।

जालिम-से-जालिम बादशाह की हुकूमत में रहकर कोई जाति गुलाम नहीं कही जा सकती, वरन् गुलाम वही जाति है, जिसमें एक-एक व्यक्ति सब भाँति कदर्य, स्वार्थ-परायण और जातीयता के भाव से रहित है। ऐसी जाति जिसकी नस-नस में दास्य भाव समाया हुआ है, कभी उन्नति नहीं करेगी, चाहे कैसे ही उदार शासन से वह शासित क्यों न की जाए। तो निश्चय हुआ कि देश की स्वतंत्रता की गहरी और मजबूत नींव उस देश के एक-एक आदमी के आत्मानिर्भरता आदि गुणों पर स्थित है।

ऊँचे-से-ऊँचे दर्जे की शिक्षा बिलकुल बेफायदा है, यदि हम अपने ही सहारे अपनी भलाई न कर सकें। जॉन स्टुअर्ट मिल का सिद्धांत है कि “राजा का भयानक - से - भयानक अत्याचर देश पर कभी कोई असर नहीं पैदा कर सकता जब तक उस देश के एक-एक व्यक्ति में अपने सुधार की अटल वासना दृढ़ता के साथ बद्धमूल है।”

पुराने लोगों से जो चूक और गलती बन पड़ी है, उसी का परिणाम वर्तमान समय में हम लोग भुगत रहे हैं। उसी को चाहे जिस नाम से पुकारिए, यथा जातीयता का भाव जाता रहा, रुका नहीं है, आपस की सहानुभूति नहीं है, इत्यादि। तब पुराने क्रम को अच्छा मानना और उस पर श्रद्धा जमाए रखना हम क्यों कर अपने लिये उपकारी और उत्तम मानें। हम तो इसे निरी चंडूखाने की गप समझते हैं कि हमारा धर्म हमें आगे नहीं बढ़ने देता अथवा विदेशी राज से शासित हैं इसी से हम उन्नति नहीं कर सकते।

वास्तव में सच पूछो तो आत्मनिर्भरता अर्थात् अपनी सहायता अपने आप करने का भाव हमारे बीच है ही नहीं। यह सब हमारी वर्तमान दुर्गति उसी का परिणाम है। बुद्धिमानों का अनुभव हमें यही कहता है कि मनुष्य में पूर्णता विद्या से नहीं वरन् काम से होती है। प्रसिद्ध पुरुषों की जीवनियों के पढ़ने से ही नहीं, वरन् उन प्रसिद्ध पुरुषार्थी पुरुषों के चरित्र का अनुकरण करने से मनुष्य में पूर्णता आती है।

यूरोप की सभ्यता, जो आजकल हमारे लिये प्रत्येक उन्नति की बातों में उदाहरण स्वरूप मानी जाती है, एक दिन या एक आदमी के काम का परिणाम नहीं है। जब कई पीढ़ी तक देश का देश ऊँचे काम, ऊँचे विचार और ऊँची वासनाओं की ओर प्रबल-चित्त रहा, तब वे इस अवस्था को पहुँचे हैं। वहाँ के हर-एक संप्रदाय, जाति या वर्ण के लोग धैर्य के साथ धुन बाँध के बराबर अपनी-अपनी उन्नति में लगे हैं। नीचे-से-नीचे दर्जे के मनुष्य-किसान, कुली, कारीगर, आदि-और ऊँचे-से ऊँचे दर्जे वाले कवि, दार्शनिक, राजनीतिज्ञ सबों ने मिलकर जातीय उन्नति को इस सीमा तक पहुँचाया है। एक ने एक बात को आरम्भ कर उसका ढाँचा खड़ा कर दिया, दूसरे ने उसी ढाँचे पर आरूढ़ रहकर दर्जा बढ़ाया, इसी तरह क्रम क्रम से कई पीढ़ी के उपरांत वह बात जिसका केवल ढाँचा खड़ा कर दिया, दूसरे ने उसी ढाँचे पर आरूढ़ रहकर दर्जा बढ़ाया, इसी तरह क्रम क्रम से कई पीढ़ी के उपरांत वह बात जिसका केवल ढाँचा-मात्र पड़ा था, पूर्णता और सिद्धि की अवस्था तक पहुँच गई।

ये अनेक शिल्प और विज्ञान, जिनकी दुनिया-भर में धूम मची है, इसी तरह शुरू किए गए थे और ढाँचा छोड़ने वाले पूर्व पुरुष अपनी भाग्यवान् भावी संतान को उस शिल्प-कौशल और विज्ञान की बड़ी भारी बपौती का उत्तराधिकारी बना गए थे।

आत्मनिर्भरता के सम्बन्ध में जो शिक्षा हमें खेतिहर, दूकानदार, बढई, लोहार आदि कारीगरों से मिलती है, उसके मुकाबले में स्कूल और कालेजों



की शिक्षा कुछ नहीं है, और यह शिक्षा हमें पुस्तकों या किताबों से नहीं मिलती, वरन् एक-एक मनुष्य के चरित्र, आत्म-दमन, दृढ़ता, धैर्य, परिश्रम, स्थिर अध्यवसाय पर दृष्टि रखने से मिलती है। इन सब गुणों से हमारे जीवन की सफलता है। ये गुण मनुष्य जाति की उन्नति के छोर हैं और हमें जन्म में क्या करना चाहिये, इसके सारांश हैं।

बहुतेरे सत्पुरुषों के जीवन-चरित्र धर्म-ग्रन्थों के समान हैं, जिनके पढ़ने से हमें कुछ-न - कुछ उपदेश जरूर मिलता है। बड़प्पन किसी जाति विशेष या खास दर्जे के आदमियों के हिस्से में नहीं पड़ा। जो कोई बड़ा काम करे या जिससे सर्वसाधारण का उपकार हो, वही बड़े लोगों की कोटि में आ सकता है। वह चाहे गरीब - से - गरीब या छोटे दर्जे का क्यों न हो, बड़े-से बड़ा है। वह मनुष्य के तन में साक्षात् देवता है।

हमारे यहाँ अवतार ऐसे ही लोग हो गए हैं। सबेरे उठकर जिनका नाम ले लेने से दिन भर के लिए मंगल का होना पक्का समझा जाता है, ऐसे महा महिमाशाली जिस कुल में जन्मते हैं, वह कुल उजागर और पुनीत हो जाता है। ऐसों ही की जननी वीर-प्रसू कही जाती है। पुरुष सिंह ऐसा एक पुत्र अच्छा, गीदड़ों की विशेषता वाले सौ पुत्र भी किस काम के।



## इस पाठ के बारे में

बालकृष्णा भट्ट आत्मनिर्भरता को मनुष्य का श्रेष्ठ गुण माना है। पश्चिम के देश इसी गुण के कारण काफी प्रगति कर सके हैं। हम भी आत्मनिर्भर बनें।

## प्रश्न-अभ्यास

१. दस-पंद्रह वाक्यों में उत्तर दीजिए:

- (क) आत्मनिर्भरता कितना आवश्यक है?
- (ख) सभ्यता क्या है?

२. दो-दो वाक्यों में उत्तर दीजिए:

- (क) निरी किस्मत पर कौन रहते हैं?
- (ख) क्या कड़े नियमों से मनुष्य कर्मठ बनता है?



## रामचंद्र शुक्ल

(जन्म सन् १८८४ ई० - मृत्यु - सन् १९४० ई.)

आचार्य रामचंद्र शुक्ल का जन्म सन् १८८४ ई. में उत्तर प्रदेश के बस्ती जिले के अगोना गाँव में हुआ। उनके पिता पं. चंद्रबली शुक्ल अंग्रेजी और उर्दू के समर्थक थे। इसलिए शुक्ल जी की आरंभिक शिक्षा उर्दू-फारसी से हुई। परंतु हिन्दी के प्रति असीम अनुराग के कारण वे हिन्दी की कक्षा में जाकर हिन्दी पढ़ते थे। फिर पिताजी के साथ वे मिर्जापुर आए। वहीं से हाईस्कूल की परीक्षा पास की। इलाहाबाद से बी.ए. की डिग्री हासिल की। स्वाध्याय से साहित्य, मनोविज्ञान, इतिहास आदि का मनोयोग पूर्वक अध्ययन किया। हिन्दी, संस्कृत, उर्दू एवं अंग्रेजी साहित्य का डटकर अध्ययन किया। पंडित केदारनाथ पाठक और बदरीनारायण 'प्रेमघन' जैसे मूर्धन्य साहित्यकारों के संपर्क में आकर साहित्य-लेखन की ओर प्रेरित हुए। आगे चलकर वारणासी की 'नागरी प्रचारिणी सभा' में सहायक के पद पर कार्य किया। 'हिन्दी शब्द सागर' 'नागरी प्रचारिणी पत्रिका' का कुशल संपादन किया। महामना मदन मोहन मालवीय ने उन्हें हिन्दू विश्वविद्यालय में हिन्दी के अध्यापक के पद पर नियुक्त किया। सन् १९३७ ई. में वे वहीं पर हिन्दी विभागाध्यक्ष बने।

आचार्य शुक्ल जी की प्रतिभा बहुमुखी और विलक्षण थी। एक कुशल संपादक के साथ-साथ वे हिन्दी के सर्वोत्कृष्ट आलोचक, निबंधकार और उच्चकोटि के इतिहासकार हैं। उन्होंने मनोवैज्ञानिक और समीक्षात्मक निबंध लिखे। 'चिंतामणि' (भाग-१ और २) में संकलित निबंधों के जरिए नए विचार, स्वस्थ चिंतन, नई अनुभूति और प्रौढ़ भाषा-शैली पाठकों के सामने प्रस्तुत हुई। उन्होंने व्याख्यात्मक और सूत्रात्मक शैली अपनाई। उनके निबंधों में व्यक्ति और विषय का ऐसा सफल समन्वय हुआ है कि इस बात का

निर्णय करना कठिन हो जाता है कि उन्हें व्यक्ति प्रधान कहें या विषय प्रधान। शुक्लजी भारतीय और पाश्चात्य साहित्य शास्त्र के विद्वान थे। सैद्धांतिक और व्यावहारिक आलोचना में उनका महत्वपूर्ण योगदान रहा। उन्होंने रस को मनोवैज्ञानिक आधार प्रदान किया।

### प्रमुख रचनाएँ:

- इतिहास : हिन्दी साहित्य का इतिहास  
निबंध : चिन्ता मणि (भाग १ और २)  
आलोचना : त्रिवेणी, महाकवि सूरदास, गोस्वामी तुलसीदास, रस मीमांसा,  
काव्य में रहस्यवाद  
संपादन : हिन्दी शब्दसागर, जायसी ग्रंथावली, तुलसी ग्रंथावली,  
भ्रमरगीतसार, नागरी प्रचारिणी पत्रिका।

## उत्साह

दुःख के वर्ग में जो स्थान भय का है, वही स्थान आनन्द-वर्ग में उत्साह का है। भय में हम प्रस्तुत कठिन स्थिति के नियम से विशेष रूप में दुखी और कभी कभी उस स्थिति से अपने को दूर रखने के लिए प्रयत्नवान् भी होते हैं। उत्साह में हम आनेवाली कठिन स्थिति के भीतर साहस के अवसर के निश्चय द्वारा प्रस्तुत कर्म-सुख की उमंग से अवश्य प्रयत्नवान् होते हैं। उत्साह में कष्ट या हानि सहने की दृढ़ता के साथ-साथ कर्म में प्रवृत्त हाने के आनन्द का योग रहता है। साहसपूर्ण आनन्द की उमंग का नाम उत्साह है। कर्म-सौंदर्य के उपासक ही सच्चे उत्साही कहलाते हैं।

जिन कर्मों में किसी प्रकार का कष्ट या हानि सहने का साहस अपेक्षित होता है उन सबके प्रति उत्कंठापूर्ण आनन्द उत्साह के अन्तर्गत लिया जाता है। कष्ट या हानि के भेद के अनुसार उत्साह के भेद हो जाते हैं। साहित्य-मीमांसकों ने इसी दृष्टि से युद्ध-वीर, दान-वीर, दयावीर इत्यादि भेद किये हैं। इनमें सबसे प्राचीन और प्रधान युद्धवीरता है जिसमें आघात, पीड़ा क्या, मृत्यु तक की परवाह नहीं रहती। इसप्रकार की वीरता का प्रयोजन अत्यन्त प्राचीन काल से पड़ता चला आ रहा है, जिसमें साहस और प्रयत्न दोनों चरम उत्कर्ष पर पहुँचते हैं। केवल कष्ट या पीड़ा सहन करने के साहस में ही उत्साह का स्वरूप स्फुरित नहीं होता। उसके साथ आनन्दपूर्ण प्रयत्न या उसकी उत्कंठा का योग चाहिए। बिना बेहोश हुए भारी फोड़ा चिराने को तैयार होना साहस कहा जाएगा, पर उत्साह नहीं। इस प्रकार चुपचाप बिना हाथ-पैर हिलाये घोर प्रहार सहने के लिए तैयार रहना साहस और कठिन से कठिन प्रहार सहकर भी जगह से न हटना धीरता कही जायगी। ऐसे साहस और धीरता को उत्साह के अन्तर्गत तभी ले सकते हैं जब कि साहसी या धीर उस काम को आनन्द के साथ करता चला जाएगा जिसके कारण उसे इतने प्रहार सहने पड़ते हैं। सारांश यह कि आनन्दपूर्ण प्रयत्न या उसकी उत्कंठा में ही उत्साह का दर्शन होता है, केवल कष्ट सहने के निश्चेष्ट साहस में नहीं। धृति और साहस दोनों का उत्साह के बीच संचरण होता है।

दान-वीर में अर्थ-त्याग का साहस अर्थात् उसके कारण होने वाले कष्ट या कठिनता को सहने की क्षमता अन्तर्निहित रहती है। दान-वीरता तभी कही जायगी जब दान के कारण दानी को अपने जीवन-निर्वाह में किसी प्रकार का कष्ट या कठिनता दिखाई देगी। इस कष्ट या कठिनता की मात्रा या सम्भावना जितनी ही अधिक होगी, दानवीरता उतनी ही ऊँची समझी जाएगी। परन्तु इस अर्थ-त्याग के साहस के साथ ही जब तक पूर्ण तत्परता और आनन्द के चिह्न न दिखाई पड़ेंगे तब तक उत्साह का स्वरूप न खड़ा होगा।

युद्ध के अतिरिक्त संसार में और भी ऐसे विकट काम होते हैं जिनमें घोर शारीरिक कष्ट सहना पड़ता है और प्राण-हानि तक की संभावना रहती है। अनुसन्धान के लिए, तुषार-मण्डित अभ्रभेदी अगम्य पर्वतों की चढ़ाई, ध्रुवदेश या सहारा के रेगिस्तान का सफर, क्रूर, बर्बर जातियों के बीच अज्ञात घोर जंगलों में प्रवेश इत्यादि भी पूरी-वीरता और पराक्रम के कर्म हैं। इनमें जिस आनन्दपूर्ण तत्परता के साथ लोग प्रवृत्त हुए हैं, वह भी उत्साह ही है।

मनुष्य शारीरिक कष्ट से ही पीछे हटने वाला प्राणी नहीं है। मानसिक क्लेश की संभावना से भी बहुत से कर्मों की ओर प्रवृत्त होने का साहस उसे नहीं होता। जिन बातों से समाज के बीच उपहास, निन्दा, अपमान इत्यादि का भय रहता है उन्हें अच्छी और कल्याणकारिणी समझते हुए भी बहुत से लोग उनसे दूर रहते हैं। प्रत्यक्ष हानि देखते हुए भी कुछ प्रथाओं का अनुसरण बड़े-बड़े समझदार तक इसलिये करते चलते हैं कि उनके त्याग से वे बुरे कहे जायेंगे, लोगों में उनका वैसा आदर-सम्मान न रह जायगा। उनके लिये मान-ग्लानि का कष्ट सब शारीरिक क्लेशों से बढ़कर होता है। जो लोग मान-अपमान का कुछ भी ध्यान न करके, निन्दा-स्तुति की कुछ भी परवाह न करके किसी प्रचलित प्रथा के विरुद्ध पूर्ण तत्परता और प्रसन्नता के साथ कार्य करते जाते हैं वे एक ओर तो उत्साही और वीर कहलाते हैं; दूसरी ओर भारी बेहया।

किसी शुभ परिणाम पर दृष्टि रखकर निन्दा-स्तुति, मान-अपमान आदि की कुछ परवाह न करके प्रचलित प्रथाओं का उल्लंघन करने वाले वीर या उत्साही कहलाते हैं। यह देखकर बहुत से लोग केवल इस विरुद्ध के लोभ में ही अपनी उछल-कूद दिखाया करते हैं। वे केवल उत्साही या साहसी कहे जाने के लिये ही चली आती हुई प्रथाओं को तोड़ने की धूम मचाया करते हैं। शुभ या अशुभ परिणाम से उनसे कोई मतलब नहीं; उनकी ओर उनका ध्यान लेश-मात्र नहीं रहता। जिस पक्ष के बीच को सुख्याति का वे अधिक महत्व समझते हैं उसकी वाहवाही से उत्पन्न आनन्द की चाह में वे दूसरे पक्ष के बीच की निन्दा या अपमान की कुछ परवाह नहीं करते। ऐसे अच्छे लोगों के साहस या उत्साह की अपेक्षा उन लोगों का उत्साह या साहस-भाव की दृष्टि से-वही अधिक मूल्यवान है जो किसी प्राचीन प्रथा की-चाहे वह वास्तव में हानिकारिणी ही हो-उपयोगिता का सच्चा विश्वास रखते हुए प्रथा तोड़नेवालों की निन्दा, उपहास, अपमान आदि सहा करते हैं।

उत्साह की गिनती अच्छे गुणों में होती है। किसी भाव के अच्छे या बुरे होने का निश्चय अधिकतर उसकी प्रवृत्ति के शुभ या अशुभ परिणाम के विचार से होता है। वही उत्साह जो कर्तव्य कर्मों के प्रति इतना सुन्दर दिखाई पड़ता है अकर्तव्य कर्मों की ओर होने पर वैसा श्लाघ्य नहीं प्रतीत होता। आत्मरक्षा, पररक्षा, देश-रक्षा आदि के निमित्त साहस की जो उमंग देखी जाती ही उसके सौंदर्य को परपीड़न, डकैती आदि कर्मों का साहस कभी नहीं पहुँच सकता। यह बात होते हुए भी विशुद्ध उत्साह या साहस की प्रशंसा थोड़ी-बहुत होती ही है। अत्याचारियों या डाकुओं के शौर्य और साहस की कथाएँ भी लोग तारीफ करते हुए सुनते हैं।

अब तक उत्साह का प्रधान रूप ही हमारे सामने रहा, जिसमें साहस का पूरा योग रहता है। पर कर्ममात्र के सम्पादन में जो तत्परतापूर्ण आनन्द देखा जाता है वह भी उत्साह ही कहा जाता है। सब कामों में साहस अपेक्षित नहीं होता, पर थोड़ा-बहुत आराम विश्राम सुभीते इत्यादि का त्याग सबमें

करना पड़ता है, और कुछ नहीं तो उठकर बैठना, खड़ा होना या दस-पाँच कदम लेना ही पड़ता है। जबतक आनन्द का लगाव किसी क्रिया, व्यापार या उसकी भावना के साथ नहीं दिखाई पड़ता तब तक उसे उत्साह की संज्ञा प्राप्त नहीं होती। यदि किसी प्रिय मित्र के आने का समचार पाकर हम चुपचाप ज्यों के त्यों आनन्दित होकर बैठे रह जायें या थोड़ा हँस भी दें तो यह हमारा उत्साह नहीं कहा जाएगा। हमारा उत्साह तभी कहा जायगा जब हम अपने मित्र का आगमन सुनते ही उठ खड़े होंगे, उससे मिलने के लिए चल पड़ेंगे और उसके ठहरने आदि के प्रबंध में प्रसन्नमुख इधर-उधर आते-जाते दिखाई देंगे। प्रयत्न और कर्मसंकल्प उत्साह नामक आनन्द के नित्य लक्षण हैं।

प्रत्येक कर्म में थोड़ा या बहुत बुद्धि का योग भी रहता है। कुछ कर्मों में तो बुद्धि की तत्परता और शरीर की तत्परता दोनों बराबर साथ-साथ चलती हैं। उत्साह की उमंग जिस प्रकार हाथ-पैर चलवाती है उसी प्रकार बुद्धि से भी काम कराती है। ऐसे उत्साह वाले वीर को कर्मवीर कहना चाहिए या बुद्धिवीर—यह प्रश्न ‘मुद्राराक्षस’ नाटक बहुत अच्छी तरह हमारे सामने लाता है। चाणक्य और राक्षस के बीच जो चोटें चली हैं वे नीति की हैं—शास्त्र की नहीं। अतः विचार करने की बात यह है कि उत्साह की अभिव्यक्ति बुद्धि-व्यापार के अवसर पर होती है अथवा बुद्धि द्वारा निश्चित उद्योग में तत्पर होने की दशा में। हमारे देखने में तो उद्योग की तत्परता में ही उत्साह की अभिव्यक्ति होती है; अतः कर्मवीर ही कहना ठीक है।

बुद्धिवीर के दृष्टान्त कभी-कभी हमारे पुराने ढंग के शास्त्रार्थों में देखने को मिल जाते हैं। जिस समय किसी भारी शास्त्रार्थी पण्डित से भिड़ने के लिये कोई विद्यार्थी आनन्द के साथ सभा में आगे आता है उस समय उसके बुद्धि-साहस की प्रशंसा अवश्य होती है। वह जीते या हारे, बुद्धि-वीर समझा ही जाता है। इस जमाने में वीरता का प्रसंग उठाकर वाग्वीर का उल्लेख यदि न होगा तो बात अधूरी ही समझी जायगी। ये वाग्वीर आज



कल, बड़ी-बड़ी सभाओं के मंचों पर से लेकर स्त्रियों के उठाये हुए, पारिवारिक प्रपंचों तक में पाये जाते हैं और काफी तादाद में।

थोड़ा यह देखना चाहिए कि उत्साह में ध्यान किस पर रहता है कर्म पर, उसके फल पर अथवा व्यक्ति या वस्तु पर। हमारे विचार में उत्साही वीर का ध्यान आदि से अन्त तक पूरी कर्म-श्रृंखला पर से होता हुआ उसकी सफलता-रूपी समाप्ति तक फैला रहता है। इसी ध्यान से जो आनन्द की तरंगें उठती हैं वह ही सारे प्रयत्न को आनन्दमय कर देती हैं। युद्ध-वीर में विजेतव्य को आलम्बन कहा गया है उसका अभिप्राय यही है कि विजेतव्य कर्म-प्रेरक के रूप में वीर के ध्यान में स्थिर रहता है, वह कर्म के स्वरूप का भी निर्धारण करता है। पर आनन्द और साहस के मिश्रित भाव का सीधा लगाव उसके साथ नहीं रहता। सच पूछिए तो वीर के उत्साह का विषय विजय-विधेयक कर्म या युद्ध ही रहता है। दानवीर और धर्मवीर पर विचार करने से यह बात स्पष्ट हो जाती है। दान दयावश, श्रद्धावश या कीर्तिलोभवश दिया जाता है। यदि श्रद्धावश दान दिया जा रहा है तो दानपात्र वास्तव में श्रद्धा का और यदि दयावश दिया जा रहा है तो पीड़ित यथार्थ में दया का विषय या आलम्बन ठहरता है। अतः उस श्रद्धा या दया की प्रेरणा से जिस कठिन या दुस्साध्य कर्म की प्रवृत्ति होती है उसी की ओर उत्साही का साहसपूर्ण आनन्द उन्मुख कहा जा सकता है। अतः और रसों में आलम्बन का स्वरूप जैसा निर्दिष्ट रहता है वैसा वीर रस में नहीं। बात यह है कि उत्साह एक यौगिक भाव है जिसमें साहस और आनन्द का मेल रहता है।

जिस व्यक्ति या वस्तु पर, प्रभाव डालने के लिये वीरता दिखाई जाती है उसकी ओर उन्मुख कर्म होता है और कर्म की ओर उन्मुख उत्साह का सीधा लगाव नहीं होता। समुद्र लौंघने के लिये जिस उत्साह के साथ हनुमान् उठे हैं उसका कारण समुद्र नहीं-समुद्र लौंघने का विकट कर्म है। कर्म-भावना ही उत्साह उत्पन्न करती है, वस्तु या व्यक्ति की भावना नहीं।

किसी कर्म के सम्बन्ध में जहाँ आनन्दपूर्ण तत्परता दिखाई पड़ी कि

हम उसे उत्साह कह देते हैं। कर्म के अनुष्ठान में जो आनन्द होता है उसका विधान तीन रूपों में दिखाई पड़ता है—

१. कर्म-भावना से उत्पन्न,
२. फल-भावना से उत्पन्न, और
३. आगन्तुक अर्थात् विषयान्तर से प्राप्त।

इनमें कर्म-भावना-प्रसूत आनन्द को ही सच्चे वीरों का आनन्द समझना चाहिए जिसमें साहस का योग प्रायः बहुत अधिक रहा करता है। सच्चा वीर जिस समय मैदान में उतरता है उसी समय उसमें उतना आनन्द भरा रहता है जितना औरों को विजय या सफलता प्राप्त करने पर होता है। उसके सामने कर्म और फल के बीच या तो कोई अन्तर होता ही नहीं या बहुत सिमटा हुआ होता है। इसी से कर्म की ओर वह उसी झोंक से लपकता है। जिस झोंक से साधारण लोग फल की ओर लपका करते हैं। इसी कर्म-प्रवर्तक आनन्द की मात्रा के हिसाब से शौर्य और साहस का स्फुरण होता है।

फल की भावना से उत्पन्न आनन्द भी साधक को कर्मों की ओर हर्ष और तत्परता के साथ प्रवृत्त करता है। पर फल का लोभ जहाँ प्रधान रहता है वहाँ कर्म विषयक आनन्द उसी फल की भावना की तीव्रता और मन्दता पर अवलम्बित रहता है। उद्योग के प्रवाह के बीच जब-जब फल की भावना मन्द पड़ती है—उसकी आशा कुछ धुँधली पड़ जाती है, तब तब आनन्द की उमंग गिर जाती है और उसी के साथ उद्योग में भी शिथिलता आ जाती है। पर कर्म-भावना-प्रधान उत्साह बराबर एक रस रहता है। फलासक्त उत्साही असफल होने पर खिन्न और दुःखी होता है, पर कर्मासक्त उत्साही केवल कर्मानुष्ठान के पूर्व की अवस्था में हो जाता है। अतः हम कह सकते हैं कि कर्म-भावना-प्रधान उत्साह ही सच्चा उत्साह है। फल-भावना-प्रधान उत्साह तो लोभ ही का एक प्रच्छन्न रूप है।

उत्साह वास्तव में कर्म और फल की मिली-जुली अनुभूति है जिसकी प्रेरणा से तत्परता आती है। यदि फल दूर ही पर दिखाई पड़े, उसकी भावना के साथ ही उसका लेशमात्र भी कर्म या प्रयत्न के साथ लगाव न मालूम हो, तो हमारे हाथ- पाँव कभी न उठें और उस फल के साथ हमारा संयोग ही न हो। इससे कर्म-श्रृंखला की पहली कड़ी पकड़ते ही फल के आनन्द की भी कुछ अनुभूति होने लगती है। यदि हमें यह निश्चय हो जाय कि अमुक स्थान पर जाने से हमें किसी प्रिय व्यक्ति का दर्शन होगा तो उस निश्चय के प्रभाव से हमारी यात्रा भी अत्यंत प्रिय हो जायगी। हम चल पड़ेंगे और हमारे अंगों की प्रत्येक गति में प्रफुल्लता दिखाई देगी। यही प्रफुल्लता कठिन से कठिन कर्मों के साधन में भी देखी जाती है। वे कर्म भी प्रिय हो जाते हैं और अच्छे लगने लगते हैं। जब तक फल तक पहुँचानेवाला कर्म-पथ अच्छा न लगेगा तब तक केवल फल का अच्छा लगना कुछ नहीं। फल की इच्छा मात्र हृदय में रखकर जो प्रयत्न किया जाएगा वह अभावमय और आनन्द-शून्य होने के कारण निर्जीव सा होगा।

कर्म-रूचि-शून्य प्रयत्न में कभी - कभी इतनी उतावली और आकुलता होती है कि मनुष्य साधना के उत्तरोत्तर काम का निर्वाह न कर सकने के कारण बीच ही में चुक जाता है। मान लीजिए कि एक उँचे पर्वत के शिखर पर विचरते हुए किसी व्यक्ति को नीचे बहुत दूर तक गई हुई सीढियाँ दिखाई दें और यह मालूम हुआ कि नीचे उतरने पर सोने का ढेर मिलेगा। यदि उसमें इतनी सजीवता है, कि उक्त सूचना के साथ ही वह उस स्वर्ण-राशि के साथ एक प्रकार के मानसिक संयोग का अनुभव करने लगा तथा उसका चित्त प्रफुल्ल और अंग सचेष्ट हो गये, तो उसे एक-एक सीढ़ी स्वर्णमयी दिखाई देगी, एक-एक सीढ़ी उतरने में उसे आनन्द मिलता जायगा, एक-एक क्षण उसे सुख से बीतता हुआ जान पड़ेगा और वह प्रसन्नता के साथ उस स्वर्ण-राशि तक पहुँचेगा। इस प्रकार उसके प्रयत्न-काल को भी फल-प्राप्ति काल के अन्तर्गत ही समझना चाहिए। इसके विरुद्ध यदि उसका हृदय

दुर्बल होगा और उसमें इच्छा मात्र ही उत्पन्न होकर रह जायगी; तो अभाव के बाद के कारण उसके चित्त में यही होगा कि कैसे झट से नीचे पहुँच जायें। उसे एक-एक सीढ़ी उतरना बुरा मालूम होगा और आश्चर्य नहीं कि वह या तो हारकर बैठ जाय या लड़खड़ाकर मुँह के बल गिर पड़े।

फल की विशेष आसक्ति से कर्म के लाघव की वासना उत्पन्न होती है। चित्त में यही आता है कि कर्म बहुत कम या बहुत सरल करना पड़े और फल बहुत सा मिल जाय। श्रीकृष्ण ने कर्म-मार्ग से फलासक्ति की प्रबलता हटाने का बहुत ही स्पष्ट उपदेश दिया; पर उनके समझाने पर भी भारतवासी इस वासना से ग्रस्त होकर कर्म से तो उदासीन हो बैठे और फल के इतने पीछे पड़े कि गरमी में ब्राह्मण को एक पेठा देकर पुत्र की आशा करने लगे; चार आने रोज का अनुष्ठान कराके व्यापार में लाभ, शत्रु पर विजय, रोग से मुक्ति; धन-धान्य की वृद्धि तथा और भी जाने क्या-क्या चाहने लगे। आसक्ति प्रस्तुत या उपस्थित वस्तु में ही ठीक कही जा सकती है। कर्म सामने उपस्थित रहता है; इससे आसक्ति उसी में चाहिए; फल दूर रहता है, इससे उसकी ओर कर्म का लक्ष्य काफी है। जिस आनन्द से कर्म की उत्तेजना होती है और जो आनन्द कर्म करते समय तक बराबर चला चलता है उसी काम नाम उत्साह है।

कर्म के मार्ग पर आनन्दपूर्वक चलता हुआ उत्साही मनुष्य यदि अंतिम फल तक न भी पहुँचे तो भी उसकी दशा, कर्म न करनेवाले की अपेक्षा अधिकतर अवस्थाओं में अच्छी रहेगी; क्योंकि एक तो कर्मकाल में उसका जो जीवन बीता, वह संतोष या आनन्द में बीता, उसके उपरान्त फल की अप्राप्ति पर भी उसे यह पछतावा न रहा कि मैंने प्रयत्न नहीं किया। फल पहले से कोई बना-बनाया पदार्थ नहीं होता, अनुकूल प्रयत्न-कर्म के अनुसार, उसके एक-एक अंग की योजना होती है। बुद्धि द्वारा पूर्ण रूप से निश्चित की हुई व्यापार-परम्परा का नाम ही प्रयत्न है। किसी मनुष्य के घर का कोई प्राणी बीमार है। वह वैद्यों के यहाँ से जब तक औषधि ला-लाकर रोगी को

देता जाता है और इधर-उधर दौड़-धूप करता जाता है तब तक उसके चित्त में जो सन्तोष रहता है-प्रत्येक नये उपचार के साथ जो आनन्द का उन्मेष होता रहता है-यह उसे कदापि न प्राप्त होता, यदि वह रोता हुआ बैठा रहता। प्रयत्न की अवस्था में उसके जीवन का जितना अंश संतोष, आशा और उत्साह में बीता, अप्रयत्न की दशा में उतना ही अंश केवल शोक और दुःख में कटता। इसके अतिरिक्त रोगी के न अच्छे होने की दशा में भी वह आत्मग्लानि के उस कठोर दुःख से बचा रहेगा जो उसे जीवन भर यह सोच-सोचकर होता कि मैंने पूरा प्रयत्न नहीं किया।

कर्म में आनन्द अनुभव करनेवालों ही का नाम कर्मण्य है। धर्म और उदारता के उच्च कर्मों के विधान में ही एक ऐसा दिव्य आनन्द भरा रहता है कि कर्ता को वे कर्म ही फल-स्वरूप लगते हैं। अत्याचार का दमन और क्लेश का शमन करते हुए चित्त में जो उल्लास और तुष्टि होती है वही लोकोपकारी कर्म-वीर का सच्चा सुख है। उसके लिए सुख तब तक के लिए रूका नहीं रहता जब तक कि फल प्राप्त न हो जाय; बल्कि उसी समय से थोड़ा-थोड़ा करके मिलने लगता है जब से वह कर्म की ओर हाथ बढ़ाता है।

कभी-कभी आनन्द का मूल विषय तो कुछ और रहता है, पर उस आनन्द के कारण एक ऐसी स्फूर्ति उत्पन्न होती है जो बहुत से कामों की ओर हर्ष के साथ अग्रसर करती है। इसी प्रसन्नता और तत्परता को देख लोग कहते हैं कि वे काम बड़े उत्साह से किये जा रहे हैं। यदि किसी मनुष्य को बहुत-सा लाभ हो जाता है या उसकी कोई बड़ी भारी कामना पूर्ण हो जाती है तो जो काम उसके सामने आते हैं उन सबको वह बड़े हर्ष और तत्परता के साथ करता है। उसके इस हर्ष और तत्परता को भी लोग उत्साह ही कहते हैं। इसी प्रकार किसी उत्तम फल या सुखप्राप्ति की आशा या निश्चय से उत्पन्न आनन्द, फलोन्मुख प्रयत्नों के अतिरिक्त और दूसरे व्यापारों के साथ संलग्न होकर, उत्साह के रूप में दिखाई पड़ता है। यदि हम किसी ऐसे उद्योग में लगे हैं जिससे आगे चलकर हमें बहुत लाभ या सुख की आशा है तो हम उस

उद्योग को तो उत्साह के साथ करते हैं अन्य कार्यों में भी प्रायः अपना उत्साह दिखा देते हैं।

वह बात उत्साह में ही नहीं, अन्य मनोविकारों में भी बराबर पाई जाती है। यदि हम किसी बात पर क्रुद्ध बैठे हैं और इसी बीच में कोई दूसरा आकर हमसे कोई बात सीधी तरह भी पूछता है तो भी हम उस पर झुंझला उठते हैं। इस झुंझलाहट का न तो कोई निर्दिष्ट कारण होता है, न उद्देश्य। यह केवल क्रोध की स्थिति के व्याघात को रोकने की क्रिया है, क्रोध की रक्षा का प्रयत्न है। इस झुंझलाहट द्वारा हम यह प्रकट करते हैं कि हम क्रोध में हैं और क्रोध ही में रहना चाहते हैं। क्रोध को बनाये रखने के लिए हम उन बातों से भी क्रोध ही संचित करते हैं जिनसे दूसरी अवस्था में हम विपरीत भाव प्राप्त करते। इसी प्रकार यदि हमारा चित्त किसी विषय में उत्साहित रहता है तो हम अन्य विषयों में भी अपना उत्साह दिखा देते हैं। यदि हमारा मन बढ़ा हुआ रहता है तो हम बहुत से काम प्रसन्नतापूर्वक करने के लिए तैयार हो जाते हैं। इसी बात का विचार करके सलाम-साधक लोग हाकिमों से मुलाकात करने से पहले अर्दलियों से उनका मिजाज पूछ लिया करते हैं।

**शब्दार्थः** प्रयत्नवान – चेष्टित, प्रयासरत; साहित्य मीमांसक- साहित्य समीक्षक या विवेचक; परवाह-खातिर; श्लाघ्य-प्रशंसनीय, : प्रहार – चोट, आघात; धीरता-धैर्य; निश्चेष्ट-निष्क्रिय, चेतनाशून्य; धृति-धैर्य; सहनशक्ति; विकट-भयंकर; अनुसंधान-खोज, तलाश; तुषार मंडित-बर्फ से ढका; अगम्य-जहाँ न जाया जा सके; रेगिस्तान-मरूभूमि; सफर-यात्रा, भ्रमण; ध्रुवदेश-पृथ्वी के उत्तरी और दक्षिणी सिरे जिन के बीचोंबीच अक्षरेखा की स्थिति पराक्रम-वीरता, सामर्थ्य; क्रूर-निष्ठुर; क्लेश-पीड़ा, दुःख; ग्लानि-पछतावा, अनुशोचना; स्तुति-प्रशंसा, वाहवाही; उद्योग-कर्म व्यापार; वाग्वीर-बातों में पटु; कर्म श्रृंखला-कर्म व्यापार; विजेतव्य-जिस पर विजय प्राप्त की जाएगी; आलंबन-किसी भाव या विषय के उद्रेक का आधार या कारण; दुस्साध्य कर्म-अत्यंत कष्टसाध्य काम; मुद्राराक्षस – विशाखादत्त का लिखा संस्कृत नाटक; यौगिक भाव-मिश्रित भाव; लगाव-संबंध; अवलंबित-आधारित, आश्रित; धुँधली-अस्पष्ट; शिथिलता-निष्क्रियता; प्रफुल्लता-खुशी, आनंद; आसक्ति-लगाव; पछतावा-खेद, पश्चाताप; दौड़धुप-परिश्रम; उन्मेष-उद्रेक, आविर्भाव; कर्मण्य- कर्मठ, कर्म कुशल; शमन-संयम; तुष्टि-संतोष; स्फूर्ति-फूर्तिला, चंचल; फलोन्मुख प्रयत्न-फल प्राप्ति के लिए किया गया प्रयास; मनोविकार-मनोभाव; अर्दली-चपरासी; हाकिम-अधिकारी; मुलाकात-साक्षात, भेंट, मिजाज-मनोभाव, स्वभाव

### पाठ के बारे में:

प्रस्तुत पाठ 'उत्साह' शुक्लजी की 'चिंतामणि, भाग-१ पुस्तक से लिया गया है। यह एक मनोविकार संबंधी निबंध है। शुक्ल जी ने मानव मन के इस स्थायी भाव को बड़ी सूक्ष्मता और स्पष्टता से समझाया है। प्रेम, क्रोध, भय, घृणा, हर्ष, दुःख आदि स्थायी भावों की भाँति उत्साह भी मानव मन का एक स्थायी भाव है। इसका स्थान आनंद वर्ग में आता है। उत्साह में जीवन में आनेवाली कठिनाई को कर्म सुख और साहस से मुकाबला किया जाता है। साथ ही इसमें कष्ट या हानि सहने की दृढ़ता भी होती है। साहसपूर्ण

आनंद की उमंग का नाम उत्साह है। केवल पीड़ा सहलेने को उत्साह नहीं कहा जाता, आनंदपूर्ण वीरता ही उत्साह कहलाती है। कर्म-सौंदर्य के उपासक ही सच्चे उत्साही होते हैं। कष्ट या हानि के भेद के अनुसार उत्साह के कई भेद होते हैं; जैसे - युद्धवीर, दानवीर, दयावीर आदि। इनमें से युद्धवीरता प्राचीन और प्रधान मानी जाती है क्योंकि इसमें पीड़ा ही नहीं, मृत्यु तक की परवाह नहीं होती।

युद्ध के अलावा अनुसंधान के लिए बर्फ मंडित अगम्य पर्वतों की चढ़ाई, ध्रुवदेश या सहारा जैसे रेगिस्तान का सफर आदि कामों में यदि आनंदपूर्ण साहस और तत्परता पाई जाय तो उसे भी उत्साह कहा जाएगा। उत्साह अच्छे गुणों में गिना जाता है क्योंकि इसका उपयोग कर्तव्य कर्मों के प्रति तथा शुभ या अशुभ परिणाम के विचार से होता है। आत्मरक्षा, पररक्षा, राष्ट्ररक्षा आदि कर्मों में जिस साहस की उमंग पाई जाती है, वह परपीड़न, डकैती आदि कर्मों में नहीं। उत्साहपूर्ण कर्म में बुद्धि का भी योग रहता है जिससे हम शुभ और अशुभ का विचार कर सके। सवाल यह उठता है कि उत्साह में उत्साही व्यक्ति का ध्यान किस पर केंद्रित होता है? कर्म पर, उसके फल पर अथवा व्यक्ति या वस्तु पर? निबंधकार के विचार से उत्साही व्यक्ति का ध्यान आरंभ से अंत तक पूरी कर्म-श्रृंखला ये होता हुआ फल प्राप्ति तक बना रहता है। कर्म भावना ही उत्साह उत्पन्न करती है, वस्तु या व्यक्ति की भावना नहीं। कर्म के अनुष्ठान में होनेवाले आनंद का विधान तीन रूपों में दिखाई देता है यथा- कर्म भावना से उत्पन्न आनंद, फल भावना से उत्पन्न आनंद और आगन्तुक अर्थात् विषयान्तर से प्राप्त आनंद। इनमें से कर्म भावना से प्रसूत आनंद ही सच्चे वीरों का आनंद हुआ करता है क्योंकि कर्मवीर को कर्म करते रहने का आनंद प्राप्त होता है, उसके कर्म और फल में कोई अन्तर नहीं होता या फिर बहुत कम होता है। सच में कर्म और फल की मिली जुली अनुभूति ही उत्साह है। परंतु यदि उत्साह में फल की विशेष आसक्ति हो तो फिर उससे कर्म के लाघव की वासना उत्पन्न होती है। कम



कर्म से अधिक फल प्राप्ति की इच्छा जाग्रत होती है जो सही नहीं है। इसलिए श्रीकृष्ण ने यह स्पष्ट उपदेश दिया: 'कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन'। परंतु उनके समझाने पर भी भारतवासी इस वासना से ग्रस्त होकर कर्म से उदासीन होते गए और फल के पीछे पड़ गए। यहाँ तक कि गरमी में ब्राह्मण को एक पेठा देकर पुत्र की आशा करने लगे तथा चार आने का अनुष्ठान करके व्यापार में लाभ, शत्रु पर विजय, रोग से मुक्ति आदि चाहने लगे। कर्म में आनंद अनुभव करने वालों का नाम कर्मण्य होता है। धर्म और उदारता में, अत्याचार के दमन और क्लेश के शमन में मन में जो दिव्य आनंद होता है, वह कर्मवीर का सच्चा सुख होता है।

## प्रश्न-अभ्यास

सही विकल्प चुनिए:

(अंक-१)

- (क) कैसे उपासक सच्चे उत्साही कहलाते हैं?  
(भक्ति-सौंदर्य के उपासक, कर्म-सौंदर्य के उपासक, प्रेम-सौंदर्य के उपासक, धन-सौंदर्य के उपासक)
- (ख) बिना बेहोश हुए भारी फोड़ा चिराने को तैयार होने को क्या कहा जाएगा?  
(धैर्य, शक्ति, बल, साहस)
- (ग) धृति और साहस दोनों का संचरण किसके बीच हुआ करता है?  
(प्रेम, धर्म, उत्साह, प्रशंसा)
- (घ) कौन शारीरिक कष्ट से पीछे हटने वाला प्राणी नहीं है?  
(बंदर, कुत्ता, मनुष्य, बिल्ली)
- (ङ) उत्साही वीर का ध्यान मूलतः किस पर रहता है?  
(फल, वस्तु, व्यक्ति, कर्म)
- (च) किसने कर्म मार्ग से फलासक्ति की प्रबलता हटाने का स्पष्ट उपदेश दिया?  
(अर्जुन, युधिष्ठिर, श्रीकृष्ण, कबीर)

(छ) किसने समुद्र लाँघने का विकट कर्म संपादित किया था ?  
(रावण, हनुमान, मेघनाद, अंगद)

२. एक शब्द या एक वाक्य में उत्तर दीजिए: (अंक-१)

- (क) कौन सच्चे उत्साही कहलाते हैं ?  
(ख) कैसी उमंग का नाम उत्साह है ?  
(ग) युद्धवीरता की क्या विशेषता है ?  
(घ) कैसी वीरता सबसे प्राचीन और प्रधान है ?  
(ङ) कठिन से कठिन प्रहार सहकर भी जगह से न हटने को क्या कहा जाता है ?  
(च) उत्साह के दर्शन किससे हुआ करते हैं ?  
(छ) किसके भेद के अनुसार उत्साह के भेद हो जाते हैं ?  
(ज) किसे उत्साह नामक आनंद का नित्य लक्षण कहा जाता है ?  
(झ) विजेतव्य किसके ध्यान में स्थिर रहता है ?  
(ञ) किसे युद्धवीर का आलंबन कहा गया है ?  
(ट) उत्साह में किस-किसका मेल रहता है ?  
(ठ) क्या उत्साह उत्पन्न करता है ?  
(ड) किसे सच्चे वीरों का आनंद समझना चाहिए ?  
(ढ) कर्म और फल की मिलीजुली अनुभूति क्या होती है ?  
(ण) कौन ब्राह्मण को एक पेठा देकर पुत्र की आशा करने लगे ?  
(त) कर्मण्य किसका नाम है ?  
(थ) कौन हाकिमों से मुलाकात करने से पहले अर्दलियों से उनका मिजाज पूछ लिया करते हैं ?

दो-दो वाक्यों में उत्तर दीजिए : (अंक-२)

- (क) किसे उत्साही के साथ-साथ बेहया भी कहा जाता है ?  
(ख) 'मुद्राराक्षस' नाटक हमारे सामने कौन-सा प्रश्न लाता है ?

- (ग) कर्म के अनुष्ठान वाले आनंद का विधान कितने रूपों में दिखाई पड़ता है और वे क्या-क्या हैं?
- (घ) कर्म के मार्ग पर चलता हुआ उत्साही फल न मिलने पर भी क्यों नहीं पछताता?
- (ङ) कर्मवीर के दो लक्षण लिखिए?
- (च) किसे श्रेष्ठ वीर कहा गया है और क्यों?
४. तीन-तीन वाक्यों में उत्तर दीजिए: (अंक-३)
- (क) कर्मवीर किसे कहा जाता है?
- (ख) कर्मवीर और युद्धवीर में क्या अंतर है?
- (ग) वाग्वीर की क्या विशेषता होती है?
- (घ) प्रयत्न क्या है? सोदाहरण समझाइए।
५. दीर्घ उत्तर लिखिए (दस-पंद्रह वाक्यों में) (अंक-५)
- (क) उत्साह क्या है और उसके लक्षण क्या-क्या होते हैं?
- (ख) कर्म अनुष्ठानवाले आनंद का विधान कितने रूपों में हुआ करता है और वे क्या-क्या हैं?
- (ग) कष्ट या हानि के भेद के अनुसार उत्साह के क्या-क्या भेद हैं?
- (घ) 'उत्साह वास्तव में कर्म और फल की मिलीजुली अनुभूति है' - स्पष्ट कीजिए।



# शरद जोशी

(१९३१-१९९१)

शरद जोशी का जन्म मध्य प्रदेश के उज्जैन शहर में २१ मई १९३१ को हुआ। कुछ समय तक वे सरकारी नौकरी में रहे फिर लेखन को ही आजीविका के रूप में अपना लिया। इनकी आरंभिक रचनाओं में कहानियों की संख्या अधिक है। फिर वे व्यंग्य लेखन में उतर आए। व्यंग्य लेख, उपन्यास आदि के लेखन से साहित्य को सशक्त बनाया। इनकी प्रमुख कृतियाँ हैं – लिखी बहाने, जीप पर सवार, इल्लियाँ, परिक्रमा, रहा किनारे बैठ आदि।

शरद जोशी की भाषा अत्यन्त सरल है। अपनी रचनाओं में मुहावरों के साथ-साथ वे हास-परिहास का भी हल्का स्पर्श देते हैं। किसी एक सामाजिक गंभीर विषय को उठाकर वे अत्यन्त रोचकता से अभिव्यक्ति देते हैं।

## तुम कब जाओगे, अतिथि

आज तुम्हारे आगमन के चतुर्थ दिवस पर यह प्रश्न बार-बार मन में घुमड़ रहा है- तुम कब जाओगे, अतिथि ?

तुम जहाँ बैठे निस्संकोच सिगरेट का धुआँ फेंक रहे हो, उसके ठीक सामने एक कैलेंडर है। देख रहे हो ना! इसकी तारीखें अपनी सीमा में नम्रता से फड़फड़ाती रहती हैं। विगत दो दिनों से मैं तुम्हें दिखाकर तारीखें बदल रहा हूँ। तुम जानते हो, अगर तुम्हें हिसाब लगाना आता है कि यह चौथा दिन है, तुम्हारे सतत आतिथ्य का चौथा भारी दिन! पर तुम्हारे जाने की कोई संभावना प्रतीत नहीं होती। लाखों मील लंबी यात्रा करने के बाद वे दोनों एस्ट्रॉनाट्स भी इतने समय चाँद पर नहीं रूके थे, जितने समय तुम एक छोटी-सी यात्रा कर मेरे घर आए हो। तुम अपने भारी चरण-कमलों की छाप मेरी जमीन पर अंकित कर चुके, तुमने एक अंतरंग निजी संबंध मुझसे स्थापित कर लिया, तुमने मेरी आर्थिक सीमाओं की बैजनी चट्टान देख ली; तुम मेरी काफी मिट्टी खोद चुके। अब तुम लौट जाओ, अतिथि! तुम्हारे जाने के लिए यह उच्च समय अर्थात् हाईटाइम है। क्या तुम्हें तुम्हारी पृथ्वी नहीं पुकारती ?

उस दिन जब तुम आए थे, मेरा हृदय किसी अज्ञात आशंका से धड़क उठा था। अंदर-ही-अंदर कहीं मेरा बटुआ काँप गया। उसके बावजूद एक स्नेह-भागी मुसकराहट के साथ मैं तुमसे गले मिला था और मेरी पत्नी ने तुम्हें सादर नमस्ते की थी। तुम्हारे सम्मान में ओ अतिथि, हमने रात के भोजन को एकाएक उच्च-मध्यम वर्ग के डिनर में बदल दिया था। तुम्हें स्मरण होगा कि दो सब्जियों और रायते के अलावा हमने मीठा भी बनाया था। इस सारे उत्साह और लगन के मूल में एक आशा थी। आशा थी कि दूसरे दिन किसी रेल से एक शानदार मेहमाननवाजी की छाप अपने हृदय में ले तुम चले जाओगे। हम तुमसे रूकने के लिए आग्रह करेंगे, मगर तुम नहीं

मानोगे और एक अच्छे अतिथि की तरह चले जाओगे। पर ऐसा नहीं हुआ! दूसरे दिन भी तुम अपनी अतिथि—सुलभ मुसकान लिए घर में ही बने रहे। हमने अपनी पीड़ा पी ली और प्रसन्न बने रहे। स्वागत—सत्कार के जिस उच्च बिंदु पर हम तुम्हें ले जा चुके थे, वहाँ से नीचे उतर हमने फिर दोपहर के भोजन को लंच की गरिमा प्रदान की और रात्रि को तुम्हें सिनेमा दिखाया। हमारे सत्कार का यह आखिरी छोर है, जिससे आगे हम किसी के लिए नहीं बढ़े। इसके तुरंत बाद भावभीनी विदाई का वह भीगा हुआ क्षण आ जाना चाहिए था, जब तुम विदा होते और हम तुम्हें स्टेशन तक छोड़ने जाते। पर तुमने ऐसा नहीं किया।

तीसरे दिन की सुबह तुमने मुझसे कहा, “मैं धोबी को कपड़े देना चाहता हूँ।”

यह आघात अप्रत्याशित था और इसकी चोट मार्मिक थी। तुम्हारे सामीप्य की वेला एकाएक यों रबर की तरह खिंच जाएगी, इसका मुझे अनुमान न था। पहली बार मुझे लगा कि अतिथि सदैव देवता नहीं होता, वह मानव और थोड़े अंशों में राक्षस भी हो सकता है।

“किसी लॉण्डी पर दे देते हैं, जल्दी धुल जाएँगे।” मैंने कहा। मन ही मन एक विश्वास पल रहा था कि तुम्हें जल्दी जाना है।

“कहाँ है लॉण्डी?”

“चलो चलते हैं।” मैंने कहा और अपनी सहज बनियान पर औपचारिक कुर्ता डालने लगा।

“कहाँ जा रहे हैं?” पत्नी ने पूछा।

“इनके कपड़े लॉण्डी पर देने हैं।” मैंने कहा।

मेरी पत्नी की आँखें एकाएक बड़ी—बड़ी हो गईं। आज से कुछ बरस पूर्व उनकी ऐसी आँखें देख मैंने अपने अकेलेपन की यात्रा समाप्त कर

बिस्तर खोल दिया था। पर अब जब वे ही आँखें बड़ी होती हैं तो मन छाटा होने लगता है। वे इस आशंका और भय से बड़ी हुई थीं कि अतिथि अधिक दिनों ठहरेगा। और आशंका निर्मूल नहीं थी, अतिथि! तुम जा नहीं रहे। लॉण्ड्री पर दिए कपड़े धुलकर आ गए और तुम यहीं हो। तुम्हारे भरकम शरीर से सलवटे पड़ी चादर बदली जा चुकी और तुम यहीं हो। तुम्हें देखकर फूट पड़नेवाली मुसकराहट धीरे-धीरे फीकी पड़कर अब लुप्त हो गई है। ठहाकों के रंगीन गुब्बारे, जो कल तक इस कमरे के आकाश में उड़ते थे, अब दिखाई नहीं पड़ते। बातचीत की उछलती हुई गेंद चर्चा के क्षेत्र के सभी कोनों से टपके खाकर फिर सेंटर में आकर चुप पड़ी है। अब इसे न तुम हिला रहे हो, न मैं। कल से मैं उपन्यास पढ़ रहा हूँ और तुम फिल्मी पत्रिका के पन्ने पलट रहे हो। शब्दों का लेन-देन मिट गया और चर्चा के विषय चुक गए। परिवार, बच्चे, नौकरी, फिल्म, राजनीति, रिश्तेदारी, तबादले, पुराने दोस्त, परिवार-नियोजन, महँगाई, साहित्य और यहाँ तक कि आँख मार-मारकर हमने पुरानी प्रेमिकाओं का भी जिक्र कर लिया और अब एक चुप्पी है। सौहार्द अब शनैः-शनैः बोरियत में रूपांतरित हो रहा है। भावनाएँ गालियों का स्वरूप ग्रहण कर रही हैं, पर तुम जा नहीं रहे। किस अदृश्य गोंद से तुम्हारा व्यक्तित्व यहाँ चिपक गया है, मैं इस भेद को सपरिवार नहीं समझ पा रहा हूँ। बार-बार यह प्रश्न उठ रहा है-तुम कब जाओगे, अतिथि?

कल पत्नी ने धीरे से पूछा था,

“कब तक टिकेंगे ये?”

मैंने कंधे उचका दिए, “क्या कह सकता हूँ!”

“मैं तो आज खिचड़ी बना रही हूँ। हलकी रहेगी।”

“बनाओ।”

सत्कार की ऊष्मा समाप्त हो रही थी। डिनर से चले थे, खिचड़ी पर आ गए। अब भी अगर तुम अपने बिस्तर को गोलाकार रूप नहीं प्रदान करते तो हमें उपवास तक जाना होगा। तुम्हारे-मेरे संबंध एक संक्रमण के

दौर से गुजर रहे हैं। तुम्हारे जाने का यह चरम क्षण है। तुम जाओ न अतिथि!

तुम्हें यहाँ अच्छा लग रहा है न! मैं जानता हूँ। दूसरों को यहाँ अच्छा लगता है। अगर बस चलता तो सभी लोग दूसरों के यहाँ रहते, पर ऐसा नहीं हो सकता। अपने घर की महत्ता के गीत इसी कारण गाए गए हैं। होम को इसी कारण स्वीट-होम कहा गया है कि लोग दूसरे के होम की स्वीटनेस को काटने न दौड़ें। तुम्हें यहाँ अच्छा लग रहा है, पर सोचो प्रिय, कि शराफत भी कोई चीज होती है और गेट आउट भी एक वाक्य है, जो बोला जा सकता है।

अपने खर्चाटों से एक और रात गुंजायमान करने के बाद कल जो किरण तुम्हारे बिस्तर पर आएगी वह तुम्हारे यहाँ आगमन के बाद पाँचवें सूर्य की परिचित किरण होगी। आशा है, वह तुम्हें चूमेगी और तुम घर लौटने का सम्मानपूर्ण निर्णय ले लोगे। मेरी सहनशीलता की वह अंतिम सुबह होगी। उसके बाद मैं स्टैंड नहीं कर सकूँगा और लड़खड़ा जाऊँगा। मेरे अतिथि, मैं जानता हूँ कि अतिथि देवता होता है, पर आखिर मैं भी मनुष्य हूँ। मैं कोई तुम्हारी तरह देवता नहीं। एक देवता और एक मनुष्य अधिक देर साथ नहीं रहते। देवता दर्शन देकर लौट जाता है। तुम लौट जाओ अतिथि! इसी में तुम्हारा देवत्व सुरक्षित रहेगा। यह मनुष्य अपनी वाली पर उतरे, उसके पूर्व तुम लौट जाओ!

उफ, तुम कब जाओगे, अतिथि ?



## इस पाठ के बारे में:

‘तुम कब जाओगे अतिथि’ पाठ में उन्होंने उन लोगों पर व्यंग्य किया है जो बिना कुछ तिथि बताए घर में आ टपकते हैं और जाने का नाम तक नहीं लेते हैं। उनके सम्मान और सेवा में घर के लोग जुट जाते हैं पर अतिथि ऐसे हैं कि जाने का नाम तक नहीं लेते हैं। ऐसे ही एक अतिथि लेखक के घर में चार दिनों से हैं। उनकी सेवा लेखक और उनकी धर्मपत्नी दोनों ने की। अच्छा खाना बनाकर खिलाया, सिनेमा दिखाया। इधर – उधर की खुब बातें कीं। स्मृतियों को ताजा किया। उनके कपड़े लाँन्डी से धुलवाया। पर अतिथि हैं कि जहाँ के तहाँ जमे बैठे हैं। जाने का नाम नहीं ल रहे हैं। फिर मेजवान की चिन्ता बढ गई। वे हर पल यही सोचने लगे कि अतिथि कब और कैसे जाएँगे।

उन्होंने कहा कि दूसरों के यहाँ रहना सबको अच्छा लगता है क्योंकि वहाँ सेवा मिलती है और आवाभगत भी अच्छी होती है। पर यह सब करने वालों की जो हालत होती है उस पर अतिथि ध्यान नहीं देते हैं। इसलिए ‘अपना घर सबसे अच्छा है’ का पाठ पढाया जाता है। यदि हम अपने घर को स्वीट्-होम नहीं कहेंगे तो लोग सब जगह अतिथि बन कर रहेंगे और दूसरे का घर निवास स्थल हो जाएगा। अतिथि देवता की तरह माना जाता है जब वह किसी के घर में अनधिकार प्रवेश कर लें, तथा कुछ समय रहने के बाद सम्मान के साथ वह वहाँ से निकल जाय। यदि वह विशेष उद्देश्य से किसके यहाँ रहने लगता है, घर के लोगों का व्यवहार बदलने पर भी जाने का नाम नहीं लेता है तो अतिथि देवता नहीं रह जाता और मेजवान को मजबूर होकर कहना पड़ता है कि तुम कब जाओगे अतिथि।

## प्रश्न-अभ्यास

१. सही विकल्प चुनिए।

(i) उसकी तारीखें अपनी सीमा में \_\_\_\_\_ से फड़फड़ाती रहती हैं।

- (A) श्रद्धा से (B) करुणा  
(C) प्रेम (D) नम्रता

(ii) तुम्हारे जाने की कोई \_\_\_\_\_ प्रतीत नहीं होती।

- (A) अशंका (B) आसार  
(C) संभावना (D) शरण

(iii) तुम मेरी काफी \_\_\_\_\_ खोद चुके।

- (A) मिट्टी (B) गड्ढा  
(C) खेत (D) जमीन

(iv) सत्कार की क्या \_\_\_\_\_ समाप्त हो रही थी?

- (A) ऊष्मा (B) जोश  
(C) जोर (D) दौर

(v) अतिथि \_\_\_\_\_ होता है।

- (A) अपना (B) सबका  
(C) देवता (D) दानव

२. निम्न प्रश्नों के उत्तर एक-एक पंक्ति में दीजिए।

(i) अतिथि कितने दिनों से लेखक के घर पर रह रहा था?

(ii) विगत कितने दिनों से लेखक तारीखें बदल रहे हैं?

(iii) सब्जी और रायते के अलावा लेखक ने खाने में और क्या बनवाया था?

(iv) अतिथि के सम्मान में लेखक ने रात का भोजन किसमें बदल दिया था?

- (v) दूसरे दिन रात्रि को लेखक मेहमान को कहाँ ले गए ?
- (vi) तीसरे दिन सुबह अतिथि ने लेखक से क्या कहा ?
- (vii) लाँट्री का नाम आते ही लेखक के मन में कौन सी खास बात पलने लगी ?
- (viii) एकाएक पत्नी की आँखें कैसी हो गई ?
- (ix) जब पत्नी की आँखें बड़ी होती हैं तो लेखक कैसे हो जाते हैं ?
- (x) लेखक की पत्नी की कौन सी आशंका निर्मूलन नहीं थी ?
- (xi) ठहाकों के रंगीन गुब्बारे अब कहाँ उड़ रहे थे ?
- (xii) जब लेखक उपन्यास पढ़ रहे थे तो अतिथि क्या कर रहे थे ?
- (xiii) लेखक और अतिथि का सौहार्द अब धीरे – धीरे किसमें रुपान्तरित होने लगा ?
- (xiv) भावनाएँ जिसका रूप लेने लगीं ?
- (xv) अतिथि का व्यक्तित्व किसमें चिपक गया है ?
- (xvi) लेखक के मन में बार-बार कौन सा प्रश्न उठ रहा था ?
- (xvii) सत्कार की ऊष्मा समाप्त होने पर लेखक का परिवार कहाँ से चल कर कहाँ पहुँचा ?
- (xx) धीरे-धीरे लेखक और अतिथि के संबंध किस दौर से गुजरने लगे ?
- (xxi) ‘मेरी सहनशीलता की वह अन्तिम सुबह होगी’ ऐसा किसने किसके लिए कहा ?

### ३. निम्न प्रश्नों के उत्तर दो-दो वाक्यों में दीजिए।

- (i) एस्ट्रोनट्स लम्बी यात्रा के दौरान कहाँ तक गए थे और वे कहाँ पर नहीं रुके ?
- (ii) लेखक ने अतिथि के सम्मान में डिनर में क्या – क्या बनाया ?
- (iii) लेखक ने अपनी पीड़ा कब पी ली ?
- (iv) लेखक की पत्नी की आँखें बड़ी बड़ी क्यों हो गई ?
- (v) पिछले चार दिनों में लेखक ने अतिथि के साथ किन विषयों पर चर्चा की थी ?

४. निम्न प्रश्नों के उत्तर तीन-तीन वाक्यों में दीजिए।

- (i) जिस दिन अतिथि आए उस दिन लेखक की क्या प्रतिक्रिया हुई?
- (ii) अतिथि के प्रति उत्साह और लगन दिखाते समय लेखक के मन में कैसी आशा थी?
- (iii) तीसरे दिन की सुबह लेखक के लिए मार्मिक क्यों बनी?
- (iv) अब लेखक के घर में एक चुप्पी क्यों थी?
- (v) अन्त में लेखक अतिथि के बारे में क्या विचार रखते हैं?

५. निम्न प्रश्नों के उत्तर दीजिए।

- (i) 'तुम कब जाओगे अतिथि' में लेखक के विचारों को अपने शब्दों में लिखिए।
- (ii) पति-पत्नी ने मेहमानों का स्वागत कैसे किया?
- (iii) कौन सा आघात अप्रत्याशित था और उसका लेखक पर कैसा प्रभाव पड़ा?
- (iv) लेखक का परिवार सम्बन्ध के संक्रमण से क्यों गुजरने लगा-विस्तार से लिखिए।
- (v) जब अतिथि चार दिनों तक नहीं गया तब लेखक के व्यवहार में कैसे - कैसे परिवर्तन आए?



# बचेन्द्री पाल

(जन्म २४ मई १९५४)

बचेन्द्री पाल का जन्म उत्तरांचल के चमोली जिले के बंपा गाँव में २४ मई १९५४ को हुआ। उनके पिता का नाम किशन सिंह पाल और माता का नाम हंसा देई नेगी था। बचेन्द्री अपने माता-पिता की तीसरी संतान थीं। अर्थाभाव के कारण सिलाई-कढ़ाई करके उन्हें अपनी पढ़ाई का खर्च जुटाना पड़ा। घर की तंगी हालत के बावजूद अपनी पढ़ाई जारी रखी। बड़ी मुश्किल से मैट्रिक उच्च माध्यमिक शिक्षा पूरी की। उनके माता-पिता उन्हें और ज्यादा पढ़ाने के पक्ष में नहीं थे लेकिन महाविद्यालय के प्राचार्य के कहने पर बचेन्द्री ने कॉलेज में दाखिला ले लिया। वहाँ शूटिंग भी सीखी। आगे चलकर संस्कृत में एम्.ए. और फिर बी.एड्. की डिग्री हासिल की। वे इस्पात कंपनी 'टाटा स्टील' में कार्यरत रहीं जहाँ वे चुने हुए लोगों को रोमांचक अभियानों का प्रशिक्षण देती रहीं।

बचेन्द्री को बचपन से ही पर्वतारोहण का शौक था। चूँकि उनका परिवार पहाड़ी इलाके में रहता था इसलिए पहाड़ों पर चढ़ने की इच्छा पूरी हो जाती थी। पढ़ाई खत्म होने पर बचेन्द्री ने पर्वतारोही बनने की इच्छा जाहिर की; लेकिन घरवालों को उनका पर्वतारोही बनना पसंद नहीं था, क्यों कि वे चाहते थे वे किसी स्कूल में शिक्षिका बनजाए फिर उनकी शादी करा दी जाए। परंतु अपनी जिद के कारण बचेन्द्री ने उतरकाशी के 'नेहरू इंस्टिट्यूट ऑफ माउंटेनियारिग' में प्रवेश ले लिया। इस तरह पर्वतारोहण प्रशिक्षण के दौरान वे मानसिक रूप से एवरेस्ट चढ़ने के लिए तैयार हो गईं। सन १९८४ ई में 'एवरेस्ट ८४' नामक एवरेस्ट पर चढ़नेवाले अभियान दल में बचेन्द्री का नाम चयन कर लिया गया जिसमें ग्यारह पुरुष और छः महिलाएँ शामिल थी। फिर एक साधारण परिवार में जन्मे इन आत्मविश्वासी और बहादुर महिला माउंट एवरेस्ट पर चढ़नेवाली पहली भारतीय महिला बनीं। सन् १९९० ई. में गिनिज बुक ऑफ रेकर्ड में उनका नाम लिपिबद्ध हुआ। सन् १९८६ ई. में उन्हें अर्जुन पुरस्कार, सन १९९४ ई० में पद्मश्री सम्मान, तथा सन् १९९४ ई. में राष्ट्रीय साहसिकता पुरस्कार प्राप्त हुआ।

## एवरेस्ट : मेरी शिखर यात्रा

एवरेस्ट अभियान दल ७ मार्च को दिल्ली से काठमांडू के लिए हवाई जहाज से चल दिया। एक मजबूत अग्रिम दल बहुत पहले ही चला गया था जिससे कि वह हमारे 'बेस कैम्प' पहुँचने से पहले दुर्गम हिमपात के रास्ते को साफ कर सके।

नमचे बाजार, शेरपालैंड का एक सर्वाधिक महत्वपूर्ण नगरीय क्षेत्र है। अधिकांश शेरपा इसी स्थान तथा यहीं के आसपास के गाँवों के होते हैं। यह नमचे बाजार ही था, जहाँ से मैंने सर्वप्रथम एवरेस्ट को निहारा, जो नेपालियों में 'सागरमाथा' के नाम से प्रसिद्ध है। मुझे यह नाम अच्छा लगा।

एवरेस्ट की तरफ गौर से देखते हुए, मैंने एक भारी बर्फ का बड़ा फूल (प्लूम) देखा, जो पर्वत-शिखर पर लहराता एक ध्वज-सा लग रहा था। मुझे बताया गया कि यह दृश्य शिखर की ऊपरी सतह के आसपास १५० किलोमीटर अथवा इससे भी अधिक की गति से हवा चलने के कारण बनता था, क्योंकि तेज हवा से सूखा बर्फ पर्वत पर उड़ता रहता था। बर्फ का यह ध्वज १० किलोमीटर या इससे भी लंबा हो सकता था। शिखर पर जानेवाले प्रत्येक व्यक्ति को दक्षिण-पूर्वी पहाड़ी पर इन तूफानों को झेलना पड़ता था, विशेषकर खराब मौसम में। यह मुझे डराने के लिए काफी था, फिर भी मैं एवरेस्ट के प्रति विचित्र रूप से आकर्षित थी और इसकी कठिनतम चुनौतियों का सामना करना चाहती थी।

जब हम २६ मार्च को पैरिच पहुँचे, हमें हिम-स्खलन के कारण हुई एक शेरपा कुली की मृत्यु का दुःखद समाचार मिला। खुंभु हिमपात पर जानेवाले अभियान-दल के रास्ते की बाईं तरफ सीधी पहाड़ी के धसकने से, ल्होत्से की ओर से एक बहुत बड़ी बर्फ की चट्टान नीचे खिसक आई थी। सोलह शेरपा कुलियों के दल में से एक की मृत्यु हो गई और चार घायल हो गए थे।

इस समाचार के कारण अभियान दल के सदस्यों के चेहरों पर छाए अवसाद को देखकर हमारे नेता कर्नल खुल्लर ने स्पष्ट किया कि एवरेस्ट जैसे महान अभियान में खतरों को और कभी-कभी तो मृत्यु भी आदमी को सहज भाव से स्वीकार करनी चाहिए।

उपनेता प्रेमचंद, जो अग्रिम दल का नेतृत्व कर रहे थे, २६ मार्च को पैरिच लौट आए। उन्होंने हमारी पहली बड़ी बाधा खुंभु हिमपात की स्थिति से हमें अवगत कराया। उन्होंने कहा कि उनके दल ने कैंप-एक (६००० मी.) जो हिमपात के ठीक ऊपर है, वहाँ तक का रास्ता साफ कर दिया है। उन्होंने यह भी बताया कि पुल बनाकर, रस्सियाँ बाँधकर तथा झंडियों से रास्ता चिह्नित कर, सभी बड़ी कठिनाइयों का जायजा ले लिया गया है। उन्होंने इस पर भी ध्यान दिलाया कि ग्लेशियर बर्फ की नदी है और बर्फ का गिरना अभी जारी है। हिमपात में अनियमित और अनिश्चित बदलाव के कारण अभी तक के किए गए सभी काम व्यर्थ हो सकते हैं और हमें रास्ता खोलने का काम दोबारा करना पड़ सकता है।

‘बेस कैंप’ में पहुँचने से पहले हमें एक और मृत्यु की खबर मिली। जलवायु अनुकूल न होने के कारण एक रसोई सहायक की मृत्यु होगई थी। निश्चित रूप से हम आशाजनक स्थिति में नहीं चल रहे थे।

एवरेस्ट शिखर को मैंने पहले दो बार देखा था, लेकिन एक दूरी से। बेस कैंप पहुँचने पर दूसरे दिन मैंने एवरेस्ट पर्वत तथा इसकी अन्य श्रेणियों को देखा। मैं भौंचक्की होकर खड़ी रह गई और एवरेस्ट, ल्होत्से और नुत्से की ऊँचाइयों से घिरी बर्फीली टेढ़ी-मेढ़ी नदी को निहारती रही।

हिमपात अपने आपमें एक तरह से बर्फ के खंडों का अव्यवस्थित ढंग से गिरना ही था। हमें बताया गया कि ग्लेशियर के बहने से अकसर बर्फ में हलचल हो जाती थी, जिससे बड़ी-बड़ी बर्फ की चट्टानें तत्काल गिर जाया करती थीं और अन्य कारणों से भी अचानक प्रायः खतरनाक स्थिति धारण कर लेती थी। सीधे धरातल पर

दरार पड़ने का विचार और इस दरार का गहरे-चौड़े हिम-विदर में बदल जाने का मात्र खयाल ही बहुत डरावना था। इससे भी ज्यादा भयानक इस बात की जानकारी थी कि हमारे संपूर्ण प्रवास के दौरान हिमपात लगभग एक दर्जन आरोहियों और कुलियों को प्रतिदिन छूता रहेगा।

दूसरे दिन नए आनेवाले अपने अधिकांश सामान को हम हिमपात के आधे रास्ते तक ले गए। डॉ. मीनू मेहता ने हमें अल्यूमिनियम की सीढ़ियों से अस्थायी पुलों का बनाना, लट्टों और रस्सियों का उपयोग, बर्फ की आड़ी-तिरछी दीवारों पर रस्सियों को बाँधना और हमारे अग्रिम दल के अभियांत्रिकी कार्यों के बारे में हमें विस्तृत जानकारी दी।

तीसरा दिन हिमपात से कैंप-एक तक सामान ढोकर चढ़ाई का अभ्यास करने के लिए निश्चित था। रीता गोंबू तथा मैं साथ-साथ चढ़ रहे थे। हमारे पास एक वॉकी-टॉकी था, जिससे हम अपने हर कदम की जानकारी बेस कैंप पर दे रहे थे। कर्नल खुल्लर उस समय खुस हुए, जब हमने उन्हें अपने पहुँचने की सूचना दी क्योंकि कैंप-एक पर पहुँचनेवाली केवल हम दो ही महिलाएँ थीं।

अंगदोरजी, लोपसांग और गगन विस्सा अंततः साउथ कोल पहुँच गए और २९ अप्रैल को ७९०० मीटर पर उन्होंने कैंप चार लगाया। यह संतोषजनक प्रगति थी।

जब अप्रैल में मैं बेस कैंप में थी, तेनजिंग अपनी सबसे छोटी सुपुत्री डेकी के साथ हमारे पास आए थे। उन्होंने इस बात पर विशेष महत्त्व दिया कि दल के प्रत्येक सदस्य और प्रत्येक शेरपा कुली से बातचीत की जाए। जब मेरी बारी आई, मैंने अपना परिचय यह कहकर दिया कि मैं बिलकुल ही नौसिखिया हूँ और एवरेस्ट मेरा पहला अभियान है। तेनजिंग हँसे और मुझसे कहा कि एवरेस्ट उनके लिए भी पहला अभियान था लेकिन यह भी स्पष्ट किया कि शिखर पर पहुँचने से पहले उन्हें सात बार एवरेस्ट पर जाना पड़ा था। फिर अपना हाथ मेरे कंधे पर रखते हुए उन्होंने कहा, “तुम एक



पक्की पर्वतीय लड़की लगती हो। तुम्हें तो शिखर पर पहले ही प्रयास में पहुँच जाना चाहिए।“

१५-१६ मई १९८४ बुद्ध पूर्णिमा के दिन मैं ल्होत्से की बर्फीली सीधी ढलान पर लगाए गए सुंदर रंगीन नाइलॉन के बने तंबू के कैंप-तीन में थी। कैंप में १० और व्यक्ति थे। लोपसांग, तशारिंग मेरे तंबू में थे, एन.डी. शेरपा तथा और आठ अन्य शरीर से मजबूत और ऊँचाइयों में रहनेवाले शेरपा दूसरे तंबुओं में थे। मैं गहरी नींद में सोई हुई थी कि रात में १२.३० बजे के लगभग मेरे सिर के पिछले हिस्से में किसी एक सख्त चीज के टकराने से मेरी नींद अचानक खुल गई और साथ ही एक जोरदार धमाका भी हुआ। तभी मुझे महसूस हुआ कि एक ठंडी, बहुत भारी कोई चीज मेरे शरीर पर से मुझे कुचलती हुई चल रही है। मुझे साँस लेने में भी कठिनाई हो रही थी।

यह क्या हो गया था? एक लंबा बर्फ का पिंड हमारे कैंप के ठीक ऊपर ल्होत्से ग्लेशियर से टूटकर नीचे आ गिरा था और उसका विशाल हिमपुंज बना गया था। हिमखंडों, बर्फ के टुकड़ों तथा जमी हुई बर्फ के इस विशाल पुंज ने, एक एक्सप्रेस रेलगाड़ी की तेज गति और भीषण गर्जना के साथ, सीधी ढलान से नीचे आते हुए हमारे कैंप को तहस-नहस कर दिया। वास्तव में हर व्यक्ति को चोट लगी थी। यह एक आश्चर्य था कि किसी की मृत्यु नहीं हुई थी।

लोपसांग अपनी स्विस् छुरी की मदद से हमारे तंबू का रास्ता साफ करने में सफल हो गए थे और तुरंत ही अत्यंत तेजी से मुझे बचाने की कोशिश में लग गए। थोड़ी-सी भी देर का सीधा अर्थ था मृत्यु। बड़े-बड़े हिमपिंडों को मुश्किल से हटाते हुए उन्होंने मेरे चारों तरफ की कड़े जमे बर्फ की खुदाई की और मुझे उस बर्फ की कब्र से निकाल बाहर खींच लाने में सफल हो गए।

सुबह तक सारे सुरक्षा दल आ गए थे और १६ मई को प्रातः ८ बजे तक हम प्रायः सभी कैंप-दो पर पहुँच गए थे। जिस शेरपा की टाँग की हड्डी टूट गई थी, उसे

एक खुद के बनाए स्ट्रेचर पर लिटाकर नीचे लाए। हमारे नेता कर्नल खुल्लर के शब्दों में, “यह इतनी ऊँचाई पर सुरक्षा-कार्य का एक जबरदस्त साहसिक कार्य था।”

सभी नौ पुरुष सदस्यों को चोटों अथवा टूटी हड्डियों आदि के कारण बेस कैंप में भेजना पड़ा। तभी कर्नल खुल्लर मेरी तरफ मुड़कर कहने लगे, “क्या तुम भयभीत थीं?”

“जी हाँ।”

“क्या तुम वापिस जाना चाहोगी?”

“नहीं”, मैंने बिना किसी हिचकिचाहट के उत्तर दिया।

जैसे ही मैं साउथ कोल कैंप पहुँची, मैंने अगले दिन की अपनी महत्वपूर्ण चढ़ाई की तैयारी शुरू कर दी। मैंने खाना, कुकिंग गैस तथा कुछ ऑक्सीजन सिलिंडर इकट्ठे किए। जब दोपहर डेढ़ बजे बिस्सा आया, उसने मुझे चाय के लिए पानी गरम करते देखा। की, जय और मीनू अभी बहुत पीछे थे। मैं चिंतित थी क्योंकि मुझे अगले दिन उनके साथ ही चढ़ाई करनी थी। वे धीरे - धीरे आ रहे थे क्योंकि वे भारी बोझ लेकर और बिना ऑक्सीजन के चल रहे थे।

दोपहर बाद मैंने अपने दल के दूसरे सदस्यों की मदद करने और अपने एक थरमस को जूस से और दूसरे को गरम चाय से भरने के लिए नीचे जाने का निश्चय किया। मैंने बर्फीली हवा में ही तंबू से बाहार कदम रखा। जैसे ही मैं कैंप क्षेत्र से बाहर आ रही थी मेरी मुलाकात मीनू से हुई। की और जय अभी कुछ पीछे थे। मुझे जय जेनेवा स्पर की चोटी के ठीक नीचे मिला। उसने कृतज्ञतापूर्वक चाय वगैरह पी लेकिन मुझे और आगे जाने से रोकने की कोशिश की। मगर मुझे की से भी मिलना था। थोड़ा-सा और आगे नीचे उतरने पर मैंने की को देखा। वह मुझे देखकर हक्का-बक्का रह गया।

“तुमने इतनी बड़ी जोखिम क्यों ली बचेद्री?”

मैंने उसे दृढ़तापूर्वक कहा, “मैं भी औरों की तरह एक पर्वतारोही हूँ, इसीलिए इस दल में आई हूँ। शारीरिक रूप से मैं ठीक हूँ। इसलिए मुझे अपने दल के सदस्यों की मदद क्यों नहीं करनी चाहिए।” की हँसा और उसने पेय पदार्थ से प्यास बुझाई, लेकिन उसने मुझे अपना किट ले जाने नहीं दिया।

थोड़ी देर बाद साउथ कोल कैम्प से ल्हाटू और बिस्सा हमें मिलने नीचे उतर आए। और हम सब साउथ कोल पर जैसी भी सुरक्षा और आराम की जगह उपलब्ध थी, उस पर लौट आए। साउथ कोल ‘पृथ्वी पर बहुत अधिक कठोर’ जगह के नाम से प्रसिद्ध है।

अगले दिन मैं सुबह चार बजे उठ गई और बर्फ पिघलाया, चाय बनाई, कुछ विस्कुट और आधी चॉकलेट का हलका नाश्ता करने के बाद मैं लगभग साढ़े पाँच बजे अपने तंबू से निकल पड़ी। अंगदोरजी बाहर खड़ा था और कोई आसपास नहीं था।

अंगदोरजी बिना ऑक्सीजन के ही चढ़ाई करनेवाला था। लेकिन इसके कारण उसके पैर ठंडे पड़ जाते थे। इसलिए वह ऊँचाई पर लंबे समय तक खुले में और रात्रि में शिखर कैम्प पर नहीं जाना चाहता था। इसलिए उसे या तो उसी दिन चोटी तक चढ़कर साउथ कोल पर वापस आ जाना था अथवा अपने प्रयास को छोड़ देना था।

वह तुरंत ही चढ़ाई शुरू करना चाहता था... और उसने मुझसे पूछा, क्या मैं उसके साथ जाना चाहूँगी? एक ही दिन में साउथ कोल से चोटी तक जाना और वापस आना बहुत कठिन और श्रमसाध्य होगा! इसके अलावा यदि अंगदोरजी के पैर ठंडे पड़ गए तो उसके लौटकर आने का भी जोखिम था। मुझे फिर भी अंगदोरजी पर विश्वास था और साथ-साथ मैं आरोहण की क्षमता और कर्मठता के बारे में भी आश्वस्त थी। अन्य कोई भी व्यक्ति इस समय साथ चलने के लिए तैयार नहीं था।

सुबह ६.२० पर जब अंगदोरजी और मैं साउथ कोल से बाहर आ निकले तो दिन ऊपर चढ़ आया था। हलकी-हलकी हवा चल रही थी, लेकिन ठंड भी बहुत अधिक थी। मैं अपने आरोही उपस्कर में काफी सुरक्षित और गरम थी। हमने बगैर

रस्सी के ही चढ़ाई की। अंगदोरजी एक निश्चित गति से ऊपर चढ़ते गए और मुझे भी उनके साथ चलने में कोई कठिनाई नहीं हुई।

जमे हुए बर्फ की सीधी व ढलाऊ चट्टानें इतनी सख्त और भुरभुरी थीं, मानो शीशे की चादरें बिछी हों। हमें बर्फ काटने के फावड़े का इस्तेमाल करना ही पड़ा और मुझे इतनी सख्ती से फावड़ा चलाना पड़ा जिससे कि उस जमे हुए बर्फ की धरती को फावड़े के दाँते काट सकें। मैंने उन खतरनाक स्थलों पर हर कदम अच्छी तरह सोच-समझकर उठाया।

दो घंटे से कम समय में ही हम शिखर कैम्प पर पहुँच गए। अंगदोरजी ने पीछे मुड़कर देखा और मुझसे कहा कि क्या मैं थक गई हूँ। मैंने जवाब दिया, “नहीं।” जिसे सुनकर वे बहुत अधिक आश्चर्यचकित और आनंदित हुए। उन्होंने कहा कि पहलेवाले दल ने शिखर कैम्प पर पहुँचने में चार घंटे लगाए थे और यदि हम इसी गति से चलते रहे तो हम शिखर पर दोपहर एक बजे एक पहुँच जाएँगे।

ल्हाटू हमारे पीछे-पीछे आ रहा था और जब हम दक्षिणी शिखर के नीचे आराम कर रहे थे, वह हमारे पास पहुँच गया। थोड़ी-थोड़ी चाय पीने के बाद हमने फिर चढ़ाई शुरू की। ल्हाटू एक नायलॉन की रस्सी लाया था। इसलिए अंगदोरजी और मैं रस्सी के सहारे चढ़े, जबकि ल्हाटू एक हाथ से रस्सी पकड़े हुए बीच में चला। उसने रस्सी अपनी सुरक्षा की बजाय हमारे संतुलन के लिए पकड़ी हुई थी। ल्हाटू ने ध्यान दिया कि मैं इन ऊँचाइयों के लिए सामान्यतः आवश्यक, चार लीटर ऑक्सीजन की अपेक्षा, लगभग ढाई लीटर ऑक्सीजन प्रति मिनट की दर से लेकर चढ़ रही थी। मेरे रेगुलेटर पर जैसे ही उसने ऑक्सीजन की आपूर्ति बढ़ाई, मुझे महसूस हुआ कि सपाट और कठिन चढ़ाई भी अब आसान लग रही थी।

दक्षिणी शिखर के ऊपर हवा की गति बढ़ गई थी। उस ऊँचाई पर तेज हवा के झोंके भुरभुरे बर्फ के कणों को चारों तरफ उड़ा रहे थे, जिससे दृश्यता शून्य तक आ गई थी। अनेक बार देखा कि केवल थोड़ी दूर के बाद कोई ऊँची चढ़ाई नहीं है। ढलान एकदम सीधा नीचे चला गया है।

मेरी साँस मानो रूक गई थी। मुझे विचार कौंधा कि सफलता बहुत नजदीक है। २३ मई १९८४ के दिन दोपहर के एक बजकर सात मिनट पर मैं एवरेस्ट की चोटी पर खड़ी थी। एवरेस्ट की चोटी पर पहुँचनेवाली मैं प्रथम भारतीय महिला थी।

एवरेस्ट शंकु की चोटी पर इतनी जगह नहीं थी कि दो व्यक्ति साथ-साथ खड़े हो सकें। चारों तरफ हजारों मीटर लंबी सीधी ढलान को देखते हुए हमारे सामने प्रश्न सुरक्षा का था। हमने पहले बर्फ के फावड़े से बर्फ की खुदाई कर अपने आपको सुरक्षित रूप से स्थिर किया। इसके बाद, मैं अपने घुटनों के बल बैठी, बर्फ पर अपने माथे को लगाकर मैंने 'सागरमाथे' के ताज का चुंबन लिया। बिना उठे ही मैंने अपने थैले से दुर्गा माँ का चित्र और हनुमान चालीसा निकाला। मैंने इनको अपने साथ लाए लाल कपड़े में लपेटा, छोटी-सी पूजा-अर्चना की और इनको बर्फ में दबा दिया। आनंद के इस क्षण में मुझे अपने माता-पिता का ध्यान आया।

जैसे मैं उठी, मैंने अपने हाथ जोड़े और मैं अपने रज्जु-नेता अंगदोरजी के प्रति आदर भाव से झुकी। अंगदोरजी जिन्होंने मुझे प्रोत्साहित किया और मुझे लक्ष्य तक पहुँचाया। मैंने उन्हें बिना ऑक्सीजन के एवरेस्ट की दूसरी चढ़ाई चढ़ने पर बधाई भी दी। उन्होंने मुझे गले से लगाया और मेरे कानों में फुसफुसाया, “ दीदी, तुमने अच्छी चढ़ाई की। मैं बहुत प्रसन्न हूँ!”

कुछ देर बाद सोनम पुलजर पहुँचे और उन्होंने फोटो लेने शुरू कर दिए।

इस समय तक ल्हाटू ने हमारे नेता को एवरेस्ट पर हम चारों के होने की सूचना दे दी थी। तब मेरे हाथ में वॉकी-टॉकी दिया गया। कर्नल खुल्लर हमारी सफलता से बहुत प्रसन्न थे। मुझे बधाई देते हुए उन्होंने कहा, “ मैं तुम्हारी इस अनूठी उपलब्धि के लिए तुम्हारे माता-पिता को बधाई देना चाहूँगा!” वे बोले कि देश को तुम पर गर्व है और अब तुम ऐसे संसार में वापस जाओगी, जो तुम्हारे अपने पीछे छोड़े हुए संसार से एकदम भिन्न होगा!

## शब्दार्थ :

अग्रिम - आगे जाने वाला; हिमपात - बर्फपात; दुर्गम - जहाँ पहुँचना कठिन हो; ग्लेशियर - बर्फ की नदी; निहारा-देखा; ध्वज-पताका, झंडा; चुनौतियाँ - ललकार, चेलैज; हिम स्खलन - बर्फ खंड का गिरना; अवसाद - उदासी; जायजा - पता लगाना, जाँच; भौचक्की - आश्चर्यचकित, हैरान; खतरा - विपत्ति; दरार - संधि, किसी वस्तु के फटने पर बीच में पड़नेवाली खाली जगह; अभियांत्रिकी कार्य - तकनीकी कार्य; कब्र - समाधि; शिखर - चोटि; प्रवास - यात्रा में रहना; हिम - विदर - बर्फ में दरार; आरोही - ऊपर चढ़नेवाला; नौसिखिया - नया सीखनेवाला; पर्वतारोही - पर्वत पर चढ़नेवाला; कर्मठता - काम में कुशलता, कर्म के प्रति निष्ठा; उपस्कर - आरोही की आवश्यक सामग्री; हिचकिचाहट - संकोच; आश्वस्त - निश्चिंत; मुलाकात - साक्षात्कार; जोखिम-खतरा, विपत्ति; मुश्किल स्थिति; आपूर्ति - सप्लाई, उपलब्ध कराना; मदद - सहायता; नजदीक - निकट, पास; शंकु - नोंक; उपलब्धि - प्राप्ति

### इस पाठ के बारे में:

बचेन्द्री ने एवरेस्ट विजय की अपनी रोमांचक पर्वतारोहण यात्रा का संपूर्ण विवरण खुद ही लिखा है। प्रस्तुत पाठ उसी विवरण का एक छोटा अंश है। यह रोमांचपूर्ण अंश उनके उस अंतिम चढ़ाव से शिखर तक पहुँचकर तिरंगा लहराने के पल - पल की घटना का बयान करता है।

एवरेस्ट अभियान दल ७ मार्च को दिल्ली से काठमांडू के लिए रवाना हुआ जिसमें बचेन्द्री शामिल थीं। काठमांडू के नमचे बाजार से उन्हें पहली बार एवरेस्ट देखने का मौका मिला। २६ मार्च को अभियान दल पैरिच पहुँचा। हिम स्खलन से एक शेरपा कुली की मृत्यु की खबर से अभियान दल के सदस्यों में उदासी छा गई। छः हजार मीटर की ऊँचाई पर लगे बेस कैम्प में पहुँचने से पहले रसोई सहायक की मृत्यु हो गई। बेस कैम्प से एवरेस्ट को देखकर बचेन्द्री भौचक्की रह गई। हिमपात होने तथा ग्लेशियर के बहने से चढ़ाई जोखिम भरी थी। बैसकैम्प के दौरान तेनजिंग अपनी

छोटी बेटी डेकी के साथ अभियान दल से मिलने आए थे। बचेन्द्री से मिलकर उनका हौसला बढ़ाते हुए कहा था - “तुम एक पक्की पर्वतीय लड़की लगती हो; तुम्हें तो शिखर पर पहले ही प्रयास में पहुँच जाना चाहिए।”

कैंप तीन में रहते वक्त एक रात को बचेन्द्री और उनके साथियों के साथ एक दुर्घटना हुई। रात के १२:३० बजे के लगभग बचेन्द्री के सिर के पिछले हिस्से में किसी एक सख्त चीज के टकराने से उनकी नींद टूटी। उन्हें महसूस हुआ कि एक ठंडी और बहुत भारी चीज जो कि ग्लेशियर का टुकड़ा था; उनके शरीर पर से उन्हें कुचलती हुई चल रही है। उन्हें साँस लेने में कठिनाई होने लगी। लोप सांग ने अपनी स्विस् लुग्री की मदद से हिम खंड को साफ करते हुए बचेन्द्री को बचाया। इस लंबे बर्फ के पिंड ने उनके कैंप का नष्टभ्रष्ट कर दिया। इससे हर यात्री को चोट पहुँची। परंतु बचेन्द्री ने परवाह किए बिना अपना अभियान जारी रखा। फिर ‘साउथ कोल’ से साथी आरोही अंगदोरजी सहित चढ़ाई शुरू की। और फिर २३ मई १९८४ के दिन दोपहर के एक बजकर सात मिनट पर बचेन्द्री प्रथम भारतीय महिला बनकर एवरेस्ट की चोटीपर पहुँच गईं। अपार खुशी से सागरमाथे के ताज को चूमा। वहाँ पर साथ में लाए दुर्गा माँ के चित्र और हनुमान चालीसा को लाल कपड़े में लपेट कर पूजाार्चना करते हुए बर्फ में दबा दिया।

### प्रश्न - अभ्यास

१. सही विकल्प चुनिए :

(अंक-१)

(क) एवरेस्ट दल कितनी तारीख को दिल्ली से काठमांडू के लिए निकला था ?

(६ अप्रैल, १७ मार्च, २ फरवरी, ७ मार्च)

(ख) शेरपा कुलियों के दल में कितने शेरपा थे ?

(१५, १६, १४, १२)

(ग) कौन अग्रिम दल का नेतृत्व कर रहे थे ?

(प्रेमचंद, कर्नल, खुल्लर, बचेन्द्री)

(घ) कौन बिना ऑक्सीजन के चढ़ाई करने वाला था ?

(प्रेमचंद, मीनू की, अंगदोरजी)

(ङ) बचेन्द्री कब एवरेस्ट की चोटि पर खड़ी थी ?

(२३ अप्रेल १९९४, २३ अप्रेल १९८४, १३ अप्रेल १९८४,  
१२ अप्रेल १९८३)

(च) कौन एवरेस्ट की चोटी पर पहुँचनेवाली पहली भारतीय महिला थी ?

(मीनू की, बचेन्द्री, तेनजिंग)

(२) एक शब्द या एक वाक्य में उत्तर दीजिए:

(अंक-१)

(क) बचेन्द्री ने सबसे पहले कहाँ से एवरेस्ट को निहारा ?

(ख) कौन एवरेस्ट को सागरमाथा के नाम से पुकारते हैं ?

(ग) बचेन्द्री को कौन सा नाम अच्छा लगा ?

(घ) एवरेस्ट अभियान दल कब पैरिच पहुँचा ?

(ङ) किस बजह से शेरपा कुली की मृत्यु हुई ?

(च) एवरेस्ट अभियान दल के नेता कौन थे ?

(छ) अभियान दल के उपनेता कौन थे ?

(ज) बर्फ की नदी किसे कहा गया है ?

(झ) बेस कैम्प कितनी ऊँचाई पर था ?

(ञ) कब और कितनी ऊँचाई पर कैम्प चार लगाया गया ?

(ट) साउथ कोल किस जगह के नाम से प्रसिद्ध है ?

(ठ) बचेन्द्री के रज्जुनेता कौन थे ?

(ड) किसने बचेन्द्री को प्रोत्साहित किया और लक्ष्य तक पहुँचाया ?

(ढ) बधाई देते हुए अंगदोरजी ने बचेन्द्री से क्या कहा ?



(३) दो वाक्यों में उत्तर दीजिए : (अंक-२)

(क) एवरेस्ट अभियान दल के नेता कौन थे और उन्होंने अभियान के खतरों के बारे में क्या कहा ?

(ख) रसोई सहायक की मृत्यु किस स्थिति में हुई ?

(ग) डॉ. मीनू मेहता ने क्या-क्या जानकारीयाँ दीं ?

(घ) तेनजिंग ने बजेन्द्रो से क्या कहा ?

(ङ) बचेन्द्रो ने अंगदोरजी को क्यों बधाई दी ?

(४) तीन वाक्यों में उत्तर दीजिए : (अंक-३)

(क) बृद्ध पूर्णिमा की रात को बचेन्द्रो की नींद अचानक क्यों टूट गई ?

(ख) अंगदोरजी के साथ बचेन्द्रो की चढ़ाई का अनुभव कैसा रहा ?

(ग) एवरेस्ट शंकु की चोटी पहुँच कर बचेन्द्र ने क्या किया ?

(घ) कर्नल खुल्लर ने बचेन्द्रो को बधाई देते हुए क्या कहा ?

(५) दीर्घ उत्तर दीजिए (१०-१५ वाक्यों में) (अंक-५)

(क) एवरेस्ट की चढ़ाई में बचेन्द्रो ने क्या-क्या कठिनाइयाँ झोलीं ?

(ख) अभियान दल में कौन कौन थे और उनका अनुभव कैसा रहा ?

(ग) प्रस्तुत पाठ के आधार पर बचेन्द्रो के चरित्र पर प्रकाश डालिए।



# सच्चिदानंद हीरानंद वात्स्यायन 'अज्ञेय'

(जन्म : ७ मार्च १९११ - मृत्यु ४ अप्रैल १९८७)

अज्ञेय जी का जन्म सन १९११ ई. को उत्तरप्रदेश के देवरिया जिले के कसिया गाँव में हुआ। पिता डॉ. हीरानंद शास्त्री पुरातत्वविद् थे। अपने पिता के साथ उनका अधिक समय कश्मीर, बिहार और मद्रास में बीता। उन्होंने संस्कृत, फारसी, अंग्रेजी हिन्दी आदि कई भाषाओं का ज्ञान प्राप्त किया। अज्ञेय का पूरा नाम सच्चिदानंद हीरानंद वात्स्यायन अज्ञेय था। उनका व्यक्तित्व क्रांतिकारी था। एम्.ए.की पढ़ाई के दौरान वे क्रांतिकारी आन्दोलन में शामिल हुए थे। १९३० में गिरफ्तार होकर चार साल तक जेल में रहे और दो साल नजरबंदी में। उसके बाद किसान आन्दोलन में हिस्सा लिया।

अज्ञेय जी बहुमुखी प्रतिभा के धनी रचनाकार हैं। उन्होंने कविता, कहानी, उपन्यास, आलोचना, यात्रा वृतांत आदि विधाओं में लेखनी चलायी। 'सौनिक', 'विशाल भारत', 'प्रतीक' और 'वाक्' (अंग्रेजी) आदि पत्रिकाओं का सम्पादन किया। 'आल इंडिया रेडियो' में भी नौकरी की। १९४३ से १९४५ तक सेना में रहे। उन्होंने समाचार पत्र 'दिनमान', 'नया प्रतीक', 'नवभारत टाइम्स' का कुशलतापूर्वक संपादन किया। 'प्रयोगवाद' के प्रवर्तक अज्ञेय ने भी १९४३ में 'तारसप्तक' का संपादन किया। सन् १९६४ ई में 'आँगन के पार द्वार' काव्य संकलन के लिए उन्हें साहित्य अकादमी का पुरस्कार मिला। फिर 'कितनी नावों में कितनी बार' कविता-संग्रह पर उन्हें 'भारतीय ज्ञानपीठ' पुरस्कार से सम्मानित किया गया।

## प्रमुख रचनाएँ

**काव्य संग्रह:-** इत्यलम्, बावरा अहेरी, हरी घास पर क्षण भर, आँगन के पार द्वार, असाध्य वीणा आदि

**उपन्यास :** शेखर : एक जीवनी, नदी के द्वीप, अपने-अपने अजनबी

**कहानी-संग्रह :** विपथगा, शरणार्थी, छोडा हुआ रास्ता, लौटती पगडंडियाँ

**यात्रावृत्तांत :** अरे यायावर रहेगा याद, एक बूँद सहसा उछली

**आलोचना :** त्रिशंकु, आत्मनेपद

## खितीन बाबू

वो चेहरे। कौन से चेहरे? कौन सा चेहरा? जो जीवन-भर चेहरों की स्मृतियाँ संग्रह करता आया है, उसके लिए यह बहुत कठिन है कि किसी एक चेहरे को अलग निकालकर कह दे कि यह चेहरा मुझे नहीं भूलता; क्योंकि जिसने भी जो चेहरा वास्तव में देखा है, सचमुच देखा है, वह उसे भूल ही नहीं सकता-फिर वह चेहरा मुनष्य का न होकर चाहे पशु-पक्षी का ही क्यों न हो... यूरोपीय को हर हिन्दुस्तानी का चेहरा एक जान पड़ता है; हिन्दुस्तानी को हर फिरंगी का चेहरा एक। मानव को सब पशु एक-से दिखते हैं। वह भी एक तरह का देखना ही है। लेकिन जिसने सचमुच कोई भी चेहरा देखा है, वह जानता है कि हर व्यक्ति अद्वितीय है, हर चेहरा स्मरणीय। सवाल यही है कि हम उसके विशिष्ट पहलू को देखने की आँखें रखते हों।

मैं भी जब किसी एक चेहरे पर ध्यान केन्द्रित करना चाहता हूँ, तो और अनेक चेहरे सामने आकर उलाहना देते हैं- 'क्या हम नहीं? क्या हमें तुम भूल गए हो?' इनमें पुरुष हैं, स्त्रियाँ हैं, बच्चे हैं; इतर प्राणियों में वोड़े हैं; कुत्ते हैं, तोते हैं; एक गिलहरी है, जो मैंने पाली थी और मेरी जेब में रहती थी; एक मुनाल जो मेरी गोली से घायल होकर चीखता हुआ मीलीं दौड़ा था; एक कुत्ता है, मेरी बीमारी में मेरे सिरहाने बैठकर आँसू गिराता था; एक टूटी चोंच और पंख वाला कौआ है, जो मुलतान-जेल में मेरा दोस्त बना था और 'परकटे' से पुकारने पर आधा उड़ता और उचकता हुआ आकर हाजिर हो जाता है-कहाँ तक गिनाया जाए, पेड़-पौधों के हम चेहरे नहीं मानते, नहीं तो शायद वे भी सामने आ खड़े होते। कालिदास ने शकुन्तला के जाने पर रोती हुई बनस्पतियों है। वर्णन किया है?

“अपसृतपाण्डुपत्रा मुंचति अश्रु इल लता:।”

मेरी सहानुभूति उतनी दूर तक शायद नहीं है, लेकिन चेहरों का मेरे पास यथेष्ट संग्रह है-सभी अद्वितीय, सभी स्मरणीय। अगर एक सुनता हूँ,

तो किसी असाधारणत्व के लिए नहीं। चुनता हूँ एक अत्यन्त साधारण व्यक्ति का अत्यन्त साधारण चेहरा; क्योंकि यही तो मैं कहना चाहता हूँ—असाधारण ही स्मरणीय नहीं है, हर गुदड़ी में लाल है, जरा उसे लौटकर झाँकने का कष्ट तो करो।

वो चेहरे। वह एक चेहरा खितीन बाबू का चेहरा न सुन्दर था, न असाधारण; न वह 'बड़े आदमी' ही थे—साधारण पढ़े—लिखे, साधारण क्लर्क। मैंने पहले—पहल उन्हें देखा, तो कोई देखने की बात उनमें नहीं थी। इतना ही कि औरों से कुछ कम उनके पास देखने के लायक था! चेचक के दागों से भरे चेहरे पर एक आँख गायब थी और एक बाँह भी नहीं थी—कोट की आस्तीन पिन लगाकर बदन के साथ जोड़ दी गई थी। काने को अपशकुन तो मानते ही हैं, अति चतुर भी मानते हैं; पर खितीन बाबू की हँसी में एक विलक्षण खुलापन और ऋजुता थी, इसलिए बाद में औरों से उनके बारे में पूछा, तो मालूम हुआ, आँख बचपन में चेचक के कारण जाती रही थी, बाँह पेड़ से गिरने पर टूट गई थी और कटवा देनी पड़ी। उनके हँसमुख और मिलनसार स्वभाव की सभी प्रशंसा करते थे।

मेरी उनसे भेंट अचानक एक मित्र के घर हो गई थी। मैं दौरे पर जाने वाला था, इसलिए दोस्तों से मिल रहा था। दो—तीन महीने घूम—घाम कर फिर आया; लेकिन खितीन बाबू के दर्शन कोई छः महीने बाद उन्हीं मित्र के यहाँ हुए—अबकी बार उनकी एक टाँग भी नहीं थी। रेलगाड़ी की दुर्घटना में टाँग कट जाने से वे अस्पताल में पड़े रहे थे, वहाँ से बैसाखियों का उपयोग सीखकर बाहर निकले थे।

उनके लिए घटना पुरानी हो गई थी, मेरे लिए तो नई सूचना थी। मैं सहानुभूति भी प्रकट करना चाहता था; पर झिझक भी रहा था, क्योंकि किसी की असमर्थता की ओर इशारा भी उसे असमंजस में डाल देता है, कि उन्होंने स्वयं हाथ बढ़ाकर पुकारा, “आइए, आइए, आपको अपने नए आविष्कार की बात बतानी है।” उनसे हाथ मिलाते हुए समझ में आया कि

एक अवयव के चले जाने से दूसरे की शक्ति कैसे दुगुनी हो जाती है। वैसे जोर की पकड़ जीवन में एक-आध बार ही किसी हाथ से पाई होगी। मैं बैठ ही रहा था कि वे बोले, “देखा आपने, कितना व्यर्थ बोझा आदमी ढोता चलता है? मैंने टांसिल कटवाए थे, कोई कमी नहीं मालूम हुई, एपेंडिक्स कटवाई, कुछ नहीं गया, केवल उसका दर्द गया। भगवान औधड़दानी हैं न, सब कुछ फालतू देते हैं—दो हाथ, दो कान, दो आँखें! अब तो एक है, आप ही बताइए, आपको कभी स्वाद लेने के साधन की कमी मालूम हुई है?”

मैं अवाक् उन्हें देखता रहा। पर उनकी हँसी सच्ची हँसी थी, और उनकी आखों में जीवन का जो आनन्द चमक रहा था, उसमें कहीं अधूरेपन की पंगुता की झलक नहीं थी। उन्होंने शरीर के अवयवों के बारे में अपनी एक अद्भुत थ्योरी भी मुझे बताई थी, यह ठीक याद नहीं कि वह इसी दूसरी भेंट में या और किसी बार, लेकिन थ्योरी मुझे याद है, उनका पूरा जीवन उसका प्रमाण रहा। वैसे शायद बताई होगी उन्होंने थोड़ी-थोड़ी करके दो-तीन किस्तों में।

तीसरी बार मैंने देखा, तो वे दूसरी बाँह भी खो चुके थे। मालूम हुआ कि रिक्शे से उतरते समय गिर गए थे, कोहनी टूट गई थी और फिर घाव दूषित हो गया, जिससे कोहनी से कुछ ऊपर बाँह काट दी गई। इस बार भी भेंट तो उन्हीं मित्र के यहाँ हुई, मगर उनकी बैठक में नहीं, उनके रसोईघर में। मित्र-पत्नी भोजन बना रही थीं, और खितीन बाबू एक मूढ़े पर बैठे हुए बताते जा रहे थे कि कौन व्यंजन कैसे बनेगा। वे खाने के शौकीन तो थे हो, खिलाने का शौक उन्हें और भी अधिक था, और पाकविद्या के आचार्य थे। मेरे मित्र ने उनकी दावत की थी। दावत का उपलक्ष्य बताया नहीं गया था, लेकिन इस बार कई दिन तक उनकी स्थिति संकटापन्न रही थी। खितीन दा भी इस बात को समझ गए थे, तभी उन्होंने कहा— “दावत रही और तुम्हारे यहाँ ही रही, पर दूँगा मैं, और सब कुछ मैं ही बनाऊँगा।” और खुलासा यह किया था कि वे रसोईघर में बैठकर सब कुछ अपनी देख-रेख में बनवाएँगे, बनाएँगी गृहपत्नी, मगर विधान खितीन बाबू का होगा। मित्र ने यह बात

सहर्ष मान ली थी। खितीन बाबू का उत्साह इतना था कि वही सबके लिए सहारा बन जाता था।

मैं भी एक मूढ़ा लेकर उनके पास बैठ गया। निमन्त्रण मुझे भी बाहर ही मिल चुका था। मैंने गृह-पत्नी से पूछा- “क्या बना रही हैं?” और उन्होंने उत्तर दिया, “मैं क्या बना रही हूँ, बना तो खितीन दा रहे हैं।” इस पर खितीन दा बोले, “हाँ, मेरा छुआ हुआ आप खा तो लेंगे न ?” और ठहाका मारकर हँस दिए। उनका छुआ हुआ, जिनके दोनों हाथ नदारद! फिर बोले- “आपने भोजन-विलासी और शय्या-विलासी की कहानी सुनी है?”

मैंने नहीं सुनी थी। वे सुनाने लगे। एक राजा के पास दो व्यक्ति नौकरी की तलाश में आए। पूछने पर एक ने कहा - ‘मैं भोजन - विलासी हूँ।’ यानी? यानी राजा जो भोजन करेंगे, उसे पहले चखकर वह बताएगा कि भोजन राजा के योग्य है या नहीं। जाँच के लिए उसी दिन का भोजन लाया गया, थाली पास आते न आते भोजन - विलासी ने नाक बन्द करते हुए चिल्लाकर कहा- “उँ-हूँ-हूँ, ले जाओ, इसमें से मुर्दे की बू आती है।” बहुत खोज करने पर मालूम हुआ, जिस खेत के धान से राजा के लिए चावल आए थे, उसके किनारे के पेड़ में एक मरा हुआ पक्षी टँगा था! भोजन-विलासी को नौकरी मिल गई। शय्या-विलासी ने बताया कि वह राजा के बिछौने की परीक्षा करेगा। उसे शयन-कक्ष में ले जाया गया। मखमली गद्दे पर वह जरा बैठा ही था कि कमर पकड़कर चीखता हुआ उठ खड़ा हुआ, “अरे रे, मेरी तो पीठ में बल पड़ गया, क्या बिछाया है किसी ने!” सबने देखा, कहीं कोई सलवट तक न थी, सब गद्दे-वद्दे उठाकर झाड़े गए, कहीं कुछ नहीं था जो विलासी की कमर में चुभ सकता-पर हाँ, आखिरी गद्दे के नीचे एक बाल पड़ा हुआ था। इस प्रकार शय्या-विलासी को भी नौकरी मिल गई।

कहानी सुनाकर खितीन बाबू बोले- “वह भी क्या जमाने थे!”

मित्र-पत्नी ने कहा - “आप उन दिनों होते, तो क्या बात होती न?”

खितीन दा ने कहा, “और नहीं तो क्या। मैं होता, तो राजा को दो नौकर थोड़े ही रखने पड़ते?”

मित्र-पत्नी ने मेरी ओर उन्मुख होकर कहा, “खितीन बाबू गाते भी बहुत सुन्दर हैं।”

खितीन दा फिर हँसे। बोले- “हाँ, हाँ, संगीत-विलासी की नौकरी भी मैं ही कर लेता न?”

चार बजे भोजन तैयार हुआ, हम आठ-दस आदमियों ने खाया। मेरे लिए स्मरणीय स्वादों में भोजन का स्वाद प्रधान नहीं है, फिर भी उस भोजन की याद अभी बनी है।

तब लगातार दो-चार दिन उनसे भेंट होती रही; पर उसके बाद मैंने खितीन बाबू को एक बार और देखा, एक लम्बी अवधि के बाद। और अबकी बार उनकी दूसरी टाँग भी मूल से गायब थी।

दोनों हाथ नहीं, दोनों टाँगें नहीं, एक आँख नहीं। टांसिल, एपेंडिक्स वगैरह तो, जैसा वे स्वयं कहते, रूँगे में चढ़ा दी जा सकती हैं। केवल एक स्थाणु: बैठक में गद्देदार मूढ़े पर बैठा था। घर तक वे एक विशेष पहिेदार कुर्सी में लाए गए थे, लेकिन वह कुर्सी कमरे में ले जाने में उन्हें आपत्ति थी; क्योंकि वह अपाहिजों की कुर्सी है। कुर्सी से उठाकर उन्हें भीतर ला बिठाया गया था, और यहाँ वे सहज भाव से बैठे थे मानो किसी स्वप्नाविष्ट चतुर मूर्तिकार ने पत्थर मस्तक और कन्धे तो पूरे गढ़ दिए हों, बाकी स्तम्भ अछूता छोड़ दिया हो। मैं जाकर चुपके से एक तरफ बैठ गया-वे कुछ बात कर रहे थे। उन्हें देखते हुए मुझे बचपन में आत्मा के सम्बन्ध में की गई अपनी बहसों याद आ गई। आत्मा है, तो सारे शरीर में व्याप्त है, या किसी एक अंग में रहती है? अगर सारे शरीर में, तो अंग कट जाने पर क्या आत्मा भी उतनी ही कट जाती है? अगर एक अंग में, तो अंग कट जाने पर क्या होता है? अपनी थ्योरी याद आ गई, जिसमें इस पहली को हल कर दिया गया था; कि



जब कोई अंग कटता तो उसमें से आत्मा सिमटकर बाकी शरीर में आ जाती है, पंगु नहीं होती। यह थ्योरी कहाँ तक मान्य है, इस बहस में तो वैज्ञानिक पढ़ें, पर उनको देखते हुए उनके बारे में जरूर इसकी सच्चाई मानो ज्वलन्त होकर सामने आ जाती थी, उनकी आत्मा न केवल पंगु नहीं थी, वरन् शरीर के अवयव जितने कम होते रहते थे उसमें आत्मा की कान्ति मानो उतनी बढ़ती जाती थी—मानो व्यर्थागों से सिमट-सिमट कर आत्मा बचे हुए शरीर में और घनी पूंजित होती जाती – सारे शरीर में भी नहीं, एक अकेली आँख में—प्रेतात्माओं से भरे हुए विशाल शून्य में निष्कम्प दिपते हुए एक आकाश-दीप के समान...

तभी खितीन बाबू ने मुझे देखा। छूटते ही बोले— “बोले छिलाम, बेचे थाक्ते ऐशि किछु लागे न!” (मैंने कहा था, बचे रहने के लिए ज्यादा कुछ नहीं चाहिए!) ओर हँस दिए।

इसके बाद मैंने फिर खितीन बाबू को नहीं देखा। कहानी की पूर्णता के लिए एक बार और देखना चाहिए था; पर मैं कहानी नहीं सुना रहा, सच्ची बात सुना रहा हूँ। तो मैंने उन्हें फिर नहीं देखा। लेकिन सुनने वाले की कमी में कहानी नहीं रूकती, देखने वाला न होने से जीवन-नाटक बन्द नहीं हो जाता। मैंने भी सुनकर ही जाना; खितीन बाबू की कहानी अपने चरम उत्कर्ष तक पहुँचकर ही पूरी हुई; टहलने ले जाते समय उनकी पहिएदार कुर्सी एक मोटर ठेले से टकरा गई थी, वे नीचे आ गए और गाड़ी का पहिया उनके कन्धे के ऊपर से चला गया—बाँह का जो टूँठ बचा हुआ था, उसे भी चूर करता हुआ। वे अस्पताल में ले जाए गए, बाँह अलग की गई और कन्धे की पट्टी हुई; ऑपरेशन के बाद उन्हें होश रहा और उन्होंने पूछा कि कन्धे हैं या नहीं? फिर कहा, ‘जाना गेलो, ऐटा छाड़ाओ चले!’ (मालूम हो गया कि इसके बिना भी चल सकता है!) लेकिन अबकी बार वह चलना अधिक देर तक नहीं हुआ; अस्पताल से वे नहीं निकले। शरीर में विष फैल गया और भोर में अनजाने में उनकी मृत्यु हो गई।

खितीन बाबू: एक साधारण क्लर्क : साधारण दुर्घटना : मृत्यु हो गई लेकिन क्या सचमुच ? अब भी उन्हें देख सकता हूँ। कभी लगता है कि जिसे देखता हूँ वह केवल अंगहीन ही नहीं है, मानो अशरीरी ही है; केवल एक दीप्ति-अंगों से क्या ? अवयवों से क्या ? 'जाना गेलो एटा छाड़ाओ चले' - इस सबके बिना काम चल सकता है। केवल दीप्ति: केवल संकल्प-शक्ति। रोटी, कपड़ा, आसरा, हम चिल्लाते हैं, ये सब जरूरी हैं, निस्सन्देह जीवन के एक स्तर पर ये सब निहायत जरूरी हैं लेकिन मानव-जीवन की मौलिक प्रतिज्ञा ये नहीं हैं; वह है केवल मानव का अदम्य, अटूट संकल्प....



### इस पाठ के बारे में

अज्ञेय 'खितीन बाबू' कहानी के लेखक हैं। लेखक का मानना है कि मनुष्य अपने जीवन में अनेक जीव-जन्तु, पेड़ पौधों, के सम्पर्क में आता है। साधारण रूप से वह सबको एक-सा मान लेता है। उदाहरण के लिए हर विदेशी को भारतीय एक जैसे लगते हैं और भारतीय को विदेशी। यही हाल पशुपक्षियों के साथ भी होता है। पर हर व्यक्ति अपने आप में अलग विलक्षण अद्भुत और स्मरणीय होता है। लेखक को जो अद्वितीय और अविस्मरणीय चेहरे याद हैं उनमें से एक है खितीन बाबू। एक साधारण से व्यक्ति है और उनका चेहरा भी साधारण ही है। पर जीवन को उनके द्वारा दिया गया संदेश असाधारण है। इसलिए लेखक, ने उन्हें 'गुदड़ी का लाल' कहा है। वे पंक से निकले कमल हैं। खितीन बाबू साधारण से पढे लिखे व्यक्ति थे। पेशे से उनकी एक आँख नहीं थी, एक हाथ भी नहीं था। चेहरपर चेचक के दाग थे। वह सदा हँसमुख रहते थे। अपने इस शारीरिक विकार को भी उन्होंने सहज ढंग से ग्रहण कर लिया था। खितीन बाबू की हँसी में एक अद्भुत खुलापन था। रेल गाड़ी की दुर्घटना में उनकी एक टांग भी चली गई। फिर तो वे बैसाखी लेकर चलने लगे। उनके शरीर के एक अवयव के चले जाने पर लगता था जैसे उनके शरीर की शक्ति और अधिक बढ़ गई है। जीवन को सही ढंग से समझने की उनमें अद्भुत शक्ति थी। शरीर के उस अंग के जाने का उन्हें दुःख भी नहीं था। खितीन बाबू ने इस बात को सुन्दर

ढंग से इस कहानी के लेखक अज्ञेय को समझाया था। उन्होंने समझाया टॉसिल का कटना, अपेंडिक्स का कटना केवल दर्द का दूर होना था। अपने इस पैर के कट जाने से उन्हें किसी तरह का कष्ट नहीं हो रहा था। जब अपनी इस बात को वह समझाकर कहते थे तब उनकी आँखों में सच्ची हँसी रहा करती थी। उनमें किसी भी तरह का बनावटीपन नहीं था। फिर समय आया जब उनकी दूसरी बाँह चली गई।

खितीन बाबू भोजन प्रिय भी थे। वे पाक कला में निपुण थे। अज्ञेय जी के मित्र खितीन बाबू के भी मित्र थे। लेखक के मित्र के घर में एक बार खितीन बाबू बैठे थे। वह भी; उनकी रसोई में वे मूढ़े पर बैठे थे। दावत के लिए खाना बन रहा था। मित्र की गृहलक्ष्मी को वे पकवान बनाना सिखा रहे थे। अज्ञेयजी ने जब मित्र की पत्नी से पूछा तो उन्होंने कहा कि रसोई घर में मित्र पत्नी केवल नाम के लिए है। खाना तो खितीन बाबू के हिसाब से बन रहा है।

खितीनदा ने भी माहौल को थोड़ा हलका करने के लिए कहा—मेरे हाथ का बना खाना क्या आप लोग सब खा लेंगे। हाथ की बात वे कर रहे थे। सच तो यह था कि उनके दोनों हाथ ही नहीं थे। खितीनदा के इन शब्दों में दुःख नहीं था व्यंग्य नहीं था। अफसोस भी नहीं था। सीधे—सरल ढंग से उन्होंने अपनी बात कह दी थी। अपनी बात कहने के बाद वे ठहाका मार कर हँसने लगे। उनकी इस हँसी में बनावटीपन भी नहीं था। अपनी इस हँसी के बाद फिर एक राजा की कहानी भी सुनाई। कथा भोजन विलासी और शय्या विलासी राजा की थी। खितीन बाबू की बातों को सुनकर गृहपत्नी ने भी चुटकी ली। उन्होंने कहा कि यदि उस समय खितीन बाबू होते तो उन्हें राजा के यहाँ दो दो नौकरी मिल जाती। खितीन बाबू ने अपनी बात में थोड़ा और आगे बढ़े और कहा कि, तब फिर दो-दो नौकरों की जरूरत नहीं होती। एक ही से काम चल जाता। खितीन बाबू गीत भी अच्छा गा लेते थे।

खितीन बाबू की दोनों हाथ नहीं, दोनों टांगें भी नहीं। अब इन सबके बावजूद भी अदम्य मनोबल था उनमें। उन्हें देखकर ऐसा लगाता था कि किसी मूर्तिकार ने उनके सिर और कंधे को तो अच्छी तरह से बनाया है पर

उस शरीर में हाथ और पैर बनाना भूल गया है। एक अद्भुत बात खितीन बाबू में थी। जैसे-जैसे उनके अंग उनसे विदा ले रहे थे, वैसे-वैसे उनकी आत्मा की कान्ति अधिक बढ़ती जा रही थी। वे तब भी कहते थे कि जीवन में जिन्दा रहने के लिए बहुत कुछ नहीं चाहिए।

एक बार की बात है। खितीन बाबू की पहिएदार कुर्सी मोटर ठेले से टकराई और वे अस्पताल में भर्ती हुए। होश आते ही कहने लगे कि अब शायद कंधा नहीं रहा पर इसके बिना भी जिया जा सकता है। अबकी बार वे नहीं लौटे। हमेशा के लिए उनकी साँसें थम गईं।

एक साधारण व्यक्ति थे खितीन बाबू। उनकी मृत्यु भी साधारण ढंग से हुई। अंगहीन हो कर भी वे सबको प्रेरणा देते रहे। प्रेरणा यह है कि यदि हममें मनोबल हो, संकल्प शक्ति हो तो संसार की कोई शक्ति हमें रोक नहीं सकती। छोटी-छोटी चीजें दुःख बाधाएँ तो उत्पन्न कर सकती हैं पर रास्ता नहीं रोक सकती हैं। हम जिन चीजों के लिए संघर्ष करते हैं जैसे रोटी, कपड़ा और मकान- वे सब हमें चाहिए। निःसन्देह चाहिए। जीवन में केवल इतना ही यथेष्ट नहीं है। मानव जीवन की मौलिक प्रतिज्ञा है अदम्य और अटूट संकल्प।

### प्रश्न और अभ्यास

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर पचाश-पचाश शब्दों में दीजिए।

१. खितीन बाबू देखने में कैसे थे ?
२. खितीन बाबू के हाथ-पैर कैसे कट गये ?
३. तीसरी बार, खितीन बाबू लेखक से किसे तरह मिले ?
४. भोजन विलासी को राजा के यहाँ नौकरी कैसे मिली ?
५. शय्या विलासी के राजा के यहाँ कैसे नौकरी मिली ?
६. खितीन बाबू की मौत कैसी हुई ?
७. खितीन बाबू का व्यक्तित्व कैसा था ?
८. साधारण होने पर भी खितीन बाबू असाधारण क्यों थे ?
९. खितीन बाबू के किस गुण ने उन्हें अमर बना दिया ?
१०. इस कहानी से हमें क्या शिक्षा मिलती है ?



# मोहन राकेश

(जन्म : ८ जनवरी सन् १९२५-मृत्यु-१९७२ई)

मोहन राकेश का जन्म ८ जनवरी १९२५ को हुआ। उनके पिता कर्मचंद भुगलानी एक वकील थे। ८ फरवरी १९४१ को पिता की आकस्मिक मृत्यु हुई। १६ वर्षीय राकेश को समाज के कड़ुवे जीवन यथार्थ झेलना पड़ा तथा संघर्ष के पथ पर चलना पड़ा। १९५२ में पंजाब विश्वविद्यालय से हिन्दी में एम.ए. की परीक्षा उत्तीर्ण की। सन १९४७ में भारत विभाजन ने उनके परिवार को जमीन से उखाड़ फेंका। वे मुंबई आ पहुँचे। फिल्मी दुनिया में पटकथा लेखक के रूप में काम किया। मन नहीं लगा तो छोड़ दिया। फिर 'टाइम्स ऑफ इंडिया' में काम किया। यहाँ पर भी उनका स्वाभिमान आड़े आया। काफी भागदौड़ के बाद डी.ए.वी. कॉलेज अमृतसर में प्राध्यापक का पद संभाला किन्तु उससे भी मुक्त हो गए। फिर दिल्ली आकर 'अक्षर प्रकाशन' से नाता जोड़ा। दिल्ली विश्वविद्यालय में प्राध्यापक बनने के साथ-साथ १९६२ में 'सारिका' का संपादन भार ग्रहण किया। उनके शोधकर्म पर उन्हें १ लाख रूपए का नेहरू फेलोशिप पुरस्कार मिला। गोविंद चातक ने उनके वैवाहिक और पारिवारिक जीवन के बारे में लिखा है कि "वे कभी भी स्थिर नहीं रहे, न नौकरी से बंधे, न व्यक्तियों से, घर उन्हें डराता रहा"।

मोहन राकेश हिन्दी साहित्य में एक कहानीकार, नाटककार, उपन्यासकार, निबंधकार, अनुवादक, डायरी लेखक, संस्मरण लेखक के रूप में सुपरिचित हैं। वे नई कहानी आन्दोलन के प्रमुख कर्णधार रहे। वे एक ऐसे नाटककार थे जिन्होंने हिन्दी नाट्यकला को रंगमंचीय श्रेष्ठता और पहचान दी। वे आधुनिक शैली के नाटककार थे।

उनकी पहली कहानी थी जो १९४४ के 'सरस्वती' में प्रकाशित हुई। उनकी व्यक्ति केंद्रित कहानियों में पात्रों की स्थिति और मनःस्थितियों का ऐसा सच्चा चित्रण है कि व्यक्ति उसे पढ़ने के साथ-साथ महसूस भी करता है। स्त्री-पुरुष के तनाव, घुटन, अलगाव के साथ-साथ उन्होंने 'वैवाहिक जीवन-मूल्यों के सत्य को भी उद्घाटित किया है।

### **रचनाएँ:**

**कहानी संग्रह:** इन्सान के खंडहर, नये बादल, जानवर और जानवर, एक और जिंदगी, चेहरे, फौलाद का आकाश, मलवे का मालिक

**नाटक:** आषाढ़ का एक दिन, लहरों के राजहंस, आधे अधूरे

**उपन्यास:** अंधेरे बंद कमरे, न आनेवाला कल, काँपता हुआ दरिया, नीली रोशनी की बाहें,

**संस्मरण:** आखिरी चट्टान, ऊँची झील

**डायरी:** मेरा पन्ना

## परमात्मा का कुत्ता

बहुत-से लोग यहाँ-वहाँ सिर लटकाए बैठे थे, जैसे किसी का मातम करने आए हों। कुछ लोग अपनी पोटलियाँ खोलकर खाना खा रहे थे। दो-एक व्यक्ति पगड़ियाँ सिर के नीचे रखकर कम्पाउंड के बाहर सड़क के किनारे बिखर गए थे। छोले-कुलचे वाले का रोजगार गरम था, और कमेटी के नल के पास एक छोटा-मोटा क्यू लगा था। नल के पास कुर्सी डालकर बैठा अर्जीनवीस धड़ाधड़ अर्जियाँ टाइप कर रहा था। उसके माथे से बहकर पसीना उसके होंठों पर आ रहा था, लेकिन उसे पोंछने की फुरसत नहीं थी। सफेद दाढ़ियों वाले दो-तीन लम्बे - ऊँचे जाट अपनी लाठियों पर झुके हुए उसके खाली होने का इन्तजार कर रहे थे। धूप से बचने के लिए अर्जीनवीस ने जो टाट का परदा लगा रखा था, वह हवा से उड़ा जा रहा था। थोड़ी दूर मोढ़े पर बैठा उसका लड़का अँग्रेजी प्राइमर को रट्टा लगा रहा था-सी ए टी कैट-कैट माने बिल्ली, बी ए टी बैट-बैट माने बल्ला एफ ए टी फैट-फैट माने मोटा...। कमीजों के आधे बटन खोले और बगल में फाइलें दबाए कुछ बाबू एक-दूसरे से छेड़खानी करते रजिस्ट्रेशन ब्रांच से रिकार्ड ब्रांच की तरफ जा रहे थे। लाल बेल्ट वाला चपरासी, आस-पास की भीड़ से उदासीन, अपने स्टूल पर बैठा मन-ही-मन कुछ हिसाब कर रहा था। कभी उसके होंठ हिलते थे और कभी सिर हिल जाता था। सारे कम्पाउंड में सितम्बर की खुली धूप फैली थी। चिड़ियों के कुछ बच्चे डालों से कूदने और फिर ऊपर को उड़ने का अभ्यास कर रहे थे और कई बड़े-बड़े कौए पोर्च के एक सिरे से दूसरे सिरे तक चहलकदमी कर रहे थे। एक सत्तर-पचहत्तर की बुढ़िया, जिसका सिर काँप रहा था और चेहरा झुर्रियों के गुंझल के सिवा कुछ नहीं था, लोगों से पूछ रही थी कि वह अपने लड़के के मरने के बाद उसके नाम एलाट हुई जमीन की हकदार हो जाती है या नहीं... ?

अन्दर हॉल कमरे में फाइलें धीरे-धीरे चल रही थीं। दो-चार बाबू बीच की मेज के पास जमा होकर चाय पी रहे थे। उनमें से एक दफ्तरी

कागज पर लिखा अपनी ताजा गजल दोस्तों को सुना रहा था और दोस्त इस विश्वास के साथ सुन रहे थे कि वह जरूर उसने 'शमा' या 'बीसवीं सदी' के किसी पुराने अंक में से उड़ाई है।

“अजीज साहब, ये शेर आज ही कहे हैं, या पहले कहे हुए शेर आज अचानक याद हो आए हैं?” साँवले चेहरे और घनी मूँछों वाले एक बाबू ने बायीं आँख को जरा-सा दबाकर पूछा। आस-पास खड़े सब लोगों के चेहरे खिल गए।

“यह बिल्कुल ताजा गजल है,” अजीज साहब ने अदालत में खड़े होकर हलफिया बयान देने के लहजे में कहा, ‘इससे पहले भी इसी वजन पर कोई और चीज कही हो तो याद नहीं।’ और फिर आँखों से सबके चेहरों को टटोलते हुए वे हल्की हँसी के साथ बोले, “अपना दीवाना तो कोई रिसर्चदां ही मुरतब करेगा....।”

एक फरमायशी कहकहा लगा जिसे 'शी-शी' की आवाजों ने बीच में ही दबा लिया। कहकहे पर लगायी गयी इस ब्रेक का मतलब था कि कमिश्नर साहब अपने कमरे में तशरीफ ले आए हैं। कुछ देर का वक्फा रहा, जिसमें सुरजीत सिंह वल्द गुरमीत सिंह की फाइल एक मेज से एक्शन के लिए दूसरी मेज पर पहुँच गयी, सुरजीत सिंह वल्द गुरमीत सिंह मुसकराता हुआ हॉल से बाहर चला गया, और जिस बाबू की मेज से फाइल गयी थी, वह पाँच रूपये के नोट को सहलाता हुआ चाय पीने वालों के जमघट में आ शामिल हुआ। अजीज साहब अब आवाज जरा धीमी करके गजल का अगला शेर सुनाने लगे।

साहब के कमरे से घंटी हुई। चपरासी मुस्तैदी से उठकर अन्दर गया, और उसी मुस्तैदी से वापस आकर फिर अपने स्टूल पर बैठ गया।

चपरासी से खिड़की का पर्दा ठीक कराकर कमिश्नर साहब ने मेज पर रखे ढेर-से कागजों पर एक साथ दस्तखत किए और पाइप सुलगाकर 'रीडर्ज डाइजेस्ट' का ताजा अंक बैग से निकाल लिया। लेटीशिया बाल्ड्रिज का लेख कि उसे इतालवी मर्दों से क्यों प्यार है, वे पढ़ चुके थे। और लेखों में



हृदय की शल्य-चिकित्सा के सम्बन्ध में जे.डी. रेडक्लिफ का लेख उन्होंने सबसे पहले पढ़ने के लिए चुन रखा था। पृष्ठ एक सौ ग्यारह खोलकर वे हृदय के नए ऑपरेशन का ब्यौरा पढ़ने लगे।

तभी बाहर से कुछ शोर सुनाई देने लगा।

कम्पाउंड में पेड़ के नीचे बिखरकर बैठे लोगों में चार नए चेहरे आ शामिल हुए थे। एक अधेड़ आदमी था, जिसने अपनी पगड़ी जमीन पर बिछा ली थी और हाथ पीछे करके तथा टाँगें फैलाकर उस पर बैठ गया था। पगड़ी के सिरे की तरफ उससे जरा बड़ी उम्र की एक स्त्री और एक जवान लड़की बैठी थीं और उनके पास खड़ा एक दुबला-सा लड़का आस-पास की हर चीज को घूरती नजर से देख रहा था। अधेड़ मरद की फैली हुई टाँगें धीरे-धीरे पूरी खुल गयी थीं और आवाज इतनी ऊँची हो गयी थी कि कम्पाउंड के बाहर से भी बहुत-से लोगों का ध्यान उसकी तरफ खिंच गया। था। वह बोलता हुआ, साथ अपने घुटने पर हाथ मार रहा था। “सरकार वक्त ले रही है! दस-पाँच साल में सरकार फैसला करेगी कि अर्जी मंजूर होनी चाहिए या नहीं। सालो, यमराज भी तो हमारा वक्त गिन रहा है। उधर वह वक्त पूरा होगा और इधर तुमसे पता चलेगा कि हमारी अर्जी मंजूर हो गयी है।”

चपरासी की टाँगें जमीन पर पुख्ता हो गयी, और वह सीधा खड़ा हो गया। कम्पाउंड में बिखरकर बैठे और लेटे हुए लोग अपनी-अपनी जगह पर कस गये। कई लोग उस पेड़ के पास आ जमा हुए।

“दो साल से अर्जी दे रखी है कि सालो, जमीन के नाम पर तुमने मुझे जो गड़वा एलाट कर दिया है, उसकी जगह कोई दूसरी जमीन दो। मगर दो साल से अर्जी यहाँ के दो कमरे ही पार नहीं कर पायी!” वह आदमी अब जैसे एक मजमे में बैठकर तकरीर करने लगा, “इस कमरे से उस कमरे में अर्जी के जाने में वक्त लगता है! इस मेज से उस मेज तक जाने में भी वक्त लगता है! सरकार वक्त ले रही है! लो मैं आ गया हूँ आज यहीं पर अपना सारा घर-बार लेकर। ले लो जितना वक्त तुम्हें लेना है!.... सात साल की

भुखमरी के बाद सालों ने जमीन दी है मुझे-सौ मरले का गड़ढा! उसमें क्या मैं बाप-दादों की अस्थियाँ गाड़ूँगा? अर्जी दी थी कि मुझे सौ मरले की जगह पचास मरले दे दो-लेकिन जमीन तो दो! मगर अर्जी दो साल से वक्त ले रही है! मैं भूखा मर रहा हूँ, और अर्जी वक्त ले रही है!”

चपरासी अपने हथियार लिए हुए आगे आया-माथे पर त्योरियाँ और आँखों में क्रोध। आस-पास की भीड़ को हटाता हुआ वह उसके पास आ गया।

“ए मिस्टर, चल हियाँ से बाहर!” उसने हथियारों की पूरी चोट के साथ कहा, “चल...उठ...!”

“मिस्टर आज यहाँ से नहीं उठ सकता।” वह आदमी अपनी टाँगें थोड़ी और चौड़ी करके बोला, “मिस्टर आज यहाँ का बादशाह है। पहले मिस्टर देश के बेताज बादशहों की जय बुलाता था। अब वह किसी की जय नहीं बुलाता। अब वह खुद यहाँ का बादशाह है..... बेताज बादशाह उसे कोई लाज-शरम नहीं है। उस पर किसी का हुक्म नहीं चलता। समझे, चपरासी बादशाह!”

“अभी तुझे पता चल जाएगा कि तुझ पर किसी का हुक्म चलता है या नहीं”, चपरासी बादशाह और गरम हुआ, “अभी पुलिस के सुपर्द कर दिया जाएगा तो तेरी सारी बादशाही निकल जाएगी...।”

“हा-हा!” बेताज बादशाह हँसा। “तेरी पुलिस मेरी बादशाही निकालेगी? तू बुला पुलिस को। मैं पुलिस के सामने नंगा हो जाऊँगा और कहूँगा कि निकालो मेरी बादशाही! हममें से किस-किसकी बादशाही निकालेगी पुलिस? ये मेरे साथ तीन बादशाह और हैं। यह मेरे भाई की बेवा है-उस भाई की, जिसे पाकिस्तान में टाँगों से पकड़कर चीर दिया गया था। यह मेरे भाई की लड़की है, जो अब ब्याहने लायक हो गयी है। इतकी बड़ी कुँवारी बहन आज भी पाकिस्तान में है। आज मैंने इन सबको बादशाही दे दी है। तू ले आ जाकर अपनी पुलिस, कि आकर इन सबकी बादशाही निकाल दे। कुत्ता साला...!”

अन्दर से कई-एक बाबू निकलकर बाहर आ गये थे। 'कुत्ता साला' सुनकर चपरासी आपे से बाहर हो गया। वह तैश में उसे बाँह से पकड़कर घसीटने लगा, "तुझे अभी पता चल जाता है कि कौन साला कुत्ता है! मैं तुझे मार-मारकर..." और उसने उसे अपने टूटे हुए बूट की एक ठोकर दी। स्त्री और लड़की सहमकर वहाँ से हट गयीं। लड़का एक तरफ खड़ा होकर रोने लगा।

बाबू लोग भीड़ को हटाते हुए आगे बढ़ आए और उन्होंने चपरासी को उस आदमी के पास से हटा लिया। चपरासी फिर भी बड़बड़ाता रहा, "कमीना आदमी, दफ्तर में आकर गाली देता है। मैं अभी तुझे दिखा देता कि..."

"एक तुम्हीं नहीं, यहाँ तुम सबके-सब कुत्ते हो," वह आदमी कहता रहा, "तुम सब भी कुत्ते हो, और मैं भी कुत्ता हूँ। फर्क इतना है कि तुम लोग सरकार के कुत्ते हो-हम लोगों की हड्डियाँ चूसते हो और सरकार की तरफ से भौंकते हो। मैं परमात्मा का कुत्ता हूँ। उसकी दी हुई हवा खाकर जीता हूँ, और उसकी तरफ से भौंकता हूँ। उसका घर इन्साफ का घर है। मैं उसके घर की रखवाली करता हूँ। तुम सब उसके इन्साफ की दौलत के लुटेरे हो। तुम पर भौंकना हमारा फर्ज है, मेरे मालिक का फरमान है। मेरा तुमसे असली बैर है। कुत्ते का बैरी कुत्ता होता है। तुम मेरे दुश्मन हो, मैं तुम्हारा दुश्मन हूँ। मैं अकेला हूँ, इसलिए तुम सब मिलकर मुझे मारो। मुझे यहाँ से निकाल दो। लेकिन मैं फिर भी भौंकता रहूँगा। तुम मेरा भौंकना बन्द नहीं कर सकते। मेरे अन्दर मेरे मालिक का नूर है, मेरे वाहगुरू का तेज है। मुझे जहाँ बन्द कर दोगे, मैं वहाँ भौंकूंगा, और भौंक-भौंककर तुम सबके कान फाड़ दूँगा। साले, आदमी के कुत्ते, जूठी हड्डी पर मरनेवाले कुत्ते, दुम हिला-हिलाकर जीनेवाले कुत्ते....!"

"बाबाजी, बस करो," एक बाबू हाथ जोड़कर बोला, "हम लोगों पर रहम खाओ, और अपनी यह सन्तबानी बन्द करो। बताओ तुम्हारा नाम क्या है, तुम्हारा केस क्या है...?"

“मेरा नाम है बारह सौ छब्बीस बटा सात! मेरे माँ-बाप का दिया हुआ नाम खा लिया कुत्तों ने। अब यही नाम है जो तुम्हारे दफ्तर का दिया हुआ है। मैं बारह सौ छब्बीस बटा सात हूँ। मेरा और कोई नाम नहीं है। मेरा यह नाम याद कर लो। अपनी डायरी में लिख लो। वाहगुरू का कुत्ता-बारह सौ छब्बीस बटा सात।”

“बाबाजी, आज जाओ, कल या परसों आ जाना। तुम्हारी अर्जी की कार्रवाई तकरीबन-तकरीबन पूरी हो चुकी है! और मैं खुद ही तकरीबन-तकरीबन पूरा हो चुका हूँ! अब देखना यह है कि पहले कार्रवाई पूरी होती है, कि पहले मैं पूरा होता हूँ! एक तरफ सरकार का हुनर है और दूसरी तरफ परमात्मा का हुनर है! तुम्हारा तकरीबन-तकरीबन अभी दफ्तर में ही रहेगा और मेरा तकरीबन-तकरीबन कफन में पहुँच जाएगा। सालों ने सारी पढ़ाई खर्च करके दो लफ्ज ईजाद किए हैं-शायद और तकरीबन। ‘शायद आपके कागज ऊपर चले गए हैं-‘तकरीबन-तकरीबन कार्रवाई पूरी हो चुकी है’! शायद से निकालो और तकरीबन में डाल दो! तकरीबन से निकालो और शायद में गर्क कर दो। तकरीबन तीन - चार महीने में तहकीकात होगी।... शायद महीने-दो महीने में रिपोर्ट आएगी।’ मैं आज शायद और तकरीबन दोनों घर पर छोड़ आया हूँ। मैं यहाँ बैठा हूँ और यही बैठा रहूँगा। मेरा काम होना है, तो आज ही होगा और अभी होगा। तुम्हारे शायद और तकरीबन के ग्राहक ये सब खड़े हैं। यह ठगी इनसे करो....।”

बाबू लोग अपनी सद्भावना के प्रभाव से निराश होकर एक-एक करके अन्दर लौटने लगे।

“बैठा है, बैठा रहने दो।”

“बकता है, बकने दो।”

“साला बदमाशी से काम निकालना चाहता है।”

“लेट हिम बार्क हिमसेल्फ टु डेथ।”

बाबुओं के साथ चपरासी भी बड़बड़ाता हुआ अपने स्टूल पर लौट गया। “मैं साले के दाँत तोड़ देता। अब बाबू लोग हाकिम हैं और हाकिमों का कहा मानना पड़ता है, वरना...”

“अरे बाबा, शान्ति से काम ले। यहाँ मिन्नत चलती है। पैसा चलता है। धौंस नहीं चलती,” भीड़ में से कोई उसे समझाने लगा।

वह आदमी उठकर खड़ा हो गया।

“मगर परमात्मा का हुक्म हर जगह चलता है,” वह अपनी कमीज उतारता हुआ बोला, “और परमात्मा के हुक्म से आज बेताज बादशाह नंगा होकर कमिश्नर साहब के कमरे में जाएगा। आज वह नंगी पीठ पर साहब के डंडे खाएगा। आज वह बूटों की ठोकें खाकर प्राण देगा। लेकिन वह किसी की मिन्नत नहीं करेगा। किसी को पैसा नहीं चढ़ाएगा। किसी की पूजा नहीं करेगा। जो वाहेगुरू की पूजा करता है, वह और इससे पहले कि वह अपने कहे को किए में परिणत करता, दो-एक आदमियों ने बढ़कर तहमद की गाँठ पर रखे उसके हाथ को पकड़ लिया। बेताज बादशाह अपना हाथ छुड़ाने के लिए संघर्ष करने लगा।

“मुझे जाकर पूछने दो कि क्या महात्मा गाँधी ने इसीलिए इन्हें आजादी दिलाई थी कि ये आजादी के साथ इस तरह सम्भोग करें? उसकी मिट्टी खराब करें? उसके नाम पर कलंक लगाएँ? उसे टके-टके की फाइलों में बाँधकर जलील करें? लोगों के दिलों में उसके लिए नफरत पैदा करें? इनसान के तन पर कपड़े देखकर बात इन लोगों की समझ में नहीं आती। शरम तो उसे होती है जो इनसान हो। मैं तो आप कहता हूँ कि मैं इनसान नहीं, कुत्ता हूँ...!”

सहसा भीड़ में एक दहशत-सी फैल गयी। कमिश्नर साहब अपने कमरे से बाहर निकल आए थे। वे माथे की त्योरियों और चेहरे की झुर्रियों को गहरा किए भीड़ के बीच में आ गए।

“क्या बात है? क्या चाहते हो तुम?”

“आपसे मिलना चाहता हूँ, साहब, “ वह आदमी साहब को घूरता हुआ बोला, “सौ मरले का एक गड्ढा मेरे नाम एलाट हुआ है। वह गड्ढा आपको वापस करना चाहता हूँ ताकि सरकार उसमें एक तालाब बनवा दे, और अक्सर लोग शाम को वहाँ जाकर मछलियाँ मारा करें। या उस गड्ढे में

सरकार एक तहखाना बनवा दे और मेरे जैसे कुत्तों को उसमें बन्द कर दे...!”

“ज्यादा बक-बक मत करो और अपना केस लेकर मेरे पास आओ।”

“मेरा केस मेरे पास नहीं है, साहब! दो साल से सरकार के पास है-आपके पास है। मेरे पास अपना शरीर और दो कपड़े हैं। चार दिन बाद ये भी नहीं रहेंगे, इसलिए इन्हें भी आज ही उतार दे रहा हूँ। इसके बाद बाकी सिर्फ बारह सौ छब्बीस बटा सात रह जाएगा। बारह सौ छब्बीस बटा सात को मार-मारकर परमात्मा के हुजूर में भेज दिया जाएगा...।”

“यह बकवास बन्द करो और मेरे साथ अन्दर आओ।”

और कमिश्नर साहब अपने कमरे में वापस चले गए। वह आदमी भी कमीज कन्धे पर रखे उस कमरे की तरफ चल दिया।

“दो साल चक्कर लगाता रहा, किसी ने बात नहीं सुनी। खुशामदें करता रहा, किसी ने बात नहीं सुनी। वास्ते देता रहा, किसी ने बात नहीं सुनी...।”

चपरासी ने उसके लिए चिक उठा दी और वह कमिश्नर साहब के कमरे में दाखिल हो गया। घंटी बजी, फाइलें हिलीं, बाबुओं की बुलाहट हुई, और आधे घंटे के बाद बेताज बादशाह मुस्कराता हुआ बाहर निकल आया। उत्सुक आँखों की भीड़ ने उसे आते देखा, तो वह फिर बोलने लगा, “चूहों की तरह बिटर-बिटर देखने से कुछ नहीं होता। भौंको, भौंको, सबके-सब भौंको। अपने-आप सालों के कान फट जाएँगे। भौंको कुत्तों, भौंको....”

उसकी भौजाई दोनों बच्चों के साथ गेट के पास खड़ा इन्तजार कर रही थी। लड़के और लड़की के कन्धे पर हाथ रखते हुए वह सचमुच बादशाह की तरह सडक पर चलने लगा।

“हयादार हो, तो सालहों-साल मुँह लटकाए खड़े रहो। अर्जियाँ टाइप कराओ और नल का पानी पियो। सरकार वक्त ले रही है! नहीं तो बेहया बनो। बेहयाई हजार बरकत है।”

वह सहसा रूका और जोर से हँसा।

“यारो, बेहयाई हजार बरकत है।”

उसके चले जाने के बाद कम्पाउंड में और आस-पास मातमी वातावरण पहले से और गहरा हो गया। भीड़ धीरे-धीरे बिखरकर अपनी जगहों पर चली गयी। चपरासी की टाँगें फिर स्टूल पर झुलने लगीं। सामने के कैटीन का लड़का बाबुओं के कमरे में एक सेट चाय ले गया। अर्जीनवीस की मशीन चलने लगी और टिक-टिक की आवाज के साथ उसका लड़का फिर अपना सबक दोहराने लगा। ‘पी ई एन पेन-पेन माने कलम, एच ई ए हेन माने मुर्गी, डी ई ऐन डेन-डेन माने अँधेरी गुफा...!’

### शब्दार्थः

मातम-शोक; कंपाउंड - अहाता; क्यू-पंक्ति; अर्जियाँ-आवेदन पत्र, प्रार्थना पत्र;

फरमाइश-आदेश; तशरीफ लाना-पदार्पण करना; मुस्तैदी से-फूर्ती से; बौरा-विवरण;

एलाट-आबंटन; मजमे:- जमघट, भीड़भाड़, लोगों का जमाव;

आस्थियाँ - हड्डियाँ; सुपुर्द - हवाले;

बेवा - विधवा; लायक - योग्य, काबिल;

तैश - गुस्सा; इंसाफ-न्याय;

फर्ज - कर्तव्य; फरमान - आज्ञा, आदेश;

बैरी - दुश्मनी; नूर - चमक, ध्योति;

रहम - दया; तकरीबन - लगभग;

हुनर - कला. लफज - शब्द, बोल;

ईपाठ - आतिपकार, किसी नवीन वस्तु का निर्माण;

गर्क-निमग्न, डूबा हुआ; तहकीकात-छानबीन;

खोज - अनुसंधान;

हुकम - आदेश; मिलत - गुहार, निवेदन;

तहमद - गमछा; जलील - बदनामी, निंदा;

दहशत - डर, खौफ, भय; इन्सान - मनुस्य;  
दहशत - डर, खौफ, भय; इन्सान - मनुष्य;  
नहरवाना - तलगृह; बरकत - फायदा, लाभ,  
बैहया - बेशर्म; भयादार - लज्जाशील;  
इन्तजार - अपेक्षा ; भौजाई - भाभी, भावज;  
बुलावट - पुकार, बुलावा;  
बकवास - बेकार की बातें

## प्रश्न और अभ्यास

निम्न प्रश्नों के उत्तर दस-बारह वाक्यों में दीजिए।

अंक-५

१. बूढ़े ने अपने को बेताज बादशाह क्यों कहा ?
२. बूढ़े ने कंपाउंड में आकर क्या किया ?
३. बूढ़े के साथ और कौन कौन थे, उनकी कैसी दशा थी ?
४. ऑफिस के अन्दर का दृश्य कैसा था ?
५. कमिशनर साहब ने ऑफिस में आकर क्या किया ?
६. बूढ़े को ऑफिस के लोगों ने किस तरह समझाया ?
७. ऑफिस के बाहर चिल्लाने से बूढ़े को कैसा लाभ मिला ?
८. 'परमात्मा का कुत्ता' कहानी का सार अपने शब्दों में लिखिए।
९. इस कहानी के माध्यम से लेखक हमें क्या संदेश देना चाहते हैं ?
१०. 'परमात्मा का कुत्ता' शीर्षक की सार्थकता प्रतिपादित कीजिए।





# मन्नू भंडारी

(जन्म: ३ अप्रैल सन् १९३१ ई-)

मन्नू भंडारी का जन्म मध्यप्रदेश के भानपुरा कस्बे में ३ अप्रैल, सन् १९३१ ई० को हुआ। उनके पिता श्री सुख संपत राय भंडारी जानेमाने लेखक और पत्रकार थे। इसलिए मन्नू भंडारी को लेखन का संस्कार विरासत में मिला। उनके बचपन का नाम महेन्द्र कुमारी था परंतु लेखन के लिए उन्होंने 'मन्नू' नाम का चुनाव किया। एम्.ए.की डिग्री हासिल करने के अपरांत उन्होंने कुछ समय के लिए कलकत्ता में अध्यापन-कार्य किया। फिर दिल्ली के मीरांडा हाउस में प्राध्यापिका बन गईं। उनका विवाह हिन्दी के सुप्रसिद्ध कथाकार श्री राजेन्द्र यादव से हुआ।

विद्यार्थी जीवन से ही मन्नू भंडारी की रुचि कहानी लेखन की ओर रही। वे नई कहानी आन्दोलन की प्रमुख पक्षधर रहीं। उनकी अधिकांश कहानियाँ नारी के अकेलेपन और उसकी त्रासदी की संवेदनापूर्ण अभिव्यक्ति के लिए चर्चित रहीं। नारी होने के नाते वे और भी अधिक गहराई और बारीकी से उसे अभिव्यक्त करने में सफल हुईं। वे नारी को पूर्वाग्रह मुक्त नारी की दृष्टि से देखे जाने के पक्षधर हैं, इसलिए अपनी कहानियों और उपन्यासों में वे नारी की सच्ची और यथार्थ तस्वीर प्रस्तुत करती हैं। 'मेरी प्रिय कहानियाँ' पुस्तक की भूमिका में वे लिखती हैं- "उस पुरानी बात में कहीं एक बहुत बड़ी सच्चाई है। यातना और करुणा हमें दृष्टि देती है। अपने सुख और उल्लास के क्षणों में हम अपने से बाहर होते हैं और औरों के साथ होते हैं। हो सकता है, उल्लास और प्रसन्नता के क्षण मेरी जिन्दगी के सर्वश्रेष्ठ क्षण रहे हों, लेकिन यातना के वे क्षण मेरे अपने हैं और सृजनधर्मी हैं। इन्हें विभिन्न कहानियों में अभिव्यक्ति न मिली होती तो निस्संदेह जिन्दगी का बहुत कुछ टूट-बिखर गया होता"।

मन्नू भंडारी हिन्दी के लोकप्रिय कथाकारों में से हैं। नौकरशाही में व्याप्त भ्रष्टाचार के बीच आम आदमी की पीड़ा और दर्द की गहराई को उद्घाटित करनेवाले उनके उपन्यास 'महाभोज' पर आधारित नाटक अत्यधिक लोकप्रिय हुआ। इसी प्रकार 'यही सच है' पर आधारित 'रजनीगंधा' नामक फिल्म अत्यन्त लोकप्रिय हुई और उसको सन् १९७४ ई० की सर्वश्रेष्ठ फिल्म का पुरस्कार प्राप्त हुआ। इसके अतिरिक्त उन्हें हिन्दी अकादमी, दिल्ली का शिखर सम्मान, भारतीय भाषा परिषद, कोलकाता; राजस्थान संगीत नाटक अकादमी; व्यास सम्मान आदि कई सम्मान और पुरस्कार प्राप्त हुए हैं।

### प्रमुख रचनाएँ:

- कहानी-संग्रह : एक प्लेट सैलाब, मैं हार गई, तीन निगाहों की एक तस्वीर, यही सच है, अकेली, त्रिशंकू। आँखों देखा झूठ
- उपन्यास : आपका बंटी, महाभोज, एक इंच मुस्कान,
- नाटक : बिना दीवारों का घर।
- फिल्म पटकथा : रजनीगंधा, स्वामी, निर्मला, दर्पण

## मजबूरी

“बेटू को खिलावे जो एक घड़ी,  
उसे पिन्हाऊँ मैं सोने की घड़ी।  
बेटू को खिलावे जो एक पहर,  
उसे दिलाऊँ मैं सोने की मोहर।”

बूढ़ी अम्मा जोर-जोर से यह लोरी गा रही थीं, और लाल मिट्टी से कमरा लीप रही थीं। उनके घोंसले जैसे बालों में से एक मोटी-सी लट निकलकर उनके चेहरे पर लटक आई थी, और उनके हिलते सिर के साथ हिल-हिलकर मानो लोरी पर ताल ठोंक रही थी। बरतन मलने के लिए आई हुई नर्बदा ने जो यह देखा तो हैरत में आ गई, बोली, “अम्मा, यह क्या हो रहा है? कल तो गठिया में जुड़ी पड़ी थीं, दरद के मारे तन-बदन की सुध नहीं थी, और आज ऐसी सरदी में आँगन लीपने बैठ गई।”

एक क्षण को अम्मा का हाथ रुका, फिर पुलकित स्वर में वे बोलीं, “अरी नर्बदा, मेरा बेटू आ रहा है कल!” और फिर गाने के लहजे में बोली, “बेटा मेरा आवेगा...”

“ओहो, तो रामेसुर लल्ला आ रहे हैं कल!” नर्बदा बोली।

“मैं कह नहीं रही थी कि छुट्टी मिली नहीं कि वह दौड़ा आएगा। अम्मा के मारे तो उसके प्राण सूखते हैं। इतना बड़ा हो गया, फिर भी यहाँ आएगा तो रात में एक बार मेरी गोदी में जरूर सोएगा। पर इस बार मैं कह दूँगी कि चल, मैं तुझे गोदी में नहीं लूँगी, अब तू गोदी में सोएगा कि बेटू?” और वे हँस पड़ीं, जैसे कोई भारी मजाक कर दिया हो। फिर एकाएक काम का खयाल आ जाने से बोलीं, “ले री, मैंने खड़िया भिगो रखी है, जरा बाहर के आँगन को मांड दे। बस ऐसा मांडना कि सब देखते ही रह जाएँ। क्या करूँ, आजकल हाथ काँपने लगा है, नहीं तो मैं मांड लेती!”

नर्बदा को खड़िया के काम में लगाकर वे फिर गाने लगीं:

“आओ री चिड़िया चून करो  
बेटू ऊपर राइ-नून करो  
नून करो-नून करो...

“ले, मैं तो भूल ही गई-क्या है इसके आगे? रामेसुर छोटा था तो ढेरों याद थीं, उसके बाद तो छोटा बच्चा ही घर में नहीं रहा सो सब भूल गई। मेरा रामेसुर तो बिना लोरी सुने कभी सोता ही नहीं था, बेटू भी जरूर उसी पर पड़ा होगा। अब तो दौड़ता-फिरता होगा आँगन में।” और उसकी धुँधली आँखों के आगे जैसे दौड़ते-फिरते बेटू के चित्र बनने-बिगड़ने लगे। उसकी कल्पना में खोई-खोई वे बोलती गई, “पहले बहू लेकर आई थी तब तो दो महीने का था, बस पालने में पड़ा-पड़ा हाथ-पैर मारता था और मैं जाकर खड़ी हो जाती थी तो टुकुर-टुकुर मुझे ही निहारा करता था। सूरत भी एकदम रामेसुर पर ही पड़ी है उसकी। अब तो खुद देख लेना, सारा घर नापता फिरेगा।” और वे हँस पड़ी। इन सब कल्पनाओं से ही उनका शरीर रोमांचित हो उठा।

अम्मा का काम समाप्त हुआ तो मिट्टी में सनी दोनों हथेलियों को जमीन पर पूरे जोर से टिकाते हुए उन्होंने उठने का प्रयत्न किया, पर एक सर्द आह-सी उनके मुँह से निकलकर रह गई। वे उठ नहीं पाईं तो बड़े ही कातर स्वर में बोलीं, “अरे, नर्बदा मुझे जरा उठा दे री, घुटने तो जैसे फिर जुड़ गए।”

“जुड़ेंगे तो सही। ऐसी सर्दी में कब से मिट्टी में सनी बैठी हो? बेटे-बहू आ रहे हैं तो ऐसी क्या नवाई हो रही है? सभी के घर आते हैं।” और नर्बदा ने अम्मा को सहारा देकर उठाया, उसके हाथ धुलाए और खटिया पर लिटा दिया।

“तू भी कैसी बात करती है नर्बदा? तीन बरस बाद मेरा बेटा आ रहा है और मैं आँगन भी न लीपूँ?”

“तीन बरस बाद आ रहा है तो मैं तो यही कहूँगी कि उनमें मोहमाया नहीं है। तुम यों ही मरी जाती हो उनके पीछे।”

“देख नर्बदा, मेरे रामेसुर के लिए कुछ मत कहना। यह तो मैं जानती हूँ कि तीन-तीन बरस मुझसे दूर रहकर उसके दिन कैसे बीतते हैं, पर क्या करे, नौकरी तो आखिर नौकरी ही है। मेरे पास आज लाखों का धन होता तो बेटे को यों नौकरी करने परदेश नहीं दुरा देती पर-“ और उनके कुछ क्षण पहले पुलकते चेहरे पर मायूसी छा गई। आँखें अनायास ही डबडबा आईं।

नर्बदा यहाँ बरसों से काम करती है, अम्मा के लिए उसके मन में अपार श्रद्धा है, पर बेटे के प्रसंग को लेकर वह जब-तब उनका दिल दुखा दिया करती है। कुछ और खरी-खोटी सुनाने का उसका मन हो रहा था, पर आज वह मानो अम्मा पर तरस खाकर चुप रह गई। जब तक वह काम करती रही, अम्मा शून्य में ताकती जाने क्या सोचती रहीं, बोलीं एक शब्द समय ग्वाले को कहती जाना कि कल दूध जल्दी दे जाए, और अब दूध ज्यादा लगेगा। बच्चे वाले घर में तो दूध पूरा ही रहना चाहिए। और जब तक वे लोग यहाँ रहें, तब तक तू चौका-बर्तन करके यहीं रहा करना। घर में पाँच प्राणी रहते हैं तो काम तो निकल ही आता है, फिर बच्चे का साथ रहेगा। लेन-देन की चिन्ता मत करना, मैं रामेसुर को एक कहूँगी, तो वह पाँच देगा।“

कुछ तो गठिया के दर्द ने और कुछ नर्बदा की बातों ने अम्मा का उत्साह तोड़ दिया। बहुत-से काम उन्होंने सोच रखे थे, पर वे कुछ न कर सकीं। बस अपनी खाट पर पड़े-पड़े भूली-बिसरी लोरियाँ याद करके गुनगुनाती रहीं। धीरे-धीरे रात के अंधकार में उनके मन की मायूसी भी डूब गई और वे भोर होने के पहले ही उठ बैठीं। घुटने का दर्द मन के उत्साह में खो गया, और बेटे-पोते से मिलने की उमंग में मौसम की ठण्डक भी जैसे जाती रही। सात बजते-बजते तो वे सब घर ही पहुँच जाएँगे। साथ छोटा बच्चा है, दूध तो गरम करके रख ही दूँ। फिर उन दोनों को भी तो चाय की आदत होगी, ऐसी सर्दी में चाय तैयार नहीं मिलेगी तो अम्मा को क्या कहेंगे भला? दूसरा चूल्हा भी जला दूँ, नहाने को गरम पानी भी तो चाहिए।

उस कड़कड़ाती सर्दी में ठिठुरते-ठिठुरते अम्मा ने बेटे-बहू को गरम करने के सारे आयोजन कर डाले। फिर सोचा-लगे हाथ तरकारी भी काट दूँ, नहीं तो वे इधर आएँगे और उधर मैं चूल्हे में सिर देकर बैठ जाऊँगी। तीन बरसों में मेरा बेटा आ रहा है, घड़ी-दो-घड़ी उससे बात भी करूँगी? इनका क्या, ये तो अपनी राजी-खुशी पूछकर औषधालय चल देंगे। तरकारी भी कट गई-अब क्या करे? अम्मा अपने को इतना व्यस्त कर देना चाहती थीं, जिससे प्रतीक्षा के बोझिल क्षण महसूस न हों, पर समय जैसे बीत ही नहीं रहा था: तभी दूर कहीं घोड़ों के घुँघरूओं की आवाज आई और तांगा अम्मा के घर के सामने रुका। अम्मा पागलों की तरह दरवाजे की ओर दौड़ पड़ीं। रामेश्वर की गोद से उन्होंने झपटकर बच्चे को ऐसे छीना, मानो किसी चोर-उचक्के के हाथ से अपने बच्चे को छीन रही हों, और कसकर उसे सीने से चिपका लिया। चरण छूते रामेश्वर की पीठ पर हाथ फेरते हुए दूसरे हाथ के घेरे में उसे लपेट लिया। बच्चा एकाएक इतना प्यार और शारीरिक कष्ट पाकर रो उठा और माँ के पास जाने के लिए मचलने लगा। वे उसके आँसू पोंछने लगीं, और उनकी अपनी आँखों से भी आँसू की धारा बहने लगी। पुचकारने पर भी जब बच्चा चुप नहीं हुआ तो बहू की ओर बढ़ते हुए उन्होंने कहा, “अभी मुझे पहचानता नहीं। एक बार मुझे पहचानने लगेगा तो छोड़ेगा नहीं।” उपेक्षित-सी एक ओर खड़ी बहू ने बच्चे को ले लिया।

चाय-पानी हो गया, और रामेश्वर नहाने चला गया तो अम्मा ने बहू को अकेले पाकर कहा, “खबर तो दी होती बहू, कि तुम्हारे महीने चढ़े हैं, कितने महीने हैं?”

झेंपते हुए बहू ने उत्तर दिया, “यह भी कोई लिखने की बात थी अम्मा!” फिर जरा रुकते-रुकते कहा, मानो कहने का साहस बटोर रही हो, “अम्मा, इस बार बेटू को आप ही रखेंगी। जैसे भी हो, जब तक मैं यहाँ हूँ तब तक इसे अपने से हिला लीजिए। मैं तो इसके मारे ही परेशान थी, दो-दो को तो...”

अम्मा आँखें फाड़-फाड़कर ऐसे देख रही थीं मानो जो कुछ सुन रही हैं उस पर विश्वास करें या नहीं। फिर एकाएक बोल पड़ी, “तुम कह क्या रही हो बहू, बेटू को मेरे पास छोड़ जाएगी, मेरे पास! सच? हे भगवान, तुम्हारी सब बात पूरी हों, तुम बड़भागी होओ। मेरे इस सूने घर में एक बच्चा रहेगा तो मेरा जन्म सफल हो जाएगा।” फिर वे एकाएक रो पड़ीं, “तुम क्या जानो बहू! अपने कलेजे के टुकड़े को निकालकर बम्बई भेज दिया। रामेसुर के बिना यह घर तो मसान-जैसा लगता है। ये ठहरे सन्त आदमी, दीन-दुनिया से कोई मतलब नहीं। मैं अकेली ये पहाड़ जैसे दिन कैसे काटती हूँ सो मैं जानती हूँ। भगवान तुम्हें दूसरा भी बेटा दें, तुम उसे पाल लेना! मैं समझूँगी, तुमने मेरा रामेसुर लेकर मुझे अपना रामेसुर दे दिया! पर देखो, अपनी बात से मुड़ना नहीं... मैं... मैं “ तभी रामेश्वर ने ठिठुरते हुए रसोई में प्रवेश किया, “अम्मा, एक अंगीठी जरा इधर रख दो। बम्बई में रहकर तो सरदी सहने की आदत नहीं रही। यहाँ तो नहाते ही जैसे जम गया।”

अम्मा ने अंगीठी रामेश्वर के पास सरका दी। तभी रामेश्वर का ध्यान अम्मा के कपड़ों की ओर गया, “यह क्या अम्मा, तुम कुछ भी गरम कपड़ा नहीं पहने हो! सरदी खा गई तो बीमार पड़ जाओगी। फिर तुम्हें गठिया की भी तकलीफ है, ऐसे कैसे चलेगा? न हो तो बनवा लो कपड़े, मैं रुपये दे दूँगा।”

पर यह सब अनसुना करके अम्मा बोलीं, “देख, आज बहू ने कह दिया है कि बेटू अब मेरे पास रहेगा, और अब जो बच्चा होगा वह तुम्हारे पास। तू कहीं टाल मत जाना, बात पक्की हो गई। आज से बेटू मेरा हुआ!”

“अरे, हम सभी तो तुम्हारे हैं अम्मा, बोलो नहीं?” परिहास के स्वर में रामेश्वर बोला।

“हो क्यों नहीं। मेरे नहीं तो और किसके हो! पर बेटू आज से मेरे पास रहेगा।” अम्मा ने कहा।

तभी बैद्यराज जी कुछ खाली शीशियाँ लेकर आए तो अम्मा बोलीं, “सुनते हो जी, इस बार बेटू यहीं रहेगा। बेचारी बहू खुद अभी बच्ची है, दो-दो को कैसे सम्भालेगी? और फिर पहले बच्चे पर तो यों भी दादी का हक होता है।” उनके हाथों की गति बढ़ गई थी और वे अब उठने-बैठने में जरा भी तकलीफ महसूस नहीं कर रही थीं।

दोपहर को नर्बदा से भी कहा, “बहू के तो फिर बच्चा होने वाला है, बेचारी दो-दो को कैसे सम्भालेगी, सो मुझसे कहने लगा-अम्मा, बेटू को तो तुम्हें ही रखना पड़ेगा। उसे कहने में बड़ा संकोच हो रहा था कि मुझे बुढ़ापे में तकलीफ होगी, पर तू ही बता, घर के बच्चे को रखने में कैसी तकलीफ भला! ऐसे समय में घर के ही लोग काम न आएँगे, तो कौन आएँगे भला!”

इसके बाद घर में जो कोई भी आया, उसे यही खबर सुनाई गई। अम्मा इस बात का इतना प्रचार कर देना चाहती थीं कि यदि फिर किसी कारण से बहू का मन फिर भी जाए तो शरम के मारे ही वह अपना इरादा न बदल पाए। अम्मा का सारा दिन बेटू को खिलाने में और उसकी नोन-राई करने में ही बीतता। जाने कैसी-कैसी औरतें घर में आती हैं, तन्दुरुस्त-सुन्दर बच्चे को कड़ी नजर से देख जाएँ तो लेने के देने पड़ जाएँ। बेटू को लेकर उनके शिथिल और नीरस जीवन में नया उत्साह आ गया था। घुटनों के दर्द के मारे कहाँ तो वे अपने शरीर का बोझ ही नहीं ढो पाती थीं, और कहाँ अब वे बेटू को लादे फिरती हैं। शाम को उसके साथ आँख-मिचौनी खेलती। बेटू का घोड़ा बनकर आँगन में दौड़तीं-फिरतीं। बेटू के साथ-साथ उनका भी जैसे बचपन लौट आया था। देखने वाले अम्मा के पागलपन पर हँसते, पर उसकी उन्हें जरा भी चिन्ता नहीं थी। रामेश्वर ने टोका, “अम्मा, क्यों उसे लादे फिरती हो, यों ही तुम्हारे घुटनों में दर्द रहता है।” तो बिगड़ पड़ीं, “कैसी बातें करता है रामेश्वर, इसमें भी कोई वजन है जो उठाना भारी पड़े। फूल-जैसा तो हल्का है, खाली-खाली दोनों बेला मिलते टोक दिया। माँ-बाप की नजर ही सबसे ज्यादा लगती है बच्चों को, तभी तो बेटू एक दिन भी ठीक नहीं रहता है।”



निश्चित समय पर दूध पिलाना, शीशी में दूध भरना, बाद में उसकी सफाई करना आदि सब काम अम्मा के लिए बिल्कुल नए थे। उन्होंने तो रामेश्वर को अपने ढंग से पाला था। जब बच्चा रोया झट दूध पिला दिया। दूध के लिए भी समय देखना पड़ता है, यह बात उनके लिए एकदम नई थी। दो साल तक तो उन्होंने रामेश्वर को अपना दूध पिलाया था, उसके बाद गिलास से पिलाती थीं। यह शीशी का नखरा उस जमाने में था ही नहीं, और होगा भी तो शहरों में। पर रमा से बड़ी लगन और तत्परता से एक जिज्ञासु विद्यार्थी की तरह उन्होंने यह सब भी सीखा। पति से जिद करके औषधालय की दीवार-घड़ी, जो पिछले बीस वर्षों से वहीं लगी थी, उतरवाकर घर में लगवाई, और घड़ी देखना सीखा। उनके एकाकी जीवन में समय का कोई महत्व ही नहीं था। न पति को दफ्तर जाना रहता था, न बच्चों को स्कूल, जो समय पर कोई काम करना पड़े। पर अब एकाएक ही उन्हें घड़ी की आवश्यकता महसूस होने लगी थी। यों उनकी याददाश्त बड़ी कमजोर थी, पर दूध के समय उन्होंने जो याद किए तो कभी नहीं भूलें। शुरु-शुरु में यह सब उन्हें बड़ा अटपटा-सा लगा, पर फिर भी वे सारा काम बड़ी सतर्कता से करतीं। शीशी में दूध भरते समय उनका बूढ़ा हाथ अक्सर काँप जाया करता था, और दूध बाहर को गिर जाता था। उस समय वे एक असफल विद्यार्थी की तरह सफाई पेश करती थीं, “बहुत जल्दी सीख लूँगी बहू। जरा-सा हाथ काँप गया था, फिर शीशी का मुँह भी तो कितना छोटा है।” उनका कहने का भाव ऐसा होता मानो वे कह रही हों कि इस छोटी-सी गलती के कारण ही कहीं तुम बेटू को ले मत जाना!

बीस दिन के बाद जब बहू ने अपनी माँ के घर प्रयाण किया तो बेटू ने न जिद की, न वह रोया ही। माँ के कड़े नियन्त्रण के बाद दादी के असीम दुलार में रहना, जहाँ कोई बन्धन नहीं, अकुश नहीं, बेटू को बड़ा अच्छा लगा। बहू चली गई, अम्मा ने निश्चिन्तता की एक साँस ली। महीना बीतते-न बीतते खबर आई कि बहू के दूसरा लड़का हुआ है। अम्मा की छाती पर से जैसे एक भारी बोझ हट गया। संशय का एक काँटा जो रमा के जाने के बाद

भी उनके मन में चुभा करता था, वह भी निकल गया। बेटू अब मेरा है, पूरी तरह मेरा है, यह भावना उसी दिन पूरी तरह उनके मन में जम पाई।

जाने से पहले रामेश्वर ने अम्मा और पिताजी के लिए ढेर-सारे कपड़े बनवाए थे। अम्मा सारे मोहल्ले की औरतों को दिखाती फिरती। जो कोई आता उसी से कहती, “अम्मा के पीछे तो बस रामेसुर पागल है, न आगे की सोचता है, न पीछे की। उसका बस चले तो मुझ पर ही सारा घर लुटा दे। लाख मना करती रही, पर एक बात नहीं मानी। अब बुढ़ापे में ये छपी साड़ियाँ पहनकर कहाँ जाऊँगी, पर वह क्यों सुनने लगा?” उनकी झुरियों-भरे चेहरे पर चमक आ जाती, और वे आँखें मूँदकर अपने बेटे की चिरायु होने की कामना करतीं। जब रामेश्वर के जाने का समय आया तो उन्होंने रो-रोकर घर भर दिया। हिचकियाँ लेते हुए बोलीं, “देख रामेसुर, यह तीन-तीन बरस तक घर का मुँह न देखने वाली बात अब नहीं चलेगी। साल में एक बार तो आ ही जाया कर मेरे लाल! नौकरी की जगह नौकरी है, और माँ-बाप की जगह माँ-बाप! मेरी तबीयत भी ठीक नहीं रहती, किसी दिन भी आँख मूँदी रह जाएँगी, तो मैं तेरी सूरत को भी तरस जाऊँगी। सो कम-से-कम अपनी इस बुढ़िया माँ को... “पर आगे वे कुछ नहीं कह सकीं, बस फूट-फूट कर रोने लगीं। आँसू-भरी आँखों से वे रामेश्वर के तांगे को तब तक देखती रहीं, जब तक वह आँखों से ओझल नहीं हो गया। उसके बाद उन्होंने कसकर बेटू को अपनी छाती से चिपका लिया।

दूसरे साल रामेश्वर नहीं आया, केवल रमा आई, शायद बेटू को देखने। पर बेटू को जो देखा तो उसका माथा ठनक गया। जिस बेटू को वह छोड़ गई थी, और जिसे अब वह देख रही है, दोनों में कोई सामंजस्य ही नहीं था। बात-बात में उसकी ज़िद देखकर रमा का खून खौल जाता। खाना वह दादी अम्मा के हाथ से खाता, और सारे दिन चरता रहता था। रात में सोता तो दादी अम्मा के दोनों अँगूठे पकड़कर सोता, और जब तक दादी अम्मा उसे लोरी नहीं सुनातीं तब तक उसे नींद नहीं आती थी। सारे दिन दादी अम्मा की

धोती का पल्ला पकड़कर उनके पीछे-पीछे घूमा करता, और शाम को गली-मुहल्ले के गन्दे-गन्दे बच्चों के बीच खेलता। उसे देखकर कौन कहेगा कि यह एक पढ़ी-लिखी सभ्य लड़की का बच्चा है। घर के सामने से जो कोई भी फेरीवाला निकल जाता, उसी से बेटू कुछ-न-कुछ जरूर खरीदता, न दिलवाने से जमीन-आसमान एक कर देता, और मचल-मचलकर सारे आँगन में लोटता।

आखिर रमा को जबान खोलनी है पढ़ी, “अम्मा, आपने तो इसे बिगाड़कर धूल कर रखा है, इस तरह कैसे चलेगा?”

दादी माँ ने हँसते हुए बड़े सहज भाव से कहा, “अरे, बचपन में कौन जिद नहीं करता बहू! रामेशुर भी ऐसे ही करता था, यह तो सच हूबहू उसी पर पड़ा है। समय आने पर सब अपने-आप छूट जाएगा। यही तो उमर होती है जिद करने की, साल-दो-साल और कर ले फिर अपने-आप सब-कुछ छूट जाएगा।” और वे मुग्ध भाव से गोद में बैठे बेटू के बालों में अँगुलियाँ चलाने लगीं। रमा खून का घूँट पीकर रह गई। रमा की इच्छा हुई बेटू को अपने साथ लेती जाए, पर एक साल का पप्पू ही उसे इतना परेशान करता था कि दोनों को साथ रखने का साहस नहीं हुआ। बम्बई जाते ही उसने अम्मा के पास जरा खरी-खरी भाषा में पत्र पहुँचाने आरम्भ कर दिए। जैसे ही वह चार साल का हुआ, रमा ने लिख दिया कि अम्मा अब उसे वहाँ के नर्सरी स्कूल में भर्ती करवा दें, कम-से-कम कुछ तमीज तो सीखेगा! चिट्ठियाँ पढ़ती तो अम्माँ को लगता बहू का दिमाग बौरा गया है। भला चार साल का दूध पीता बच्चा कहाँ स्कूल जा सकता है! रमा के पत्र आते रहे और अम्मा का ढर्रा अपने ढंग से बराबर चलता रहा।

दो साल बाद फिर रमा और रामेश्वर अपने तीन साल के पप्पू को लेकर आए। पप्पू ने अंग्रेजी की छोटी-छोटी कविताएँ याद कर रखी थीं और बड़े अदब के साथ बोलता था। अभी दो महीने पहले ही रमा ने उसे वहाँ के अंग्रेजी स्कूल में भर्ती करवाया था। पर बेटू वैसा ही था जैसा रमा

उसे छोड़ गई थी। उम्र में वह जरूर बड़ा हो गया था बाकी सब-कुछ वैसा ही था। रमा उठते-बैठते रामेश्वर से कहती, “जैसे भी हो, इस बार बेटू को लेकर चलना ही होगा। यही हाल-रहा तो इसकी जिन्दगी चौपट हो जाएगी। यह भी कोई ढंग है भला!”

“अम्मा को बड़ा दुख होगा, और बेटू तुम्हारे पास जरा भी तो नहीं आता, वह अम्मा को छोड़कर कैसे रहेगा? ये सारी बातें सोच लो!” रामेश्वर इस प्रसंग को जैसे टालना चाहते थे।

“अम्मा के दुख की बात मैं मानती हूँ।” रमा ने अपने आवेश को दबाते हुए कहा, “पर जब उन्हें लिखा कि स्कूल में डाल दो तो वह भी तो उनसे नहीं हुआ। जैसे बताती हूँ वैसे तो रखती नहीं। अब इनके दो दिन के सुख के लिए बच्चे का सारा भविष्य बिगाड़ कर रख दूँ?” उसका गला भर्रा आया था। रामेश्वर बेचारा बड़े धर्म-संकट में था। उसे पत्नी की बातों में भी सार नजर आता था, और वह अम्मा की भावनाओं को भी ठेस नहीं पहुँचाना चाहता था, सो बिना कुछ निर्णय दिए सारी बात रमा पर छोड़ कर वह बम्बई लौट गया। रमा कभी मिठाई दिलाकर, कभी तांगे में घुमाकर बेटू को अपने से हिलाने की कोशिश करने लगी। बेटू को तांगे में घूमने का बेहद शौक था, जो कम ही पूरा होता था। अम्मा को कभी स्वप्न में भी खयाल नहीं था कि रमा पप्पू के रहते हुए भी बेटू को ले जाने का प्रस्ताव रखेगी। जिस दिन उन्होंने सुना, उनके पैरों-तले की जमीन सरक गई। जब रमा ने बेटू को उनके पास छोड़ने का प्रस्ताव रखा था, तब एकाएक उन्हें अपने कानों पर भी विश्वास नहीं हुआ था। ठीक उसी प्रकार ले जाने की बात पर भी उन्हें विश्वास नहीं हो रहा था। फिर भी काँपते स्वर में कहा, “कैसी बात करती हो बहू। मेरे बिना वह पल-भर भी तो नहीं रहता। इतना बड़ा हो गया, फिर भी जब तक मैं कौर नहीं देती तब तक वह खाता नहीं, तो एकाएक मुझसे दूर कैसे रहेगा?”

“नहीं रहेगा तो थोड़े दिन रो लेगा, आखिर उसकी पढ़ाई का सिलसिला

भी तो जमाना है अम्मा! देखो, पप्पू स्कूल जाने लगा है और यह अभी तुम्हारा पल्ला पकड़े-पकड़े ही घूमता है।”

“अरे पढ़ लेगा, बहू पढ़ लेगा। उमर आएगी तो पढ़ लेगा। यह मत सोचना कि मैं उसे गँवार ही रहने दूँगी। रामेसुर को भी तो मैंने ही पाला-पोसा है, उसे क्या गँवार रख दिया? फिर यह तो मुझे और भी प्यारा है। मूल से ब्याज ज्यादा प्यारा होता है, इसे तो मैं खूब पढ़ाऊँगी, तू चिन्ता मत कर बहू, पर इसे ले जाने की बात मत कर...” और वे फफफ-फफककर रो पड़ीं।

रमा की आँखों में भी आँसू तो आ गए, फिर भी उसने अपने पर काबू पाते हुए, और स्वर को भरसक कोमल बना कर कहा, “मैं आपका दिल नहीं दुखाना चाहती अम्मा, पर आपके इस जरूरत से ज्यादा प्यार ने ही तो इसे बिगाड़कर धूल कर दिया है। एक भी आदत तो इसमें अच्छी नहीं है। यदि आप सचमुच ही इसे प्यार करती हैं और इसका भला चाहती हैं तो इसे मेरे साथ भेज दीजिए, और उसके साथ दुश्मनी ही निभानी है तो रखिए इसे अपने पास।” कहने के बाद ही रमा को लगा, जैसे बहुत बड़ी बात कह गई है।

“मैं....मैं अपने बेटू के साथ दुश्मनी निभाऊँगी-मैं उसकी दुश्मन हूँ... मैं .... तू मेरे प्यार की परीक्षा लेना चाहती है, पर ऐसी कठिन परीक्षा तो मत ले बहू, इससे तो तू मेरे प्राण ही ले ले!” और वे फूट-फूटकर रोने लगीं। कुछ देर बाद एकाएक स्वर संयत करके बोलीं, “ले जा बहू, ले जा। मेरा बेटू फूले-फूले, पढ़-लिखकर लायक बने इससे बढ़कर खुशी की बात मेरे लिए और क्या हो सकती है। मेरा क्या है, मेरी चार दिन की हँसी-खुशी के लिए मैं तेरे बच्चे की जिन्दगी नहीं बिगाड़ूँगी। मैं अपढ़-गँवार औरत ठहरी, इसे लायक कहाँ से बनाऊँगी! तू इसे ले जा। चार दिन को मेरी जिन्दगी में हँसी-खुशी आ गई, इसी में तेरा बड़ा जस मानूँगी...” और रमा कुछ कहे उससे पहले ही उन्होंने रसोईघर में जाकर भीतर से किवाड़ बन्द कर लिए।

रमा को खुद इस सारी बात से बड़ा दुःख हो रहा था, पर बच्चे की बात सोच कर वह निर्णय बदलने में अपने को असमर्थ पा रही थी। यही सोच – सोचकर वह अपने को तसल्ली दे रही थी कि समय का मरहम अम्मा के घाव को अपने-आप भर देगा।

दो दिन बाद औषधालय के एकमात्र नौकर और दोनों बच्चों को लेकर रमा अपनी माँ के यहाँ चल पड़ी। बेटू को बताया ही नहीं गया कि रमा उसे अपने साथ ले जा रही है। रोज की भाँति तांगे में घूमने के लालच में वह चला गया। जाते समय कह गया, “दादी-अम्मा, मैं तुम्हारे लिए मिठाई और गोली लेकर आऊँगा।” दादी-अम्मा ने उसे कलेजे से लगा लिया। एक बार उनकी इच्छा हुई कि वह बेटू को बता दें कि रमा उसे हेमशा के लिए उनसे अलग करके ले जा रही है, पर फिर भी वे चुप रहीं।

उसके बाद जो भी कोई घर में आया, अपार आश्चर्य से उसने पूछा, “अरे, बहू बेटू को ले गई? तुम तो कहती थी कि बेटू अब तुम्हारे पास ही रहेगा।” अम्मा को लगा, जैसे किसी ने उनके कलेजे पर गरम सलाख दाग दी हो। तिलमिलाकर जवाब देतीं, “कहती तो थी पर अब रखा नहीं जाता। गठिया के मारे मेरा तो उठना-बैठना तक हराम हो रहा है, तो मैंने ही कह दिया कि बहू, अब पप्पू बड़ा हुआ सो बेटू को भी ले जाओ।”

“अरे अम्मा, एक पल तो तुम उसे छोड़ती नहीं थीं, अब रह लोगी उसके बिना?”

“नहीं रह सकती तो भेजती क्यों? अब यह कोई बच्चे पालने की उमर है भला! जिसकी थाती उसी को सौंपी! बुढ़ापा है, कुछ भजन-पूजन ही कर लूँ। उनके मारे मेरा सब-कुछ छूट गया था।” बड़े ही संदिग्ध भाव से अम्मा की इस दलील को औरतें स्वीकार कर पाती थीं। आज अम्मा के पास कोई काम नहीं था करने को सो, खाली आँगन में दर्दिले स्वर से एक लोरी गुनगुना रही थीं। शाम को गुब्बारे वाला आया, बुढ़िया के बाल वाला आया, खिलौने की मिठाई बेचने वाला आया तो मुरझाये स्वर में अम्मा ने सबको

यही जवाब दिया, “जाओ, भाई जाओ। आज तुम्हारा ग्राहक नहीं है। उसे मैंने उसकी अम्मा के साथ भेज दिया। अब यहाँ मत आया करो, कभी मत आया करो, कोई तुम्हारी चीज नहीं खरीदेगा!” और उनका मन सुबक उठता, पर उनकी आँखों के आँसू जैसे सूख गए थे!

तीसरे दिन औषधालय का नौकर वापस आया, तो सबसे पहले खबर दी कि दादी-अम्मा को याद करते-करते बेटू को बुखार आ गया और वह उसे भरे बुखार में छोड़कर आया है। वह रमा के हाथ से न कुछ खाता है न दवाई पीता है। अम्मा ने सुना तो ऊपर की साँस ऊपर और नीचे की साँस नीचे रह गई। पागलों की भांति दौड़ती हुई औषधालय में पहुँची, “अरे, सुनते हो, बेटू रो-रोकर बीमार हो गया है। मैं तो पहले ही जानती थी कि वह मेरे बिना रहेगा नहीं, पर बहू को कौन समझाए! अब तो रात की गाड़ी से ही जाकर मुझे उसे लाना होगा! वह तो रो-रोकर प्राण दे देगा। हे भगवान, मेरी मत पर भी पत्थर पड़ गए थे जो बहू की बात मान गई?”

अम्मा रोती थीं और कपड़े ठीक करती जाती थीं। नर्बदा आई तो आश्चर्य से बोली, “कहाँ की तैयारी कर रही हो अम्माँ?”

“अरे, शिबू बहू को छोड़कर लौटा तो बताया कि बेटू ने रो-रोकर बुखार चढ़ा लिया। मैं तो भेजकर अपनी तरफ से निश्चिन्त हो गई थी, पर वह रह सकता है क्या? उसके तो प्राण मुझमें कुछ ऐसे पड़ गए थे कि क्या बताऊँ। कोई अगले जन्म का संस्कार ही समझो! अब जाकर लाना पड़ेगा, नहीं तो छोरा रो रोकर प्राण दे देगा।” और गर्व और आनन्द से उनकी छाती फूल गई।

तीसरे दिन ही बेटू को लेकर वे लौट आईं। जिसने देखा उसी ने कहा, “अरे, चार दिन में ही बच्चा सूख गया।”

“सूखेगा नहीं, कुछ तो खाया नहीं, और एक पल को आँसू नहीं टूटा। मैं तो सोचती थी कि बहू के हवाले करके सुख से पूजा-पाठ करूँगी, पर अब यह रहता भी तो नहीं।”

एक साल उन्होंने इसी प्रकार और निकाल दिया। रमा बम्बई से आई और फिर बेटू का वही रवैया देखा तो सोचा कि वह उसे सीधे बम्बई ले जाती तो यह सारा काण्ड नहीं होता। अम्मा बम्बई तक आ नहीं सकती थी। सो इस बार फिर एकबार दादी माँ को रुलाकर उनके मना करने पर भी वह बेटू को लेकर बम्बई के लिए चल पड़ी। जाने किस आशा से अम्मा ने अपनी सारी जमा-पूँजी खर्च करके शिबू को साथ कर दिया। रमा मन करती रही कि अब दोनों बच्चे बड़े हैं और वह सम्भाल लेगी, पर अम्मा ने शिबू को साथ भेज ही दिया।

दूसरे दिन से जो कोई भी आता, अम्मा उसी के सामने यह मनौती मनाती कि किसी प्रकार बेटू रमा के पास हिल जाए तो वह सवा रुपये का परसाद चढ़ाएँगी। उच्च स्वर से वह रात-दिन रट लगाए रहती कि बेटू मुझे किसी तरह भूल जाए। पर सात दिनों के बाद जब शिबू लौट कर आया तो वे ऐसे दौड़ पड़ीं मानो वह बेटू को लेकर ही आया हो। झपटकर उन्होंने पूछा, “मेरा बेटू कहाँ है? मेरा बेटू ठीक है शिबू, तुझे मैंने किसलिए भेजा था?” उनका स्वर बुरी तरह काँप रहा था।

“इस बार तो अम्मा, बहूजी ने बेटे को हिला दिया। वहाँ बहू जी के मकान में बहुत सारे बच्चे हैं, उन सबसे दोस्ती हो गई, सो खूब खेलता है। ट्राम, बस, बगीचे, झूले-इन सबमें उसका मन लग गया।” शिबू ने बताया तो अम्मा शून्य-पथराई आँखों से उसे देख रही थीं मानो कुछ समझ ही नहीं रही हों। शिबू कहे चला जा रहा था, “चलो तुम्हारी चिन्ता दूर हुई। मैं तो अम्मा, दो दिन इसी मारे ज्यादा रुक गया कि कहीं रोया तो अपने साथ लेता आऊँगा, पर इसबार बहूजी ने उसे समझा दिया और वह भी समझ गया। अब वहाँ जम पाएगा। अब तो तुम परसाद चढ़ाओ अम्मा, और मजे से भजन-पूजन करो।”

एकाएक जैसे अम्मा की चेतना लौट आई, “क्या कहा... बेटू भूल गया? वहाँ जम गया? सच, मेरी बड़ी चिन्ता दूर हुई। इसबार भगवान ने



मेरी सुन ली। जरूर परसाद चढ़ाऊँगी रे, जरूर चढ़ाऊँगी। मेरे बच्चे के जी का कलेस मिटा, मैं परसाद नहीं चढ़ाऊँगी भला ?” और फिर गीली आँखों और काँपते हाथों से, उन्होंने जब से सवा रुपया निकालकर शिबू को देते हुए कहा, “ले, पेड़े लेता आ, अब परसादी चढ़ाकर बाँट ही दूँ। कौन, नर्बदा ? सुना नर्बदा, बेटू मुझे भूल गया-वह भूल ही गया...” और उन्होंने आँचल से भर-भर आती आँखें पोंछीं और हँस पड़ीं।

## शब्दार्थः

ताल ठोंकना - ताल मिलाना; लट-घुँघराले बाल; हैरत-हैरानी; बरतन मलने-बर्तन माँजने; गठिया में जुड़ी पड़ना - जोड़ों का दर्द; सुध-स्मरण; पालने-झूले; टुकुर-टुकुर निहारना-बिना जाने - बुझे देखते रहना; सूरत - चेहरा; सर्द आह-ठंडी चीत्कार; नवाई-नई बात; दुरा देना - दूर कर देना, हटा देना; मायूसी - अदासी; खरी खोटी- बुरी बातें सुनाना, गाली देना; तरस खाना - दया दिखाना; आदत - अभ्यास; चूल्हे में सिर देकर बैठ जाना-रसोई के काम में व्यस्त रहना; राजी खुशी-कुशल-मंगल पूछना; महसूस-अनुभव; तांगा-घोड़ा गाड़ी; महीने चढ़ना-गर्भ बढ़ना; मसान-स्मशान, मरघट; बात से मुड़ना-बात से मुकरजाना; अंगीठी-आग की आँच; तकलीफ-असुविधा, कष्ट; इरादा-इच्छा, लक्ष्य; आँख-मिचौनी-लुका छिपी; नखरा-झंझट; याददाश्त-स्मरणशक्ति; प्रयाण-प्रस्थान; दुलार-प्यार; छपी साड़ियाँ-छींटदार साड़ियाँ; चिरायु-दीर्घायु; आँखों से ओझल-नजर से दूर; खून का घूँट पीकर रहजाना - गुस्से को दबा लेना; दिमाग बौरा जाना - बुद्धि भ्रष्ट होना; धर्म-सकट में पड़ना-असमंजस या द्वंद्व में पड़ना; ठेस-आघात; सिलसिला-क्रम; गँवार-मूर्ख; लायक-योग्य, काबिल; तसल्ली-सांत्वना, संतोष; सलाख-लोहे का बाड़ा, दलील-तर्क; रवैया-ढंग; मनौती मनाना - मन्नत माँगना, मानसिक करना।

## इस पाठ के बारे में:

‘मजबूरी’ मन्नु भंडारी की श्रेष्ठ कहानियों में गिनी जाती है। उन्होंने खुद ही इसे अपनी प्रिय कहानियों में शामिल किया है। यह कहानी एक ऐसी मजबूरी की कथा कहती है जो बड़ी मार्मिक और संवेदनापूर्ण है। इस कथा के केंद्र में एक नादान बच्चा बेटू है जिसके प्रति उसकी दादी माँ के दिल में बेहद प्यार है और जिसमें वह अपने बेटे रामेश्वर को पाती है। दूसरी ओर बेटू की माँ है जिसके मन में अपनी सास के प्रति प्रेम और हमदर्दी तो है फिर की वह अपने बेटे के भविष्य को लेकर सचेतन है। इसलिए दोनों अपनी-अपनी जगह पर सही होते हुए भी हालात के आगे मजबूर हो जाती हैं।

तीन साल के बाद बम्बई से बेटा रामेश्वर अपनी पत्नी ‘रमा’ और तीन साल के बेटे बेटू को लेकर घर आ रहा है। घर पर संत स्वभाववाले वैद्यराज पिता और बूढ़ी माँ हैं। पिता के मन में घर गृहस्थी के प्रति कोई लगाव नहीं है। बूढ़ी माँ अपने पुत्र के स्वागत के लिए जी-जान लगा देती है। उसकी आँखें धुँधली हैं तथा जोड़ों में भीषण दर्द है। फिर भी बिना इसकी परवाह किए घर-आँगन की लाल मिट्टी से लीपा-पोती करती है, दूध मँगवाकर रखती है तथा तरकारी काटकर रखती है। घर में काम करने वाली नर्बदा जब यह कहती है- “तीन बरस बाद आ रहा है तो मैं तो यही कहूँगी कि उनमें मोहमाया नहीं है। तुम यों ही मरी जाती हो उनके पीछे।” तो बूढ़ी अम्मा कहती हैं- ‘देख नर्बदा, मेरे रामेश्वर के लिए कुछ मत कहता। यह तो मैं जानती हूँ कि तीन - तीन बरस मुझसे दूर रहकर उसके दिन कैसे बीतते हैं, पर क्या करे, नौकरी तो आखिर नौकरी ही है। मेरे पास आज लाखों का धन होता तो बेटे को यों नौकरी करने परदेश नहीं दुरा देती।’

तांगा आँगन में आ पहुँचता है। अम्मा पागलों की तरह दरवाजे की ओर दौड़ती है। रामेश्वर की गोद से झपटकर बच्चे को छीन लेती हैं और अपने सीने से लगाती हैं। आगे चलकर जब बहू अपनी कोख में पल रहे दूसरे बच्चे की जानकारी देती है और इसी चिंता में बेटू को यहाँ छोड़ जाने

की बात करती है तो अम्मा को अपनी आँखों और कानों पर विश्वास नहीं होता। एकाएक बोल पड़ती है- “तुम क्या कह रही हो बहू, बेटू को मेरे पास छोड़ जाएगी; मेरे पास। सच? हे भगवान, तुम्हारी सब बात पूरी हो, तुम बड़ भागी होओ, मेरे इस सूने घर में एक बच्चा रहेगा तो मेरा जन्म सफल हो जाएगा।.... तुम क्या जानो बहू, अपने कलेजे के टुकड़े को निकालकर बम्बई भेज दिया। रामेसुर के बिना यह घर तो मसान जैसा लगता है।... भगवान तुम्हें दूसरा भी बेटा दें, तुम उसे पाल लेना। मैं समझूँगी, तुमने मेरा रामेसुर लेकर मुझे अपना रामेसुर दे दिया।“ अम्मा इस खुश खबरी को हर आनेवाले को सुनाती हैं। बेटू को पाकर उसके शिथिल और नीरस जीवन में नया जोश आ जाता है। घुटनों के दर्द के मारे कहाँ तो वे अपने शरीर का बोझ नहीं ढो पाती थीं और कहाँ अब वे बेटू को लादे फिरती हैं। बेटू केलिए घोड़ा बनकर आँगन में दौड़ती-फिरतीं। उसके साथ आँख-मिचौनी खेलतीं। पति से जिद करके औषधालय की दीवार-घड़ी को वहाँ से उतरवाकर घर में लगवाती हैं ताकि सही समय पर बेटू को खिला-पिला सके। बीस दिनों के अंदर अम्मा बेटू को ऐसा मिला लेती हैं कि माँ के जाते समय भी बेटू जाना नहीं चाहता, अम्मा के मन में यह बात जम जाती है कि बेटू अब उसका है, पूरी तरह उसका। बड़े लाड़ प्यार से बेटू को पाला करती हैं। उसे खिलाने-पिलाने-सुलाने और लोरी-कहानी आदि सुनाने में उन्हें आनंद मिलता। यहाँ तक कि उसकी हर इच्छा पूरी कर देतीं। दिन-ब-दिन ज्यादा लाड़-प्यार से बेटू जिद्दी बन जाता है तथा उसका स्वभाव बिगड़ने लगता है। कुछ भी नहीं पढ़ता। दूसरे साल रमा आकर बेटू के ऐसे गलत स्वभाव देखकर दंग रह जाती है और अम्मा से कहती है- “अम्मा, आपने तो इसे बिगाड़ कर धूल कर रखा है, इस तरह कैसे चलेगा?” परंतु अम्मा के मन पर इस सवाल की कोई प्रतिक्रिया नहीं होती। रमा खून का घूँट पीकर रह जाती है। बेटू को अपने साथ बम्बई ले जाने की इच्छा तो होती है परंतु एक साल के पप्पू की परेशानी की वजह से बेटू को छोड़ जाती है। बेटू की फिक्र में सास के पास बार-बार चिट्ठी लिखती है तथा किसी नर्सरी स्कूल में बेटू को भर्ती करवाने

के लिए कहती है। परंतु अम्मा चार साल के इस दूधपीते बच्चे को स्कूल भेजना मुनासिब नहीं समझतीं। फिर दो साल बीत जाते हैं। रमा और रामेश्वर घर आते हैं। इस बार बेटू के और अधिक बिगाड़े स्वभाव से परेशान होते हैं। रमा इस बार बेटू को ले जाने का अपना निर्णय भी सुना देती है— “मैं आपका दिल नहीं दुखाना चाहती अम्मा पर आपके इस जरूरत से ज्यादा प्यार ने ही तो इसे बिगाड़कर धूल कर दिया है। एक भी आदत तो इसमें अच्छी नहीं है। यदि आप सचमुच ही इसे प्यार करती हैं और इसका भला चाहती हैं तो इसे मेरे साथ भेज दीजिए और उसके साथ दुश्मनी ही निभानी है तो रखिए इसे अपने पास।” अम्मा इस बात से दुखी होती हैं, फूटफूटकर रोने लगती हैं। फिर भी अपने पर काबू पाने का प्रयत्न करती है — “ले जा बहू, ले जा। मेरा बेटू फूले-फूले; पढ़ लिखकर लायक बने, इससे बढ़कर खुशी की बात मेरे लिए और क्या हो सकती है। मेरा क्या है, मेरी चार दिन की हँसी — खुशी के लिए मैं तेरे बच्चे की जिन्दगी नहीं बिगाड़ूँगी।”

रमा को अपने निर्णय से दुःख तो होता है फिर भी बेटे की बात सोचकर अपना निर्णय बदलने में असमर्थ रहती है। बेटू को लेकर अपनी माँ के घर जाती है परंतु दादी अम्मा के बिना बेटू रोना-धोना शुरू कर देता है। न खाता है, न पीता है। उसे बुखार चढ़ आता है। इससे विवश होकर रमा बेटू को अम्मा के यहाँ छोड़कर बम्बई चली जाती है। और फिर एक साल के उपरांत वापस आकर रमा बेटू का वही रवैया देखकर दिल कड़ा करते हुए उसे बम्बई ले जाती है। अम्मा भी अपनी सारी जमा पूँजी खर्च करके शिबू (नौकर) को उनके साथ भेजदेती हैं। शिबू के वहाँ से वापस आने पर अम्मा बेटू की खैरियत के बारे में पूछती हैं। यह सुनकर खुश होती हैं कि इस बार बहू ने बेटू को समझा दिया तथा बेटू का मन वहाँ पर ट्राम, बस, बगीचे, झूले आदि में रम गया है। अम्मा की परेशानी दूर होती है और खुशी से सवा रुपया निकालकर शिबू को प्रसाद चढ़ाने हेतु देती हैं। इस

तरह मन्नू भंडारी ने दादी अम्मा के मन की मजबूरी, समझदारी और उदारता को बड़ी बारीकी से वर्णन किया है।

### प्रश्न और अभ्यास

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर दस-बारह वाक्यों में दीजिए: (अंक-५)

- (क) बूढ़ी अम्मा किस खुशी से गीत गा रही थीं ?
- (ख) अम्मा अपने बेटे के आने की खुशी में क्या-क्या तैयारी करती हैं ?
- (ग) अम्मा और नर्बदा के बीच क्या बातचीत चलती है ?
- (घ) अम्मा यह क्यों कहती हैं- “रामेसुर के बिना यह घर तो मसान-जैसा लगता है।”
- (ङ) अम्मा के पुत्र-प्रेम पर प्रकाश डालिए।
- (च) बेटू को यहाँ पर छोड़ जाने की बात से अम्मा की क्या प्रतिक्रिया होती है ?
- (छ) अम्मा बेटू को किस प्रकार पाला करती हैं ?
- (ज) आखिर रमा ने बेटू को बंबई ले जाने का फैसला क्यों लिया ?
- (झ) बेटू को बंबई ले जाने की बात से अम्मा क्यों दुखी होती हैं ?
- (ञ) अम्मा शिबू को बंबई क्यों भेजती हैं ?
- (ट) अम्मा का चरित्र कैसा था ?



## भारत भूषण अग्रवाल

भारत भूषण अग्रवाल मुख्य रूप से प्रयोगवादी कवि और नाटककार हैं। ध्वनि एकांकीकार के रूप में उन्हें विशेष ख्याति मिली है। पत्रकारिता और समालोचना के क्षेत्र में भी उनका सराहनीय योगदान रहा है। वे इतिहास और पुराण की घटनाओं की समसामयिक चेतना के प्रकाश में व्याख्या करते हैं। उनकी रचनाओं में कवित्व और बौद्धिकता का सुंदर समन्वय मिलता है। उनकी भाषा सुबोध और विचारधर्मी है। उनके प्रमुख एकांकी-संग्रहों के नाम हैं- 'पलायन', 'सेतुबंध', और 'खाई बढ़ती गई', 'युग-युग' या 'पाँच मिनट'। उनके लोकप्रिय एकांकियों के नाम हैं- 'भादों की रात', 'गंगा की गाथा', 'अजंता की गुँज', 'महाभारत की एक सांझ'।

## महाभारत की एक साँझ

पात्र

धृतराष्ट्र

संजय

युधिष्ठिर

भीम

दुर्योधन

**स्थान :** कुरूक्षेत्र के निकट द्वैतवन के जलाशय का किनारा

**समय :** साँझ

यह नाटक यहाँ श्रव्य रूप में ही प्रस्तुत किया गया है, जैसा कि रेडियो द्वारा प्रसारण के लिए होता है, पर इसे सहज ही मंच पर दृश्याभिनय के अनुकूल बनाया जा सकता है।

(सारंगी पर आलाप उठता है।)

धृतराष्ट्र : (ठंडी साँस लेकर) कह नहीं सकता संजय! किसके पापों का यह परिणाम है, किसकी भूल थी जिसका यह भीषण विषफल हमें मिला। ओह! क्या पुत्र-स्नेह अपराध है, पाप है? क्या मैंने कभी भी... कभी भी...

संजय : शांत हों महाराज! जो हो चुका उस पर शोक करना व्यर्थ है।

धृतराष्ट्र : (साँस लेकर) फिर क्या हुआ संजय?

संजय : आत्म-रक्षा का और कोई उपाय न देखकर महाबली द्वैतवन के सरोवर में घुस गए, और उसके जलस्तंभ में छिपकर बैठे रहे। पर न जाने कैसे पांडवों को इसकी सूचना मिल गई और वे तत्काल रथ पर चढ़कर वहाँ पहुँच गए।

(रथ की गड़गड़ाहट।)

भीम : लीजिए महाराज! यही है द्वैतवन का सरोवर। वे अहेरी कहते थे कि उन्होंने दुर्योधन को इसी के जल में छिपते हुए देखा।

युधिष्ठिर : आओ, हम लोग उसे निकालने की चेष्टा करें।

(जल की कल-कल ध्वनि।)

युधिष्ठिर : (पुकार कर) ओ पापी! अरे ओ कपटी, दुरात्मा दुर्योधन! क्या स्त्रियों की भाँति वहाँ जल में छिपा बैठा है। बाहर निकल आ। देख, तेरा काल तुझे ललकार रहा है।

भीम : कोई उत्तर नहीं। (जोर से) दुर्योधन! दुर्योधन!! अरे अपने सारे सहयोगियों की हत्या का कलंक अपने माथे पर लगाकर तू कायरों की भाँति अपने प्राण बचाता फिरता है। तुझे लज्जा नहीं आती ?

युधिष्ठिर : लज्जा! उस पापी को लज्जा!!... भीमसेन! ऐसी अनहोनी बात की तुमने कल्पना भी कैसे की। जो अपने सगे-संबंधियों को गाजर-मूली की भाँति कटवा सकता है, जो अपने भाइयों को जीवित जलवा देने में भी नहीं हिचकिचाता, जो अपनी भाभी को भरी सभा में अपमानित कराने में आनंद ले सकता है, उसका लज्जा से क्या परिचय! (सव्यंग्य हँसी)

दुर्योधन: (दूर जल में से) हँस लो, हँस लो दुष्टो! जितना जी चाहे हँस लो, पर यह न भूलना कि मैं अभी जीवित हूँ, मेरी भुजाओं का बल अभी नष्ट नहीं हुआ है।

युधिष्ठिर : (जोर से) अरे नीच! अब भी तेरा गर्व चूर नहीं हुआ! यदि बल है तो फिर आ न बाहर, और हमको पराजित करके राज्य प्राप्त कर! वहाँ बैठा-बैठा क्या वीरता बघारता है! तू क्या समझता है, हम तेरी थोथी बातों से डर जाएँगे ?

दुर्योधन : अपने स्वार्थ के लिए अपने गुरुजनों, बंधु-बंधवों का



निर्भयता से वध करने वाले माहत्मा पांडवों के रक्त की प्यास अभी बुझी नहीं है, यह मैं जानता हूँ। पर युधिष्ठिर! सुयोधन कायर नहीं है, वह प्राण रहते तुम्हारी सत्ता स्वीकार नहीं कर सकता!

भीम : तो फिर आ न बाहर और दिखा अपना पराक्रम: जिस कालाग्नि को तूने वर्षों घृत देकर उभाड़ा है, उसकी लपटों में तेरे साथी तो स्वाहा हो गए... उसके घेरे से अब तू क्यों बचना चाहता है। अच्छी तरह समझ ले, यह तेरी आहुति लिए बिना शांत न होगी।

दुर्योधन : जानता हूँ युधिष्ठिर! भली-भाँति जानता हूँ। किंतु सोच लो, मैं थककर चूर हो गया हूँ, मेरी सारी सेना तितर-बितर हो गई है, मेरा कवच फट गया है, मेरे शस्त्रास्त्र चुक गए हैं। मुझे समय दो युधिष्ठिर! क्या भूल गए, मैंने तेरह वर्ष का समय दिया था ?

युधिष्ठिर : (हँसकर) तेरह वर्ष का समय दिया था ? दुर्योधन! तुमने तो हमें वनवास दिया था, यह सोचकर कि तेरह वर्ष वन में रहकर हमारा उत्साह टंडा पड़ जाएगा, हमारी शक्ति क्षीण हो जाएगी, हमारे सहायक बिखर जाएँगे और तुम अनायास हम पर विजय पा सकोगे। इतनी आत्मप्रवंचना न करो।

दुर्योधन : युधिष्ठिर! तुम तो धर्मराज कहलाते हो! तुम्हारा दंभ है कि तुम अधर्म नहीं करते। फिर तुम्हारे रहते, तुम्हारी आँखों के आगे ऐसा अधर्म हो, सोचो तो!

भीम : (हँसी) अच्छा, तो अब तुझे धर्म का स्मरण हुआ। सच है, कायर और पराजित ही अंत में धर्म की शरण लेते हैं।

युधिष्ठिर : अरे पामर ? तेरा धर्म तब कहाँ चला गया था, जब एक निहत्थे बालक को सात-सात महारथियों ने मिलकर मारा था, जब आधा राज्य तो दूर, सुई की नोक बराबर भी भूमि देना तुझे अनुचित लगा था। अपने अधर्म से इस पुण्यलोक भारत भूमि में द्वेष की ज्वाला धधकाकर अब तू धर्म की दुहाई देता है। धिक्कार है तेरे ज्ञान को! धिक्कार है तेरी वीरता को!

दुर्योधन : एक निहत्थे, थके हुए व्यक्ति को घेरकर वीरता का उपदेश देना सहज है युधिष्ठिर! मुझे खेद है, मैं इसके लिए तुम्हारी प्रशंसा नहीं कर सकता। पर मैं सच कहता हूँ तुमसे, इस नर-हत्याकांड से मुझे विरक्ति हो गई है। इस रक्त-रंजित सिंहासन पर बैठकर राज्य करने की मेरी कोई इच्छा नहीं है। तुम निश्चित मन से जाओ और राज्य भोगो। सुयोधन तो वन में जाकर भगवद्भक्ति में दिन बिताएगा।

भीम : व्यर्थ दुर्योधन! तेरी यह सारी कूटनीति व्यर्थ है! अपने पापों के परिणाम से अब तू किसी भी प्रकार नहीं बच सकता। बाहर निकलकर युद्ध कर, बस यही एक मार्ग है!

दुर्योधन : अप्रस्तुत को मारने से यदि तुम्हें संतोष मिलता हो, तो लो मैं बाहर आता हूँ। (जल से निकलकर पास आने तक की आवाज) पर मैं पूछता हूँ युधिष्ठिर! मेरे प्राणों का नाश कर तुम्हें क्या मिल जाएगा?

युधिष्ठिर : अरे पापी! यदि प्राणों का इतना मोह था तो फिर यह महाभारत क्यों मचाया? न्याय को ठोकर मारकर अन्याय का पथ क्यों ग्रहण किया?

दुर्योधन : युधिष्ठिर! मैंने जो कुछ किया, अपनी रक्षा के लिए! मैं जीना चाहता था, शांति और मेल से रहना चाहता था। मैं नहीं जानता था कि तुम्हारे रहते मेरी यह कामना, यह सामान्य-सी इच्छा भी पूरी न हो सकेगी।

भीम : पाखंडी! तुझे झूठ बोलते लज्जा नहीं आती?

दुर्योधन : ले लो राक्षसो! यदि तुम्हारी हिंसा इसी से तृप्त होती है तो ले लो, मेरे प्राण भी ले लो। जब मैं जीवन-भर प्रयास करके भी अपनी एक भी घड़ी शांति से न बिता सका, जब मैं अपनी एक भी कामना को फलते न देख सका, तो अब इन प्राणों को रखकर भी क्या करूँगा? लो, उठाओ शस्त्र और उड़ा दो मेरा शीश!... अब देखते क्या हो? मैं निहत्था तुम्हारे सम्मुख खड़ा हूँ! ऐसा सुअवसर कब मिलेगा, मेरे जीवनशत्रुओ!

युधिष्ठिर : पहले वीरता का दंभ और अंत में करुणा की भीख! कायरों का यही नियम है। परंतु दुर्योधन! कान खोलकर सुन लो। हम तुम्हें दया करके छोड़ेंगे भी नहीं, और तुम्हारी भाँति अधर्म से हत्या कर बधिक भी न कहलाएँगे। हम तुम्हें कवच और शस्त्र देंगे। तुम जिस अस्त्र से लड़ना चाहो, बता दो। हममें से केवल एक व्यक्ति ही तुमसे लड़ेगा। और यदि तुम जीत गए तो सारा राज्य तुम्हारा! कहो, यह तो अधर्म नहीं है? स्वीकार है।

भीम : इस दुराचारी के साथ ऐसा व्यवहार अनावश्यक है।

दुर्योधन : मैं तो कह चुका हूँ युधिष्ठिर! मुझे विरक्ति हो गई है। मेरी समझ में आ गया है कि अब प्राणों की तृप्ति की चेष्टा व्यर्थ है। विफलता के इस मरुस्थल में अब एक बूँद आवेगी भी तो सूखकर खो जाएगी। यदि तुम्हें इसी में संतोष हो कि तुम्हारी महत्वाकांक्षा मेरी मृत देह पर ही अपना जय-स्तंभ उठाए तो फिर यही सही। (साँस लेकर) चलो, यह भी एक प्रकार से अच्छा ही होगा। जिन्होंने मेरे लिए अपने प्राणों की बलि दे दी उन्हें मुँह तो दिखा सकूँगा। (रुककर) अच्छी बात है युधिष्ठिर! मुझे एक गदा दे दो, फिर देखो मेरा पौरुष।

(लघु विराम)

संजय : इस प्रकार महाराज! पांडवों ने विरक्त सुयोधन को युद्ध के लिए विवश किया। पांडवों की ओर से भीम गदा लेकर रण में उतरे। दोनों वीरों में घमासान युद्ध होने लगा। सुयोधन का पराक्रम सबको चकित कर देता था। ऐसा लगता था कि मानो विजय-श्री अंत में उसी का वरण करेगी। पर तभी श्रीकृष्ण के संकेत पर भीम ने सुयोधन की जंघा में गदा का भीषण प्रहार किया। कुरुराज आहत होकर चीत्कार करते हुए गिए पड़े।

धृतराष्ट्र : हाय पुत्र! इन हत्यारों ने अधर्म से तुम्हें परास्त किया। संजय! मेरे इतने उत्कट स्नेह का ऐसा अंत!! ओह! मैं नहीं सह सकता। मैं नहीं सह सकता...

संजय : धैर्य महाराज, धैर्य। कुरुकुल के इस डगमागाते पोत के अब आप ही कर्णधर हैं।

धृतराष्ट्र : संजय! बहलाने की चेष्टा न करो। (रुककर) पर ठीक कहा तुमने। कुरुकुल का कर्णधार ही अंधा है, उसे दिखाई नहीं देता।

संजय : महाराज! ठीक यही बात सुयोधन ने कही थी।

धृतराष्ट्र : क्या? क्या कहा था सुयोधन ने? कब?

संजय : जब सुयोधन आहत होकर निस्सहाय भूमि पर गिर पड़े, तो पांडव जय-ध्वनि करते और हर्ष मनाते अपने शिविर को लौट गए। संध्या होने पर पहले अश्वत्थामा आए और कुरुराज की यह दशा देखकर बदला लेने का प्रण करते हुए चले गए। फिर युधिष्ठिर आए। सुयोधन के पास आकर वे झुके और शांत स्वर में बोले-

(दुर्योधन की कराह, जो बीच-बीच में निरंतर चलती रहती है।

युधिष्ठिर : दुर्योधन! दुर्योधन!! आँखें खोलो भाई!

दुर्योधन : (कराहते हुए) कौन? कौन? युधिष्ठिर तुम! आए हो? अब क्यों आए हो? क्या चाहते हो? तुम राज्य चाहते थे, वह मैंने दे दिया, मेरे प्राण चाहते थे, वे भी मैंने दे दिए। अब क्या लेने आए हो मेरे पास? अब मेरे पास ऐसा कौन सा धन है, जिसके प्रति तुम्हें ईर्ष्या हो? जाओ, जाओ, दूर हो मेरी आँखों से। जीवन में तुमने मुझे चैन नहीं लेने दिया, अब कम में कम मुझे शांति से मर लेने दो युधिष्ठिर! जाओ! चले जाओ!

युधिष्ठिर : तुमने गलत समझा दुर्योधन! मैं कुछ लेने नहीं आया! मैं तो देखने आया कि...

दुर्योधन : कि अंतिम समय में मैं किस तरह निस्सहाय निर्बल पशु को भाँति तड़प-तड़पकर अपना दम तोड़ता हूँ। मेरी मृत्यु का पर्व मनाने आए हो। मेरी आहों का आलाप सुनने आए हो। अरे निर्दयी! तुम्हें किसने

धर्मराज की संज्ञा दी! जो सुख से मरने भी नहीं देता वही धर्म का ढोल पीटे, कैसा अन्याय है!

युधिष्ठिर : अर्थ का अनर्थ न करो दुर्योधन! मैं तो तुम्हें शांति देने आया था। मैंने सोचा, हो सकता है, तुम्हें पश्चात्ताप हो रहा हो। यदि ऐसा हो, तो तुम्हारी व्यथा हल्की कर सकूँ, इसी उद्देश्य से मैं आया था।

दुर्योधन : हाय रे मिथ्याभिमानि! अब भी यह दया का ढोंग नहीं छोड़ा? पर युधिष्ठिर। तनिक अपनी ओर तो देखो! पश्चात्ताप तो तुम्हें चाहिए! मैं क्यों पश्चात्ताप करूँगा? मैंने ऐसा कौन-सा पाप किया है? मैंने अपने मन के भावों को गुप्त नहीं रखा, मैंने षड्यंत्र नहीं किया, मैंने गुरुजनों का वध नहीं किया।

युधिष्ठिर : यह तुम क्या कह रहे हो दुर्योधन!

दुर्योधन : (किटकिटाकर) दुर्योधन नहीं, सुयोधन कहो धर्मराज! सुयोधन! क्या अब भी तुम्हारी छाती ठंडी नहीं हुई? क्या मुझे मारकर भी तुम्हें संतोष नहीं हुआ जो मेरी अंतिम घड़ी में मेरे मुँह पर मेरे नाम की खिल्ली उड़ा रहे हो? निर्दयी! क्या ईर्ष्या में अपनी मानवता भी भस्म कर दी?

युधिष्ठिर : क्षमा करो भाई! अब तुम्हें और अधिक कष्ट नहीं पहुँचाना चाहता। पर मेरे कहने न कहने से क्या, आने वाली पीढ़ियाँ तुम्हें दुर्योधन के नाम से ही संबोधित करेंगी, तुम्हारे कृत्यों का साक्षी इतिहास पुकार पुकार कर

दुर्योधन : मुझे दुर्योधन कहेगा, यही न? जानता हूँ युधिष्ठिर! मैं जानता हूँ! मुझे मारकर ही तुम चुप नहीं बैठोगे। तुम विजेता हो; अपने गुरुजनों और सगे-संबंधियों के शोणित की गंगा में नहाकर तुमने राजमुकुट धारण किया है। तुम अपनी देख-रेख में इतिहास लिखवाओगे और उसका पूरा-पूरा लाभ उठाने से क्यों चूकोगे? सुयोधन को सदा के लिए दुर्योधन बनाकर छोड़ोगे। (करहकर) उसकी देह को ही नहीं, उसका नाम तक मिटा

दोगे। यह मैं तुम्हारा हाथ पकड़ने नहीं आऊँगा। पर इस समय अब तुम्हारा सबसे बड़ा शत्रु मर रहा है, उसे इतना न्याय दो कि उसका मिथ्या अपमान मत करो।

युधिष्ठिर : युधिष्ठिर ने सदा ही न्याय दिया है सुयोधन! न्याय के लिए वह बड़े-बड़े दुःख उठाने से भी नहीं चूका है। सगे-संबंधियों के तड़प-तड़पकर प्राण त्यागने का यह भीषण दृश्य, अबलाओं-अनार्थों का यह करुण चीत्कार किसी भी हृदय को दहलाने के लिए पर्याप्त था। पर सुयोधन! मैं इन संहार के दृश्यों को भी शांत भाव से सह गया, क्योंकि न्याय के पथ पर जो मिले, सब स्वीकार है।

दुर्योधन: यह दंभ है युधिष्ठिर! यह मिथ्या अहंकार है। मैं तुम्हारी यह आत्मप्रशंसा नहीं सुन सकता, इसे तुम अपने भक्तों के ही लिए रहने दो। तुम विजय की डींग मार सकते हो, पर न्याय-धर्म की दुहाई तुम मत दो! स्वार्थ को न्याय का रूप देकर धर्मराज की उपाधि धारण करने में तुम्हें संतोष मिलता है तो मिले, मेरे लिए वह आत्म-प्रवचन है। मैं उससे घृणा करता हूँ।

युधिष्ठिर : स्वार्थ! दुर्योधन, स्वार्थ!!

दुर्योधन : और नहीं तो क्या? जिस राज्य पर तुम्हारा रत्ती-भर अधिकार नहीं था, उसी को पाने के लिए तुमने युद्ध ठाना, यह स्वार्थ का तांडवनृत्य नहीं तो और क्या है? भला किस न्याय से तुम राज्याधिकार की माँग करते थे?

युधिष्ठिर : सुयोधन, मन को टटोलकर देखो। क्या वह तुम्हारे कथन का समर्थक है? क्या तुम नहीं जानते कि पिता के राज्य पर पुत्र का अधिकार सर्वसम्मत है? फिर महाराज पांडु का राज्य मेरा हुआ या नहीं?

दुर्योधन : बस, तुम्हारे पास एक यही तर्क है। परंतु युधिष्ठिर, क्या तुमने कभी भी यह सोचा कि जिस राज्य का तुम अधिकार चाहते थे वह

तुम्हारे पिता के पास कैसे आया? क्या जन्माधिकार से? नहीं। तुम्हारे पिता को राज्य की देख-भाल का कार्य केवल इसलिए मिला कि मेरे पिता अंधे थे। राज्य-संचालन में उन्हें असुविधा होती। अन्यथा उस पर तुम्हारे पिता का कोई अधिकार न था, वह मेरे पिता का था।

युधिष्ठिर : यह तो ठीक है। पर पक बार चाहे किसी भी कारण से हो, जब मेरे पिता को राज्य मिल गया, तब उनके पश्चात् उस पर मेरा अधिकार हुआ या नहीं? क्या राज-नियम यह नहीं कहता?

दुर्योधन : राज-नियम की चिंता कब की तुमने? अन्यथा इस बात के समझने में क्या कठिनाई थी कि तुम्हारे पिता के उपरांत राज्य पर मूल अधिकार मेरे पिता का ही था? वह जिसे चाहते, व्यवस्था के लिए सौंप सकते थे।

युधिष्ठिर : यह केवल तुम्हारा निजी मत है। आज हक किसी ने भी इस प्रकार का कोई संदेह प्रकट नहीं किया। पितामह भीष्म, महात्मा विदुर, कृपाचार्य अथवा स्वयं महाराज धृतराष्ट्र ने भी कभी ऐसी कोई बात नहीं कही।

दुर्योधन : यही तो मुझे दुख है युधिष्ठिर कि तथ्य तक पहुँचने की किसी ने भी चेष्टा नहीं की। एक अन्याय की प्रतिष्ठा के लिए इतना ध्वंश किया गया, और सब अंधों की भाँति उसे स्वीकार करते गए। सबने मेरा हठ ही देखा, मेरे पक्ष का न्याय किसी ने नहीं देखा! और जानते हो इसका क्या कारण था?

युधिष्ठिर : क्या?

दुर्योधन : सब तुम्हारे गुणों से प्रभावित थे, सब तुम्हारी वीरता से डरते थे। कायरों की भाँति, रक्तपात से बचने के प्रयत्न में वे न्याय और सत्य का बलिदान कर बैठे। वे यह नहीं समझ पाए कि भय जिसका आधार हो, वह शांति टिकाऊ नहीं हो सकती।

युधिष्ठिर : गुरुजनों पर तुम व्यर्थ ही कायरता का आरोप लगा रहे हो। यदि मेरे पक्ष में न्याय न होता तो कोई भी मुझको राज्य देने की माँग क्यों करता ?

दुर्योधन : तभी तो कहता हूँ युधिष्ठिर कि स्वार्थ ने तुम्हें अंधा बना दिया, अन्यथा इतनी छोटी-सी बात क्या तुम्हें दिखाई न पड़ जाती कि जितनी धार्मिक और न्यायी व्यक्ति थे, सबने इस युद्ध में मेरा साथ दिया है ? यदि न्याय तुम्हारी ओर था तो फिर भीष्म, द्रोण, कृप, अश्वत्थामा-सब मेरी ओर से क्यों लड़े ? क्या वे जान-बूझकर अन्याय का साथ दे रहे थे ? यहाँ तक कि कृष्ण जैसे तुम्हारे परम मित्र ने भी मेरी सहायता कि लिए अपनी सेना दी। वे चतुर थे, दोनों पक्षों से मैत्री रखना ही उन्होंने अच्छा समझा। ऐसा क्यों हुआ ? बोलो ! इसीलिए न कि न्याय वास्तव में मेरी ओर था।

युधिष्ठिर : सुयोधन ! मैं तुम्हें सांत्वना देने आया था, विवाद करने नहीं। मैं तो तुम्हारी पीड़ा बँटा लेने आया था। क्योंकि तुम चाहे जो समझो , मेरी इस बात का तुम विश्वास करो कि मैं इस रक्तपात के लिए तैयार न था, यह मेरी कदापि इच्छा नहीं थी।

दुर्योधन : मैं इसका कैसे विश्वास करूँ ? क्या तुम्हारे कह देने से ही ? पर तुम्हारे वचनों से भी सशक्त स्वर है तुम्हारे कार्यों का, तुम्हारे जीवन की गतिविधि का, और वह पुकार-पुकार कर कह रही है कि युधिष्ठिर शोणिततर्पण चाहता था, युधिष्ठिर खून की होली खेलने के लिए ही सारे अवसर जुटा रह था। भविष्य को भी तुम चाहो तो बहका सकते हो युधिष्ठिर ! पर सुयोधन को नहीं बहका सकते ! क्योंकि उसने अपने बचपन से लेकर अब तक की एक-एक पड़ी तुम्हारी ईर्ष्या के रथ की गड़गड़ाहट सुनते हुए बिताई है, तुम्हारी तैयारियों ने उसे एक रात भी चैन से नहीं सोने दिया।

युधिष्ठिर : मुझे लगता है, तुम सुध-बुध खो बैठे हो तुम प्रलाप कर रहे हो। भला ज्ञान में भी कोई ऐसी असंभाव्य बातें कहता है। जो पांडव तुमसे तिरस्कृत होकर घर-घर भीख माँगते फिरे, वन-जंगलों की धूल



छानते फिरे, उनके संबंध में भला कौन ज्ञानी व्यक्ति तुम्हारे इस कथन का विश्वास करेगा।

दुर्योधन : मैं जानता हूँ युधिष्ठिर! कोई विश्वास नहीं करेगा। और करना चाहे तो तुम उसे विश्वास न करने दोगे। पर इसे क्या? सत्य को दबाकर उसे मिथ्या नहीं किया जा सकता। बचपन से जब हम लोगों ने एक साथ शिक्षा पाई, तब से आज तक के सारे चित्र मेरी दृष्टि में हरे हैं। पुरोचन को कपट से मारकर तुम पंचाल गए, और वहाँ द्रुपद को अपनी ओर मिलाया। तभी तो तुम्हारा बल बढ़ता देखकर पिताजी ने तुम्हें आधा राज्य दिया।

युधिष्ठिर : मैं तो यही जानता हूँ कि आधे राज्य पर मेरा अधिकार था।

दुर्योधन : सत्य को ढकने का प्रयत्न न करो युधिष्ठिर। उसे निष्पक्ष होकर जाँचो। मेरे पास प्रमाणों की कमी नहीं है। आधा राज्य पाकर भी तुमने चैन न लिया, तुमने अर्जुन को चारों ओर दिग्विजय के लिए भेजा। राजसूय यज्ञ के बहाने तुमने जरासंध और शिशुपाल को समाप्त किया। यहाँ तक कि जुए में खेल-खेल में भी तुम अपनी ईर्ष्या नहीं भूले, और तुमने चट से अपना राज्य दाँव पर लगा दिया कि यदि तुम जीते तो तुम्हें मेरा राज्य अनायास ही मिल जाए। वनवास उसी महत्वाकांक्षा का परिणाम था, मेरा उसमें कोई हाथ न था।

युधिष्ठिर : तुमने जिस तरह भरी सभा में द्रौपदी का अपमान किया-

दुर्योधन : मेरा अपमान भी द्रौपदी ने भरी सभा में ही किया था। तब तुम्हारी यह न्याय भावना क्या सो रही थी? फिर द्रौपदी को दाँव पर लगाकर क्या तुमने उसका सम्मान करने की चेष्टा की थी? जिस समय द्रौपदी सभा में आई, उस समय वह द्रौपदी नहीं थी, वह जुए में जीती हुई दासी थी।

युधिष्ठिर : यह तुम कैसी विचित्र बात कर रहे हो?

दुर्योधन : सत्य को विचित्र मानकर उड़ा नहीं सकते युधिष्ठिर! अपने ही कृत्य से वनवास पाकर भी उसका दोष मेरे ही माथे मढ़ा गया, और फिर उस वनवास का एक-एक क्षण युद्ध की तैयारी में लगाया गया। अर्जुन ने तपस्या द्वारा नए-नए शस्त्र प्राप्त किए; विराटराज से मैत्री कर नए संबंध बनाए गए, और अवधि पूर्ण होते ही अभिमन्यु के विवाह के बहाने सारे राजाओं को निमंत्रण भेजकर एकत्र किया गया। युधिष्ठिर! क्या इस कटु सत्य को तुम मिटा सकते हो?

युधिष्ठिर : यदि जो कुछ तुम कह रहे हो वह सत्य है, तो सुयोधन, तुम मेरा विश्वास करो कि तुमने प्रत्येक घटना के उल्टे अर्थ लगाए हैं। जो नहीं है उसे तुमने कल्पना के द्वारा देखा है। यह सब मिथ्या है।

दुर्योधन : किंतु यही बात मैं तुम्हारे लिए कह सकता हूँ युधिष्ठिर! क्योंकि अंतर्दामी जानते हैं कि मैंने कोई बुरा आचरण नहीं करना चाहा। मैंने एकमात्र अपनी रक्षा की। जब तक तुमने आक्रमण नहीं किया, मैं चुप रहा। जब मैंने देखा कि युद्ध अनिवार्य है, तो फिर मुझे विवश होकर वीरोचित कर्तव्य करना पड़ा।

युधिष्ठिर : अभिमन्यु-वध भी क्या वीरोचित था ?

दुर्योधन : एक-एक बात पर कहाँ तक विचार करोगे, युधिष्ठिर! जब भीष्म, द्रोण और कर्ण का वध वीरोचित हो सकता है, तो फिर अभिमन्यु-वध में ऐसी क्या विशेषता थी? और आज भीमसेन ने मुझे जिस प्रकार पराजित किया है वही क्या वीरोचित कहलाएगा? पर युधिष्ठिर! मेरे पास अब इतना समय नहीं है कि इन सबकी विवेचना करूँ। मैं तो सबकी सार बात जानता हूँ कि तुम्हारी महत्वाकांक्षा ही हम नर-संहार का, इस भीषण रक्तपात का मूल कारण है।

(पृष्ठ में सारंगी पर करुण आलाप, जो चढ़ता है।) और उधर वे मेघ घिरे आ रहे हैं, द्रौपदी के बिखरे केशों की भाँति। वे मुझे निगल लेंगे युधिष्ठिर।

जाओ, मुझे मरने दो। तुम अपनी महत्वाकांक्षा को फलते-फूलत देखो। जाओ, गुरुजनों और बंधु-बाधवों के रक्त से अभिषेक कर राजसिंहासन पर विराजो। मैं तुम्हारे चरणों से रौंदे हुए काँटे की भाँति तुम्हारे मार्ग से हटे जाता हूँ।

युधिष्ठिर : इतने उत्तेजित न हो सुयोधन! वीरों की भाँति धैर्य रखो। शांत होओ।

दुर्योधन : घबराओ नहीं युधिष्ठिर! मेरी शांति के लिए तुम जो उपाय कर चुके हो, वह अचूक है। दो क्षण और, फिर मैं सदा को शांत हो जाऊँगा। पर अंतिम साँस निकलने से पहले युधिष्ठिर! एक बात कहे जाता हूँ... तुम पश्चात्ताप की बात पूछने आए थे न? मेरे मन में कोई पश्चात्ताप नहीं है। मैंने कोई भूल नहीं की, मैंने भय से तुम्हारी शरण नहीं माँगी। अंत तक तुमसे टक्कर ली और अब वीरगति पाकर स्वर्ग को जाता हूँ। समझे युधिष्ठिर! मुझे कोई ग्लानि नहीं है, कोई पश्चात्ताप नहीं है। केवल एक... केवल एक दुःख मेरे साथ जाएगा।

युधिष्ठिर : क्या ?

दुर्योधन : यही.... यही कि मेरे पिता अंधे क्यों हुए। नहीं तो, नहीं तो... ( करुणा आलाप उठकर धीरे-धीरे लुप्त हो जाता है। )

### शब्दार्थ:

अहेरी-शिकारी; ललकार-उच्च स्वर में युद्ध के लिए आह्वान; अनहोनी-असंभव, न होने वाली; हिचकिचाना - संकोच करना; भुजाओं-बाँहों; बघारना-बढ़ा-चढ़ाकर बोलना, डींग हाँकना; थोथी बात-फालतू बात, सारहीन बात; पराक्रम-वीरता; आत्म प्रवंचना - स्वयं अपने को धोखा देना; पामर-पापी; पुण्यश्लोक-पवित्र भूमि (देश); अप्रस्तुत-जो तैयार या प्रस्तुत न हो; दंभ-घमंड, अहंकार; बधिक-हत्यारा; डगमगाते पोत-हिलते-डुलते जहाज, कर्णधार-रक्षाकर्ता, उद्धार कर्ता; निस्सहाय-

असहाय, लाचार; मिथ्याभिमानि-झूठा घमंड करने वाला पश्चाताप-अनुताप, अनुशोचना, पछतावा; खिल्ली उड़ाना-मजाक करना; शोणित की गंगा-खून की गंगा; रत्ती भर अधिकार-थोड़ा-सा अधिकार; तांडव नृत्य-शिवजी का नृत्य, जिसमें बहुत उछल-कूद हो; हठ-जिद; कायर-डरपोक, भीरु; अश्वत्थामा - गुरु द्रोण का वीर पुत्र; तिरस्कृत-अनादृत; महत्वाकांक्षा-स्वार्थपूर्ण अभिलाषा अंतर्यामी - हृदय की बात जानने वाला, ईश्वर, भ्रांति - भ्रम, गलतफहमी।

### इस पाठ के बारे में:

‘महाभारत की एक साँझ’ एक महत्वपूर्ण एकांकी है। इसकी कथा पौराणिक घटना पर आधारित है। परंतु एकांकीकार ने इसे आधुनिक दृष्टि से देखा है। दुर्योधन की मनःस्थिति को आधुनिक मूल्यों के संदर्भ में रूपायित करने में एकांकीकार को पूर्ण सफलता मिली है। इसमें अच्छे और बुरे, धर्म और अधर्म, सत्य और असत्य की पुरानी मान्यताओं को ज्यों-का-त्यों स्वीकार न करके सहृदयतापूर्ण ढंग से विश्लेषित किया गया है। दुर्योधन इतिहास में एक खलनायक के रूप में चित्रित है। लेकिन आलोच्य एकांकी में भारत भूषण अग्रवाल ने उसके साथ पूरी सहानुभूति प्रदर्शित की है। उसकी कर्तव्यनिष्ठ, न्यायप्रियता और ईमानदारी को उजागर किया है। युग युग से उपेक्षित दुर्योधन पाठकों की सहानुभूति प्राप्त करने में सफल हुआ है। दुर्योधन के चरित्र के नवनिर्माण के पीछे मनोवैज्ञानिक और तर्कशील दृष्टिकोण सन्निहित है। दुर्योधन परिस्थितियों का शिकार था। धृष्टराष्ट्र का अंधापन जो एक भौतिक तथ्य से बढ़कर उसके पुत्रमोह से उत्पन्न विवेकहीनता का प्रतीक है और युधिष्ठिर की महत्वाकांक्षा - इन दोनों ने दुर्योधन को हठी तथा युद्ध के लिए तैयार होने पर मजबूर कर दिया। इस तथ्य की प्रतिष्ठा आलोच्य एकांकी का कथ्य है। इस में दुर्योधन पर से महाभारत के उत्तरदायित्व का कलंक हट गया है। इसमें महत्व इस बात का नहीं कि एकांकी में प्रस्तुत दुर्योधन का चरित्र ऐतिहासिक तथ्य के अनुकूल है या नहीं, अपितु इस बात

का है कि वह कितना तर्कसंगत तथा विश्वसनीय है। भीम दुर्योधन के चरित्र की कालिमा को स्पष्ट करते हुए कहता है – “जिस कालाग्नि को तूने वर्षों घृत देकर उभाड़ा है, उसकी लपटों में तेरे साथी तो स्वाहा हो गए.... उसके घेरे से अब तू क्यों बचना चाहता है? अच्छी तरह समझ ले, यह तेरी आहुति लिए बिना शांत न होगी।” परंतु दूसरी ओर दुर्योधन युधिष्ठिर से अपने चरित्र की निष्कलंकता प्रकट करते हुए कहता है– “युधिष्ठिर! मैंने जो कुछ किया, अपनी रक्षा के लिए। मैं जीना चाहता था, शांति और मेल से रहना चाहता था। मैं नहीं जानता था कि तुम्हारे रहते मेरी यह कामना, यह सामान्य सी इच्छा भी पूरी न हो सकेगी।” और आगे चलकर दुर्योधन इस सच्चाई का पर्दाफाश करता है कि युद्ध के विजेता ही अपनी मर्जी से इतिहास लिखवाते हैं तथा हारे हुए के चरित्र में कलंक लगाते हैं– “जानता हूँ युधिष्ठिर, मैं जानता हूँ। मुझे मारकर ही तुम चुप नहीं बैठोगे। तुम विजेता हो, अपने गुरुजनों और सगे-संबंधियों के शोणित की गंगा में नहाकर तुमने राजमुकुट धारण किया है। तुम अपनी देख-रेख में इतिहास लिखवाओगे और उसका पूरा-पूरा लाभ उठाने से क्यों चूकोगे? सुयोधन को सदा के लिए दुर्योधन बनाकर छोड़ोगे। उसकी देह को ही नहीं, उसका नाम तक मिटा दोगे।” एकांकी के अंत में दुर्योधन का यह संवाद अपनी ओर पाठकीय संवेदना खींचने में समर्थ हो जाता है– “पर अंतिम साँस निकलने से पहले युधिष्ठिर एक बात कहे जाता हूँ... तुम पश्चाताप की बात पूछने आए थे न? मेरे मन में कोई पश्चाताप नहीं है। मैंने कोई भूल नहीं की, मैंने भय से तुम्हारी शरण नहीं माँगी। अंत तक तुमसे टक्कर ली और अब वीरगति पाकर स्वर्ग को जाता हूँ। समझे युधिष्ठिर! मुझे कोई ग्लानि नहीं है, कोई पश्चाताप नहीं है। केवल एक... केवल एक दुःख मेरे साथ जाएगा। यही... यही कि मेरे पिता अंधे क्यों हुए। नहीं तो, नहीं तो.....।”

## प्रश्न और अभ्यास

निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर दस-बारह वाक्यों में दीजिए: (अंक-५)

१. राज्य पर पांडवों का अधिकार न होने के पक्ष में दुर्योधन ने क्या युक्ति दी ?
२. दुर्योधन ने यह कैसे सिद्ध किया कि युधिष्ठिर की न्यायप्रियता वास्तव में उसकी स्वार्थपरता थी ?
३. राज्य पर पांडवों के अधिकार का गुरुजनों ने जो विरोध नहीं किया, उसका दुर्योधन की राय में क्या कारण था ?
४. दुर्योधन ने इस पक्ष में क्या प्रमाण दिए कि वास्तव में युधिष्ठिर ही पूरे राज्य की प्राप्ति के लिए युद्ध की तैयारी करते रहे ?
५. दुर्योधन ने यह कैसे सिद्ध किया कि राज्याधिकार के संबंध में न्याय वास्तव में उसी की ओर था ?
६. दुर्योधन के अनुसार युधिष्ठिर की कौन-सी वृत्तियाँ महाभारत का मूल कारण थीं ?
७. 'क्या पुत्र स्नेह अपराध है, पाप है?' -तर्क सहित व्याख्या कीजिए।
८. 'कायर और पराजित ही अंत में धर्म की शरण लेते हैं' - क्या आप इस कथन से सहमत हैं? अपने 'हाँ' या 'नहीं' के पीछे के कारण की व्याख्या कीजिए।
९. भय जिसका आधार हो, वह शांति स्थाई नहीं हो सकती' - यह संवाद किसका है और क्यों कहा है ?



# व्याकरण

## संज्ञा पद

मनुष्य अपने भावों-विचारों को अभिव्यक्त करने के लिए अपने वाग्यंत्र (मुख आदि) की मदद से कुछ ध्वनियाँ निकालता है। श्रोता इनसे कुछ अर्थ या मतलब समझता है।

सार्थक ध्वनियों या ध्वनिसमूह को 'शब्द' कहते हैं। निरर्थक ध्वनियाँ शब्द नहीं कहला सकतीं। बोलनेवाला एक या एकाधिक शब्दों का प्रयोग करता है। कुछ शब्दों को एक साथ बोलकर वक्ता अपने भाव या विचार को पूरी तरह अभिव्यक्त करता है। अर्थात् एक या एकाधिक शब्दों का वह उच्चारण जिससे कोई अर्थ, भाव या विचार प्रकाशित हो जाय, वाक्य कहलाता है। वाक्य में प्रयुक्त शब्द पद कहलाते हैं। ये मुख्यतः पाँच प्रकार के होते हैं -

१. संज्ञा (विशेष्य) २. विशेषण, ३. सर्वनाम, ४. क्रिया, ५. अव्यय। पहले चार प्रकार के पदों का रूप परिवर्तन होता है। अव्यय का कोई परिवर्तन नहीं होता। पहले प्रकार के पदों को विकारी और अव्यय को अविकारी पद कहा जाता है।

### संज्ञा

'संज्ञा' का अर्थ है नाम। इसलिए किसी व्यक्ति, जाति, द्रव्य, समूह और भाव के नाम को संज्ञा कहते हैं। जैसे-

१. रमानाथ अच्छा लड़का है।

'रमानाथ' एक व्यक्ति का नाम है। यह व्यक्ति वाचक संज्ञा है। इसी प्रकार किसी व्यक्ति विशेष, पशु, नदी, देश, शहर, आदि के नाम भी व्यक्तिवाचक संज्ञा हैं। जैसे- राम, कृष्ण, ईसामसीह, अकबर, भारत, कटक, हिमालय, कामधेनु, रामचरितमानस, मानसरोवर आदि।

२. मनुष्य समझदार प्राणी है।

यहाँ 'मनुष्य' पद से एक विशेष प्रकार के प्राणियों को समझा जाता है। यह जातिवाचक विशेष्य कहलाता है। अर्थात् - जब एकाधिक व्यक्तियों, वस्तुओं का यानी पूरी जाति का बोध होता है उसे जातिवाचक संज्ञा कहते जैसे- पुरुष, बालक, कोयल, पशु, घोड़ा, कुर्सी, किताब, शिक्षक, पहाड़ आदि

३. सोना कीमती धातु है।

'सोना' पद से एक द्रव्य या पदार्थ का बोध होता है, जिसे मापा या तौला जा सकता है, गिना नहीं जा सकता। द्रव्य नए निर्माण के आधार होते हैं। उन्हें द्रव्यवाचक संज्ञा कहा जाता है। जैसे-

सोना, ताँबा, चाँदी, तेल, दूध, आटा, पानी चावल, लकड़ी आदि।

४. हाथियों का झुण्ड जा रहा है।

यहाँ 'झुण्ड' अनेक प्राणियों के समूह का बोध होता है। अथवा वस्तुओं के समूह का बोध होता है। ऐसे पद समूह वाचक संज्ञा पद कहलाते हैं। जैसे दल, परिवार, गुच्छा, पुंज, कक्षा, टोली, मंडली, सभा, सेना आदि।

५. जब किसी पद से किसी भाव, दशा, अवस्था, धर्म, गुण या क्रिया व्यापार का बोध होता है उसे भाववाचक संज्ञा पद कहते हैं। जैसे-क्रोध, सौंदर्य, मानवता, बचपन, बुढ़ापा, लम्बाई, घृणा, ममता, पढ़ाई, लिखावट, रुलाई आदि।

विशेष : कुछ भाववाचक संज्ञाएँ मूल रूप में होती हैं, जैसे -

i) प्रेम, घृणा, ममता, झूठ, सच, उत्साह, साहस, लोभ आदि।

ii) भाववाचक संज्ञा विशेषण, सर्वनाम, क्रिया और अव्यय से बनाई जाती हैं। जैसे-

(क) संज्ञा से- लड़का- लड़कपन, मानव-मानवता, साधु-साधुता आदि।

(ख) विशेषण से - सुन्दर-सुंदरता, सौंदर्य; अच्छा-अच्छाई, गरीब - गरीबी, काला-कालापन, बूढ़ा-बुढ़ापन आदि।



(ग) सर्वनाम से- मम-ममत्व/ममता, अपना-अपनापन, निज-निजत्व आदि।

(घ) क्रिया से- बहुत से पद इससे बनते हैं, जैसे- पढ़ना-पढ़ाई, लिखना-लिखावट, बचाना-बचाव, मारना-मार आदि।

(ङ) अव्यय से - दूर - दूरी, निकट-निकटता, शाबाश-शाबाशी, समीप-समीपता, अधीन-अधीनता आदि।

**महत्त्व** : वाक्य में संज्ञा पद बड़ा महत्त्व रखते हैं। ये कर्ता, कर्म, करण आदि पदों में प्रयुक्त होते हैं। इनके बिना वाक्य-रचना संभव नहीं होती।

संज्ञा पदों का रूप लिंग, वचन, पुरुष, कारक के अनुसार बदलता है। आगे इस पर विचार होगा।

## संज्ञा के लिंग

हिन्दी में प्रत्येक संज्ञा शब्द या तो पुंलिंग में होता है अथवा स्त्रीलिंग में। लिंग का अर्थ है चिह्न या लक्षण। प्राकृतिक रूपसे पुरुष जाति के प्राणी को पुंलिंग और स्त्री जाति के प्राणीको स्त्रीलिंग माना जाता है। लेकिन अप्राणिवाचक शब्दों का लिंग विधान हिन्दी की अपनी विशेषता है और लिंग-निर्णय कठिन काम है।

प्रत्येक संज्ञा शब्द का लिंग जानना जरूरी इसलिए है कि कर्ता या कर्म आदि के रूप में प्रयुक्त संज्ञा-शब्द के लिंगानुसार क्रिया-पद का लिंग बनता है। निम्न वाक्यों को देखिए:

आदमी जाता है।

औरत जाती है।

बालक ने रोटी खायी।

बालिका ने फल खाया।

हवा चलती है।

पवन बहता है।

संज्ञा पदों के लिंग के अनुसार क्रिया पुंलिंग या स्त्री लिंग में है।

ऐसे ही-नाक बह रही है। कान गीत सुनता है। जीभ स्वाद जान लेती है। हाथ काम करते हैं। भुजाएँ उठती हैं। आदि।

### लिंग निर्णय:

भाषा के व्यवहार से अथवा अभ्यास द्वारा हिंदी शब्दों का लिंग-निर्णय आसानी से किया जा सकता है।

१. प्राणिवाचक शब्दों का लिंग जानना आसान है; क्योंकि उनका लिंग प्राकृतिक होता है-पुरुष या स्त्री, नर या मादा जैसे-नर-नारी, घोड़ा-घोड़ी, शेर-शेरनी, कुत्ता-कुतिया, बालक-बालिका, लड़का-लड़की, पिता-माता, पति-पत्नी, भाई-बहन, राजा-रानी, माली-मालिन, हिरन-हिरनी आदि।

लेकिन कुछ प्राणिवाचक शब्दों का स्त्रीलिंग रूप नहीं है; जैसे-उल्लू, केंचुआ, कछुआ, खरगोश, तोता, नेवला, भेड़िया, मच्छर, कौआ आदि।

इसीप्रकार कुछ ऐसे प्राणिवाचक शब्द हैं, जिनके पुंलिंग रूप नहीं मिलते। जैसे-कोयल गिलहरी, चील, जोंक, जूँ, तितली, मकड़ी, मक्खी, मछली, मैना आदि।

इसलिए इन शब्दों के पहले नर या मादा जोड़ कर उनका लिंग स्पष्ट किया जाता है। जैसे-नर कौआ मादा कौआ नर कोयल-मादा कोयल।

२. अप्राणिवाचक संज्ञा शब्दों के लिंग जानने के कुछ उपाय बताये जा सकते हैं, जो मददगाए होंगे-

### i). शब्दांत अक्षर या प्रत्यय के आधार पर

जिन तत्सम शब्दों के अंतमें अ, अन, त्व, त्य, य, आय, आर, आस आदि हों वे पुल्लिंग हैं जैसे -- त्याग, कौशल, उपकार, गुरुत्व, नृत्य, सौंदर्य, अन्याय, संसार, विकार, विलास, उल्लास आदि।

जिन तद्भव शब्दों के अंत में आ, आव, ना, पा, पन, हों, वे शब्द पुल्लिंग होते हैं।

जिन तत्सम शब्दों के अंत में आ, ना, इ, इमा, ता आदि हों, वे शब्द स्त्रीलिंग होते हैं। जैसे-पूजा, प्रार्थना, उपासना, कामना, शिक्षा, छवि, जाति, कृषि, कालिमा, महिमा, एकता, सुंदरता आदि।

जिन तद्भव शब्दों के अंतमें - अ, आई, ई, इया, अन, चट, हट हो वे स्त्रीलिंग होते हैं। जैसे-बात, लात, भूख, बचत, लड़ाई, चढ़ाई, पढ़ाई, रोटी, चिट्ठी, खटिया, जलन, बनावट, लिखावट, आहट, कड़वाहट आदि।

### ii). अर्थ के आधार पर :

प्रायः अनाजों, खाद्यपदार्थों, फलों, वृक्षों, धातुओं, रत्नों, ग्रहों, द्रव या तरल पदार्थों के नाम पुल्लिंग होते हैं। जैसे-धान, गेहूँ, चावल, चना, बाजरा, पराठा, भात, हलवा, लड्डू, पेड़ा, अनार, आम, केला, पपीता, बरगढ़, पीपल, नीम, गुलाब, सोना, लोहा, पीतल, ताँबा, हीरा, मोती, चंद्रमा, सूर्य, बुध, दही, घी, तेल, पानी, दूध आदि।

अपवाद स्वरूप इनमें से कुछ स्त्रीलिंग में आते हैं।

जैसे- मूँग, अरहर, रोटी, मकई, दाल, सब्जी, तरकारी, पूड़ी, कचौड़ी, जलेबी, लीची, ककड़ी, ईमली, चाँदी, मणि, पृथ्वी, चाय, कॅाफी, शराब, छाछ, आदि।

प्रायः नदियों, नक्षत्रों, भाषाओं, तिथियों के नाम स्त्रीलिंग होते हैं जैसे - गंगा, महानदी, विशाखा, रोहिणी, हिन्दी, संस्कृत, ओड़िआ, अंग्रेजी, प्रतिपदा, तीज, अमावस्या, पूर्णिमा आदि

### iii). रूप के आधार पर

जिन अप्राणिवाचक अकारांत संज्ञा-शब्दों का बहुवचन रूप नहीं बदलता, अर्थात् एकवचन और बहुवचन में एक-सा रूप रहता है, वे पुलिंग शब्द हैं। जैसे- भात, तेल, मकान, जल, खेत, दाँत, बाजार, खेल, सामान, माल, अनाज, जवाब, पेड़, शरीर, ग्रंथ, काल, नाम आदि

जिन अप्राणिवाचक अकारांत संज्ञा-शब्दों के बहुवचन में-एँ लगता है, वे स्त्रीलिंग हैं। जैसे बात, रात, ईंट, राह, सड़क, लाश, नस, दाल, आदत, इमारत, दुकान, फसल। कोशिश, साँस, किताव, पुस्तक, कीमत, सरकार, सुबह, तस्वीर, आफत, कमर, मूँछ, कमीज, झील, चीज, बंदूक आदि।

#### इसी प्रकार-

जिन अप्राणिवाचक शब्दों का अंतिम 'आ' बहुवचन में 'ए' हो जाता है वे, पुलिंग शब्द हैं। जैसे-केला, मेला, ताला, कपड़ा, मसाला, कचरा, अँगूठा, काँटा, चना, कमरा, लोटा, रास्ता, परदा, जूता, कुरता, पराठा, चौराइ, दरवाजा आदि।

अंतिम 'आ' अगर बहुवचन में 'एँ' हो जाय तो वे शब्द स्त्रीलिंग हैं। जैसे- आशा, हवा, लता, सेना, कथा, शाखा, सभा, इच्छा, योजना, दिशा, विद्या, सूचना, उपमा, परीक्षा, भाषा, कविता, क्रिया, संख्या आदि।

अंतिम इ/ई कारांत शब्द बहुवचन में नहीं बदलते तो शब्द पुलिंग होते हैं। जैसे-गिरि, अतिथि, पानी, जलधि, जी, घी आदि।

अंतिम इ। ईकारांत शब्द बहुवचन में 'याँ' होती हैं तो शब्द स्त्रीलिंग है। जैसे- नदी, मक्खी, मिठाई जाति, तिथि, रीति, नीति, विधि, खिड़की, गली, लड़ाई उपाधि, मिठाई, रोटी, पूड़ी, जलेबी, पकौड़ी, उंगली, टोपी, बीमारी, चपाती, सब्जी आदि।

उ/ऊ कारांत / ओकारांत शब्द दो बहुवचन में रूप नहीं बदलता वे पुलिंग है। शिशु, लड्डू, आलु, रेड़ियो

उ/ऊ/ओकारांत शब्द बहुवचन में 'एँ' हो जाएँ तो स्त्रीलिंग होते हैं। जैसे वस्तु, ऋतु, झाड़ू, लू, लौ आदि

विशेष : वचन अध्याय में शब्दों के रूप परिवर्तन को अभ्यास करके देखें। फिर उनका यहाँ प्रयोग करें।

## लिंग-परिवर्तन

शब्द के पुलिंग रूप को स्त्रीलिंग में या स्त्रीलिंग रूपको पुलिंगमें बदलने के कुछ नियम जान लें तो लिंग-निर्णय में आसानी होगी। पुलिंग शब्दों में ऐसे परिवर्तन करके स्त्रीलिंग बनाते हैं -

१. अकारांत शब्दोंमें-आ जोड़ कर। जैसे-छात्र-छात्रा, शिष्य-शिष्या, वृद्ध-वृद्धा, सुत-सुता, पूज्य-पूज्या, अध्यक्ष-अध्यक्षा आदि।
२. अकारांत शब्दों में 'ई' जोड़कर। जैसे-देव-देवी, दास-दासी, गोप-गोपी, पुत्र-पुत्री, हिरन-हिरनी, कबूतर-कबूतरी आदि।
३. आकारांत शब्दों में 'ई' जोड़कर। जैसे- लड़का-लड़की, बेटा-बेटी, बच्चा-बच्ची, मामा-मामी, चाचा-चाची, घोड़ा-घोड़ी आदि।
४. आकारांत शब्दों में 'इया' जोड़कर। जैसे-कुत्ता-कुतिया, बेटा-बिटिया, बुद्धा-बुद्धिया, गुड्डा-गुड्डिया, चूहा-चुहिया, बंदर-बंदरिया आदि।
५. कुछ शब्दों के अंत में 'इन' जोड़कर। जैसे-नाती-नातिन, बाघ-बाघिन, साँप-साँपिन, धोबी-धोबिन, नाग-नागिन, आदि।
६. कुछ शब्दों के अंत में 'नी' जोड़कर। जैसे-शेर-शेरनी, मोर-मोरनी, हाथी-हाथिनी, सिंह-सिंहनी, ऊँट-ऊँटनी आदि।
७. कुछ शब्दों के अंतमें 'आनी' जोड़कर। जैसे-नौकर-नौकरानी, देवर-देवरानी, जेठ-जेठानी, सेठ-सेठानी, भव-भवानी, आदि।
८. शब्दांत 'अक' को 'इका' बनाकर। जैसे-लेखक-लेखिका, बालक-बालिका, पाठक-पाठिका, शिक्षक - शिक्षिका, अध्यापक-अध्यापिका आदि
९. कुछ शब्दों में 'आइन' जोड़कर। जैसे- गुरु-गुरुआइन, ठाकुर-ठाकुराइन, बाबू-बबुआइन, पण्डा - पण्डाइन आदि।
१०. शब्दांत 'वान' मान' का 'वती', 'मती' करके। जैसे-श्रीमान-श्रीमती, धनवान-धनवती।
११. स्वतंत्र शब्द द्वारा जैसे- माता-पिता, बैल - गाय, पति-पत्नी आदि।

## वचन

संज्ञा के जिस रूप से उसकी संख्या का बोध होता है, उसे वचन कहते हैं। हिंदी में वचन दो प्रकार के हैं- एक वचन, बहुवचन। एक वचन से एक व्यक्ति या वस्तु की सूचना मिलती है। बहुवचन से एक से अधिक व्यक्तियों या वस्तुओं की सूचना मिलती है।

**एक वचन से बहुवचन बनाने के नियम:**

### पुलिंग शब्द

१. आकारांत पुलिंग शब्द का अंतिम 'आ' बहुवचन में 'ए' हो जाता है। जैसे-

लड़का-लड़के, बच्चा-बच्चे, कुत्ता-कुत्ते, घोड़ा-घोड़े, केला-केले, कपड़ा-कपड़े, पहिया-पहिये, संतरा-संतरे, कमरा-कमरे, बकरा-बकरे, कचरा-कचरे, कूड़ा-कूड़े, अच्छा-अच्छे, मोटा-मोटे, कुम्हड़ा-कुम्हड़े आदि

२. आकारान्त शब्द के अलावा शेष सभी मात्राओं (अ/इ/ई/उ/ऊ/ए/ओ) के अंतवाले पुलिंग शब्दों का रूप नहीं बदलता। वे एक जैसे रहते हैं। जैसे- मकान-मकान, बालक-बालक, मुनि-मुनि, अतिथि-अतिथि, आदमी-आदमी, भाई-भाई, हाथी-हाथी, साधु-साधु, गुरु-गुरु, चाकू-चाकू, लड्डू-लड्डू, रेडियो-रेडियो, जौ-जौ, आदि।

### स्त्रीलिंग शब्द

१. जिन स्त्रीलिंग शब्दों के अन्त में अ/आ/उ/ऊ/औ/मात्रा हाती है, बहुवचन में वे 'एँ' हो जाते हैं। जैसे-

गाय-गायें, बात-बातें, बहन-बहनें, पुस्तक-पुस्तकें, बालिका-बालिकाएँ, लता-लताएँ, वस्तु-वस्तुएँ, ऋतु-ऋतुएँ, बहू-बहुएँ, झाड़ू-झाड़ूएँ, गौ-गौएँ आदि।

(विशेष - बंधुवचन में दीर्घ स्वर ह्रस्व उ हो जाता है।)

२. इ/ई/इया अंतकाल स्त्रीलिंग शब्द बहुवचन में 'इयाँ' होते हैं। जैसे-

जाति-जातियाँ, रीति-रीतियाँ, नदी-नदियाँ, लड़की-लड़कियाँ, बकरी-बकरियाँ, स्त्री-स्त्रियाँ, चिड़िया - चिड़ियाँ, बुढ़िया-बुढ़ियाँ आदि।

(विशेष - दीर्घ 'ई' ह्रस्व इ हो जाती है। नदी-नदियाँ। लड़की-लड़कियाँ आदि।

## परसर्ग युक्त शब्दों के रूप :

१. ने, को, से, के लिए, का, के, की, में, पर आदि परसर्ग हैं। इनसे संयुक्त आकारांत पुलिंग शब्दों के 'आ' के स्थानपर एकवचन में- 'ए' हो जाता है। जैसे-बच्चा-बच्चे को, बच्चे से, आदि। वैसे ही-कमरा-कमरे में, लड़का-लड़के ने, पंखा-पंखे से बहुवचन में-'ओं' होता है। जैसे-बच्चों को, लड़कों ने, पंखों को, आदि।
२. आकारांत पुलिंग शब्दों के अलवा बाकी सभी पुलिंग और स्त्रीलिंग शब्द एकवचन में एक-से रहते हैं। जैसे-घर में, अतिथि को, भिखारी को, रेड़ियो पर, बहन ने, आँख से, बालिका का, बहू को, गाय के लिए, आदि।
३. इ / ई कारांत पुलिंग स्त्रीलिंग शब्द बहुवचन में 'यों' जुड़ता है। जैसे-अतिथियों को, आदमियों को, भाइयों से, हाथियों पर, तिथियों में, लड़कियों से नदियों में आदि।
४. इ / ई कारांत को छोड़ बाकी सभी पुलिंग स्त्रीलिंग शब्दों के बहुवचन में 'ओं' लगता है। जैसे-घरों में, बहनों को, लड़कों से, लताओं पर, मालाओं का, बालिकाओं में आदि।

### कुछ विशेष बातें

१. आकारांत पुलिंग तत्सम शब्द बहुवचन में एकारांत नहीं होते- राजा, पिता, दाता, योद्धा, सखा, देवता, कर्ता, नेता, अभिनेता, महात्मा, जामाता, युवा, क्रेता, विक्रेता आदि।
२. आदरार्थक संबंधवाचक आकारांत पुलिंग शब्द भी एकारांत नहीं होते। जैसे-बाबा, चाचा, मामा, काका, पापा, नाना, फूफा, जीजा आदि।
३. कुछ आकारांत पुलिंग हिन्दी शब्द एकारांत नहीं होते। जैसे-अब्बा, खुदा, लाला, मुखिया, आदि।
४. कुछ शब्द नित्य बहुवचन होते हैं। जैसे-होश, आँसू, होंठ, दाम, दर्शन, प्राण, बाल, भाग्य, समाचार, हस्ताक्षर जैसे-  
'उसका होश उड़ गया' नहीं 'उसके होश उड़ गए'। प्राण चले गए। आदि।
५. कुछ शब्दों के साथ-लोग, गण, वृंद, समूह आदि शब्द जोड़कर बहुवचन रूप बनाए जाते हैं। जैसे-बच्चे लोग, शिक्षकवृंद, छात्रगण, पशुसमूह, भक्तजन, अधिकारीवर्ग, जनसमूह, आदि।

## विशेषण

जो शब्द संज्ञा या सर्वनाम शब्दों को कुछ विशेषताएँ (जैसे-गुण, संख्या, परिमाण आदि, बताते हैं- उनको विशेषण कहा जाता है। ये शब्द संज्ञा के पहले आते हैं। बाद में भी आ सकते हैं।

जैसे- सुंदर बालक, खट्टा अंगूर, अपना काम, गरीब आदमी।

विशेषण चार प्रकार के होते हैं। जैसे गुणवाचक, संख्यावाचक, परिमाणवाचक, सार्वनामिक।

१. गुणवाचक विशेषण- संज्ञा के गुण दोष, रंग-रूप आकार-प्रकार, समय-स्थान आदि का बोध कराते हैं।

गुण	- अच्छा, मीठा, सुंदर, सच्चा, मूर्ख, सीधा, सुंदर
रंग	- काला, गुलाबी, सफेद, चमकीला, बैंगनी, पीला, हरा
आकार	- गोल, चौड़ा, छोटा, तिकोना, नाटा, छोटा, नुकीला
दशा	- गरीब, गीला, गाढ़ा, दुबला, घना, पतला, बीमार
काल	- अगला, पिछला, आधुनिक, ताजा, बासी, भूत, भावी
दिशा	- ऊपरी, दक्षिणी, पश्चिमी, पूर्वी, पुरवाई, सामनेवाला
स्थान	- विलायती, अमेरीकी, ग्रामीण, देशी, पड़ोसी, शहरी

२. संख्यावाचक विशेषण: ये गणितीय संज्ञा की संख्या बताते हैं। ये दो प्रकार के होते हैं। यथा-निश्चित संख्यावाचक और अनिश्चित संख्यावाचक।

निश्चित-पाँच आदमी, सौ किसान, आधा पानी, दो-दोलड्डू, एक बटा चार, सवा सेर गहूँ, हरेक-आदमी, पहला सोपान, तीसरी दुनिया आदि

अनिश्चित- काफी लोग, बहुत मसाला, सैकड़ों लोग, कम चीनी, थोड़ा चावल, काफी सामान, कई पुस्तकें

३. परिमाणवाचक विशेषण: ये अगणनीय संज्ञा का परिमाण बताते हैं। जैसे-एक लीटर तेल, थोड़ी चाय आदि

निश्चित- पाँच किलो चीनी, एक मीटर कपड़ा, लोटा भर पानी



अनिश्चित- थोड़ा-सा दूध, अधूरा काम, ज्यादा माल, थोड़ी-सी तकलीफ, जरा-सा घी, सारा अनाज।

८. **सार्वनामिक विशेषण**: इसमें सर्वनाम पहले आता है और वह संज्ञा की विशेषता बताता है। जैसे-अपना काम, वह औरत, जैसा नाम वैसा काम, ऐसा लड़का, मेरा फोटो, कोई किताब, ये बच्चे आदि।

### विशेषण का रूप-परिवर्तन

विशेष्य या संज्ञा के लिंग - वचन के अनुसार विशेषणों का रूप-परिवर्तन होता है। ऐसे विशेषण विकारी कहे जाते हैं।

**आकारान्त विशेषण विकारी होते हैं, जैसे-**

यह एक अच्छा घोड़ा है। काबुली घोड़े अच्छे होते हैं।

वह एक अच्छे घरमें रहते हैं। मैं एक अच्छी कोठरीमें रहा हूँ

वह एक अच्छी लड़की है। अच्छी लड़कियाँ खूब पढ़ती हैं।

**अकारान्त विशेषण अविकारी होते हैं।** अर्थात् विशेष्य या संज्ञा के लिंग-वचन के अनुसार उनमें कोई परिवर्तन नहीं होता। जैसे-

रमेश एक तेज लड़का है। उषा एक तेज लड़की है।

कैसा सुंदर कमल खिला है। कैसी सुंदर यह जूही खिली है।

### विशेषण के विशेषण

अति सुंदर, बहुत अच्छे, एकदम हल्का, आदि।

### प्रश्न और अभ्यास

९. इनमें से कौन - सा विशेषण किस वर्ग का है, छाँटिए:

गोल, देहाती, सुंदर, शुभ्र, पीला, चौड़ा, हल्का, प्राचीन, मैला, सीधा, कितना, मूर्ख, कोई, तरल, सरल, बहुत, अच्छा, उम्दा, तेजस्वी, बुद्धिमती, पाँच किलो, एक लीटर, थोड़ी, वैसी तीन सौ, पचास, दो तिहाई, अद्धा, पर्याप्त, काफी, यथेष्ट, गीला, गरीब, उत्तरी, दूरवर्ती, देशी, तिकोना, खट्टा, चतुर, नुकीला, मोटा, लम्बा। इसप्रकार

के विशेषण शब्द ढूँढकर उनका भेद जानिए।

२. निम्न वाक्यों में विशेषण शब्द छाँटिए:

नाटा लड़का बहुत साहसी है।

एक कप चाय दो रुपये में मिलती है।

उड़ते पंछी बहुत सुंदर लगते हैं।

३. विशेष्य (संज्ञा) और सही विशेषण लगाकर शब्द बनाइए।

जैसे-कीमती कमीज, सुंदर फूल, हल्के जूते, बहता पानी आदि

४. विशेषण से विशेष्य से विशेषण शब्द बनाइए:

जैसे- सुंदर-सुंदरता, सौंदर्य, हरा-हरियाली, मीठा-मिठास।

छोटा-छोटपन, मधुरता-मधुर, विद्वान्-विद्या।

## प्रश्न और अभ्यास

१. सही विकल्प चुनिए:

(i) व्यक्तिवाचक संज्ञा कौन है?

(क) राजा (ख) बिंध्य (ग) मनुष्य (घ) चाँदी

(ii) भाववाचक संज्ञा पद छाँटिए:

(क) समुद्र (ख) लड़कपन (ग) तेल (घ) चावल

(iii) द्रव्यवाचक संज्ञा पद छाँटिए:

(क) सिलाई (ख) ढालना (ग) शैशव (घ) सोना

(iv) कवि का बहुवचन रूप होगा-

(क) कविता (ख) कवियों (ग) कवि (घ) कवयित्री

(v) सही स्त्रीलिंग रूप कौन - सा है?

(क) धोबिन (ख) धोबिनी (ग) धोबन (घ) धोबनी

२. नीचे लिखे संज्ञा शब्दों का सही वर्ग बताइए! अर्थात् कौन व्यक्तिवाचक है, कौन द्रव्यवाचक है कौन भाववाचक आदि है ?

चेतक, मिठास, कमजोर, मानव, अपना, पढ़ाई, महेश, कोलकाता, घोड़ा, पुस्तक, पुरुष, मछली, आनंद, नमक, सोना, लकड़ी, लड़की, नदी, शहर, राजा, शैशव, हर्ष, कडवाहट, बचपन, कवित्व, सजावट, पौरुष, बुढ़ापा, धैर्य, आतुर, वैसा, दूर, हरिश्चन्द्र, महानदी।

३. इनमें से पुलिंग और स्त्रीलिंग शब्द छाँटिए: कलम, पुस्तक, दरवाजा, घोड़ी, तोता, चाँदी, कोयल, कौआ, पानी, मोती, रोटी, बरगद, गुलाब, जुही, अंधकार, चाँदनी, चन्द्रमा, हवा, प्रभंजन, घास, पेड़, तुलसी, अंगूर, संतरा, पपीता, बैंगन, लौकी, मूली, अभिलाषा, कामना, वासना, साहस, धैर्य, दीवार, मकान, साँप, लाला, बंदर, बेटा, पागल, मामी, बेगम, राजा।

३. लिंग बदलकर लिखिए:

छात्र, शिक्षक, कवि, अध्यापक, तेली, शेर, भालू, बूढ़ा, ठाकुर, नौकर, मोरनी, हथनी, नागिन, सुनार, राजा, भेड़, भैंसा, फूफा, सम्राट, युवती, श्रीमान, बकरा, चूहा, कुत्ता, खरगोश, कोयल, कमल।

४. निम्नलिखित शब्दों में से जो एकवचन हैं उनको बहुवचनमें और जो बहुवचन में हैं उनको एक वचन में बदलिए:

रात, पपीता, लड़का, केला, मेला, लात, मनुष्य, मेज, कुर्सियाँ, संतरा, कमरा, मकान, अमरूद्ध बैंगन, मूली, भिखारी, जाति, माला, ताला, टोली, गाय, बाघ, सियार, चिड़िया, मजदूर लोग, शिकायत, कली, ठेला, मुनि, चिता, सखा, दाता, महात्मा, चाचा, गायक, पुस्तक, नाली, टहनी, झूला, झिंगोला, हाथ, उँगलियाँ, फूल, आलू, मिठाई, अनुभूति, अनुमति, दिन, कलम, लेखनी, अंगूठी। ऐसे अनेक शब्दों के रूप परिवर्तन का अभ्यास कीजिए।



## प्रयोजनमूलक हिन्दी और रचना

### (i) पल्लवन

पेड़-पौधों से निकलनेवाले नए कोमल पत्तों को हिन्दी में 'किशलय', 'पल्लव' या कोंपल कहा जाता है। पल्लव की तरह बढ़ना, पनपना या विकसित होना पल्लवन कहलाता है। साहित्य में इसका अर्थ है संक्षिप्त विषय या कथ्य का विस्तार करना। अंग्रेजी में इसे Expansion कहते हैं, अर्थात् विस्तारण। लेकिन हिन्दी में 'पल्लवन' शब्द ही काफी प्रचलित है।

सच में, किसी गूढ़, गंभीर, गुम्फित, सुगठित भाव या विचार को विस्तार पूर्वक बहाया जाय तो वह आसानी से समझ में आ जाता है। सूक्ति, अर्थपूर्ण वाक्य, वाक्यांश और लोकोक्ति आदि में कम शब्दों का उपयोग करके गहन और गंभीर विचार वक्त किये जाते हैं। उनको अच्छी तरह समझाना हो तो विस्तार से कहना पड़ता है। इसलिए साहित्य में 'पल्लवन' का बड़ा महत्व है।

विस्तारपूर्वक कही गई बातों को संक्षेप करके समझा जाता है। उसका सार ग्रहण किया जाता है, उसे संक्षेपण किया जाता है। भावों, विचारों के आदान-प्रदान में संक्षेपण और पल्लवन अत्यन्त आवश्यक कार्य हैं। इसलिए प्रयोजनमूलक हिन्दी में इनका अध्ययन किया जाता है। प्रायोगिक हिन्दी के व्यवहार के बाद इनका प्रयोग काफी बढ़ गया है।

इस क्षेत्र में दक्ष साहित्यकार रामवृक्ष बेनीपुरी, रामधारी सिंह 'दिनकर', शिवपूजन सहाय, कन्हैयालाल मिश्र 'प्रभाकर', रामविलास शर्मा आदि की रचनाओं का अध्ययन करने से बहुत बड़ी सहायता मिलती है। ये साधन मस्तिष्क को नवीन और प्रेरणादायक विचार प्रदान करते हैं। भाव-पल्लवन करने में इन अनुभवों से बहुत मदद मिलती है।

## पल्लवन की प्रक्रिया

- (i) पल्लवन के लिए मूल अवतरण के वाक्य, सूक्ति, लोकोक्ति अथवा कहावत को ध्यानपूर्वक पढ़िए ताकि उसका निहितार्थ भलीभाँति समझ में आ जाय। सूक्ति या मित कथन के सभी पहलुओं पर गहराई से विचार करना चाहिए। बिना अर्थ समझे पल्लवन की प्रक्रिया असम्भव है और यदि प्रयास करें भी तो अर्थ का अनर्थ होने का खतरा है।
- (ii) मूल भाव या विचार के नीचे दबे अन्य सहायक विचारों को भी समझने की चेष्टा की जाय। इस से मूल और गौण विचार समझ में आ जाते हैं। कवि या लेखक ने किस संदर्भ में यह बात कही है, उसे जान लेनेके बाद मूल भाव समझना आसान हो जाता है।
- (iii) जो भी विचार सम्बन्धि विषय से हमारे मस्तिस्क में उभरकर आते हैं, उन्हें संक्षिप्त रूप से कागज पर उतार देना चाहिए। इस स्तर पर यह सोचने की जरूरत नहीं है कि हमारा पल्लवन कहीं बड़ा न हो जाय। बल्कि इस बात का ध्यान रहना चाहिए कि कहीं कोई तथ्य या विचार छूटने न पाए। इस प्रक्रिया में कोई नई बात या सटीक उद्धरण अगर दिमाग में आजाय तो उसे भी नोट कर लिया जाय।
- (iv) लिखे गये सभी तथ्या या विचारों को एक-दो बार फिर पढ़ लिया जाय। फिर उनका निरीक्षण-परीक्षण कर लीजिए कि कहीं कोई अनावश्यक या अप्रासंगिक विचार तो नहीं रह गया है। अगर हों तो उन्हें काट दीजिए। बची हुई सामग्री को फिर - से जांच लीजिए।
- (v) अब पूरीतरह व्यवस्थित करके विषय को क्रम से सजा लीजिए ताकि विचार श्रंखलावद्ध हों। हर वाक्य, हर बात, हर विचार एक - दूसरे से स्वन्ध हों! एक जंजीर की तरह से विचार एक-दूसरे से गुँथे हुए हों। विचारों में, भावों में स्वाभाविक विकास होना-चाहिए।

- (vi) भाव और भाषा की अभिव्यक्ति में पूरी स्पष्टता, मौलिकता और सरलता होनी चाहिए। वाक्य छोटे-छोटे और भाषा अत्यन्त सरल होनी चाहिए। अलंकृत भाषा लिखने की चेष्टा नहीं करनी चाहिए।
- (vii) पल्लवन में लेखक को मूल या गौण भाव या विचार की आलोचना या टीका - टिप्पणी नहीं करनी चाहिए। इसमें मूल लेखक के मनोभावों का ही विस्तार और विश्लेषण होना चाहिए।
- (viii) पल्लवन की रचना हर हालत में अन्य पुरुष में होनी चाहिए।
- (ix) पल्लवन व्यास-शैली की होनी चाहिए। समास शैली की नहीं।
- (x) जिस मुद्दे पर एक अनुच्छेद में चर्चा हो चुकी है।

उसे फिर दूसरे अनुच्छेद में नहीं उठाना चाहिए। ऐसा करने से पल्लवन की मार्मिकता नष्ट हो जायगी और वांछित प्रभावोत्पादकता नहीं रह पाएगी। पुनरावृत्ति का दोष पल्लवन का सबसे बड़ा शत्रु है, पर उससे बच पाना काफी दुष्कर कार्य है। पल्लवन की प्रकृति लघु होने के कारण यह दोष शीघ्र पकड़ में आ जाता है और पढ़नेवाले पर अच्छा प्रभाव नहीं पड़ता। इसलिए इससे बचना चाहिए।

### पल्लवन में भाषा

साहित्य-कर्म के लिए शब्द-भण्डार का विशद होना अनिवार्य है। शब्दों के अर्थ सम्बन्धी गहराइयों की जानकारी से लेखन-कार्य में बहुत मदद मिलती है। शब्द कई प्रकार के होते हैं - समान और भिन्न अर्थ रखनेवाले शब्दों की, मिलते-जुलते शब्दों की और पर्यायवाची तथा विलोमार्थक शब्दों की सही - सही जानकारी होने से पल्लवन - लेखन का कार्य बहुत सहज हो जाता है। जिस शब्द का भी प्रयोग किया जाय, उसके अर्थ की सीमाओं का ज्ञान लिखनेवाले को अवश्य होना चाहिए। शब्द-सामर्थ्य बढ़ाने के लिए अच्छे शब्दकोश का प्रयोग, पत्र-पत्रिका या साहित्यिक कृतियों का नियमित अध्ययन एवं व्याकरण सम्बन्धी जानकारी सहायक सिद्ध होते हैं।

विषयवस्तु को समझना सरल हो जाता है और भाषा में सुबोधता आ जाती है। विषय के अनुकूल मुहावरों और लोकोक्तियों का प्रयोग करने से भावों के खुलने में मदद मिलती है और विचारों की गहराई स्पष्ट हो जाती हैं। अथास्थान प्रासंगिक घटनाओं की ओर संकेत करने से कथन की पुष्टि होती है, लेकिन अधिक विस्तार में जाने की आवश्यकता नहीं है।

वर्तनी सम्बन्धी अशु दियों से बचना परम आवश्यक है। व्याकरणिक नियमों के अनुपालन के साथ साथ विराम-चिह्नों का सही प्रयोग होना चाहिए। साथ ही अनुस्वार और अनुनासिक के प्रयोग में; 'ब' और 'व' के प्रयोग में तथा 'श', 'स' और 'ष' के प्रयोग में सावधानी बरतनी चाहिए।

उपसंहार का जहाँ तक प्रश्न है, पल्लवन के उपसंहार में कसावट होनी चाहिए। विषय को संगुणित करके भाव और विचारों का निर्वाह साफ-सुथरे ढंग से होना चाहिए। पल्लवन की शब्द-संख्या के बारे में यद्यपि कोई निश्चित सीमा नहीं है, फिर भी इसे ३०० से ५०० तक के शब्दों एक सीमित रखना उचित होगा। अगर शब्द-संख्या के बारे में कोई निर्देश हो तो उसका पालन किया जाना चाहिए। अद्यपि पल्लवन को 'लघु निवन्ध' और 'अनुच्छेद-लेखन' भी कहा जाता है, आम तौर पर पल्लवन को एक अनुच्छेद के अन्दर ही सीमित रखा जाता है।

## उदाहरण

### (i) परहित सरिस धरम नहि भाई

सृष्टिकर्ता द्वारा एक अनमोल एवं सर्वश्रेष्ठ रचना के रूप में मनुष्य का निर्माण हुआ है। परन्तु मनुष्य इस अनमोल देह को पाकर केवल अपने ही हित में जुटा रहता है, जैसे एक पशु हमेशा अपनी ही हित की सोचता है। सृष्टि की इस रचना में उसी का जीवन सार्थक है जो दूसरों के हितार्थ अपना जीवन समर्पित कर दे। मनुष्य का आदर्श यही होना चाहिए कि चेतन जगत के सभी प्राणी सुख से रहें। यही सबसे बड़ा धर्म है। इसके विपरीत मन,

वाणी और कर्म से इषयें का अहित करना अथवा उन्हें दुःख देना पाप-कर्म है। पुण्य कमाने के लिए परोपकार अचूक मन्त्र है। महर्षि दलीचि राजा शिवि दयानन्द सरस्वती, महात्मा गाँधी और ईसा मसीह आदि ने परोपकार मे 'अपने जीवन का होम करदिया उनकी प्रशस्ति का गान आज भी मानव समाज करता रहता है और आगे भी करता रहेगा। जहाँ जीवन है वहाँ मृत्यु भी निश्चित है। परन्तु वास्तविक जीवन वही है जो मरने के बाद श्रद्धा से स्मरण किया जाता रहे। इसलिए मनुष्य को चाहिए कि वह परहित के लिए अपनी बृद्धि और शक्ति के अनुसार सदैव तैयार रहे और जरूरत पड़ने पर इस के लिए अपने जीवन को न्यौछावर कर दे।

## (ii) सादा जीवन उच्च विचार

आज पश्चिमी देशों की ओर से जो नारा सुनाई दे रहा है 'simple and high thinking' का, वह वस्तुतः प्राचीन भारतीय परम्परा की उपज है। हमारे यहाँ गुरुकुल परम्परा में सर्वप्रथम यह शिक्षा दी जाती थी कि मानव की जीवन-चर्या कितनी सरल एवं सादासीधा हो! हमारे साधु-संत भी स्वयं वैसी जिन्दगी जीते थे और सबको इसकी शिक्षा देते थे।

एक व्यक्ति अगर कंजूस है और सादा जीन व्यतीत करता है तो उस जीवन को 'सादा जीवन' नहीं कहा जाएगा; क्यों कि वह धन एकत्र करने के लोभ में ऐसा कर रहा है। यदि कोई किसी के लिए त्याग करे तो वह बहुत महत्त्वपूर्ण है, क्यों कि त्याग से बढ़कर कोई धर्म नहीं। त्याग सदैव मंगलकारी होता है। ऐसे भी उदाहरण हैं कि कुछ व्यक्ति ऐश्वर्यपूर्ण जीवन विताते हुए भी बहुत महान कार्य कर जाते हैं, परन्तु वे अपवाद हैं। वैसे देखा यही जाता है कि सादा जीवन ही उच्च विचारों को जन्म देता है। सादा जीवन बिताने के लिए महात्मा गाँधी जी के जीवन को उदाहरण के रूप में लिया जा सकता है। यह नहीं कि वे मितव्ययी थे या ऐश्वर्यपूर्ण वस्तुओं को खरीद नहीं सकते थे, अपितु उनमें त्याग भावना ही अधिक थी। उनके जीवन का एक मात्र उद्देश्य अपने देश को स्वतन्त्र करवाना था, जो उन्होंने किया। उनके विचार



में 'बुरा मत देखो', 'बुरा मत कहो' और 'बुरा मत सुनो' उच्च विचार को चरितार्थ करता है। आज की पुकार भी यही है कि प्रत्येक मनुष्य 'सादा जीवन उच्च विचार' उक्ति को आदर्श मानकर त्याग भावना से अपना जीवन व्यतीत करे, परिणामस्वरूप सभी सुखी हो सकते हैं।

### अभ्यास

- (i) जननी जन्मभूमिश्च स्वर्गादपि गरीयसी
- (ii) चरित्र ही जीवन का भूषण है
- (iii) परिश्रम ही सफलता की कुंजी है
- (iv) कल करें सो आज कर
- (v) जैसी संगति बैठिए तैसोई फल होत
- (vi) आतिथ्य परम धर्म है / अतिथि देवो भव
- (vii) घर का भेदी लंका ढाए
- (viii) पुस्तकें हमारी सच्ची मित्र हैं
- (ix) समरथ को नाहिं दोष गोसाईं
- (x) चार दिन की चाँदनी फिर अन्धेरी रात
- (xi) जहाँ चाह, वहाँ राह
- (xiii) स्त्री का आभूषण शील और लज्जा है।



## पत्र - लेखन

हमारे दैनिक जीवन में पत्र व्यवहार का एक विशेष स्थान है। हमें अपने सगे सम्बन्धियों तथा मित्रों को पत्र द्वारा विभिन्न व्यक्तिगत समाचारों से अवगत कराना पड़ता है। दुकानदार को पत्र द्वारा विभिन्न प्रकार की वस्तुओं का आदेश देना पड़ता है। सरकारी दफ्तरों, पाठशालाओं, कालेजों में आवेदन - पत्र देने पड़ते हैं। अधिकारियों का ध्यान विभिन्न प्रकार की अवस्थाओं की ओर आकर्षित करने के लिए पत्र लिखने पड़ते हैं। विवाह, जन्म-दिवस, मुण्डन आदि के उत्सवों पर निमन्त्रण-पत्र भेजने पड़ते हैं। अतः यह आवश्यक है कि हम इन सभी प्रकार के पत्रों के लिखने की विधि से भलीभाँति परिचित हों।

### पत्र-लेखन के प्रकार

सामाजिक प्राणी होने के कारण मनुष्य को समाज के दूसरे वर्गों या व्यक्तियों से सम्पर्क बनाये रखना पड़ता है। विचारों के आदान-प्रदान, कुशल-क्षेम की जानकारी तथा अन्य अनेक प्रकार के सम्बन्ध स्थापित करने के लिए दूसरे माध्यम के होते हुए भी उसे पत्र-लेखन की आवश्यकता पड़ती है। कुल मिलाकर इन्हें तीन वर्गों में बाँटा जाता है - (1) निजी पत्र; (2) व्यावहारिक पत्र अथवा कामकाजी पत्र (3) सरकारी एवं अर्ध-सरकारी पत्र।

- (1) **निजीपत्र** - जो पत्र माता-पिता, भाई-बहन, मित्र आदि को लिखे जाते हैं, वे निजी पत्र व घरेलू पत्र कहलाते हैं। पिताजी को छात्रावास के संबंध में लिखा गया पत्र, बहन को गर्मियों की छुट्टियों में उपयुक्त पुस्तकें पढ़ने के लिए लिखा गया पत्र आदि इसी कोटि में आते हैं। निमन्त्रण पत्र, शोक-पत्र, बधाई पत्र आदि की गणना भी इसी वर्ग के

- अन्तर्गत की जाती है। इस वर्ग के पत्रों को वैयक्तिक पत्र भी कहते हैं।
- (2) **व्यावहारिक पत्र**- जो पत्र किसी दुकानदार, व्यापारी कम्पनियों आदि से कोई वस्तु मँगाने अथवा व्यापारिक सम्बन्ध स्थापित करने के लिए लिखे जाते हैं वे व्यावसायिक पत्र माने जाते हैं। पूछताछ सम्बन्धी पत्र, आवेदन पत्र या प्रार्थना पत्र अथवा शिकायती-पत्र, तकाजे का पत्र, साख पत्र, परिचय, बैंक सम्बन्धी पत्र, बीमा सम्बन्धी पत्र आदि की गिनती भी व्यावहारिक पत्रों के अन्दर की जाती है। इन सभी प्रकार के पत्रों को कामकाजी पत्र भी कहते हैं।

### **सरकारी एवं अर्धसरकारी पत्र**

जो पत्र शासन-विभाग के किसी व्यक्ति द्वारा किसी दूसरे शासन-विभाग को अथवा विभिन्न व्यक्तियों, संस्थाओं आदि को लिखे जाते हैं, वे सरकारी एवं अर्धसरकारी पत्र कहलाते हैं। सरकारी पत्र केन्द्र सरकार एवं राज्य सरकारों के विभिन्न मन्त्रालयों एवं कार्यालयों में हुए पत्र-व्यवहार को कहते हैं। सरकारी कार्यालयों में यह पत्र सबसे ज्यादा प्रयोग में आता है। सामान्यतः इस पत्र का प्रयोग विदेशी सरकारों, राज्य सरकारों, सम्बद्ध कार्यलय के अध्यक्षों, लोकसेवा आयोग जैसे सांविधिक निकायों एवं जनता के साथ पत्राचार में किया जाता है। इनके साथ साथ वे सभी पत्र जो विभिन्न विभागों से लिखे जाते हैं और भारत सरकार के आदेशों अथवा विचारों को अभिव्यक्त करते हैं, सरकारी पत्रों की श्रेणी में आते हैं। जैसे, ज्ञापन, परिपत्र, कार्यालय आदेश, अधिसूचना, संकल्प, पृष्ठांकन, अनुस्मारक पत्र आदि

### **अर्ध-सरकारी पत्र**

सरकारी पत्रों को अपेक्षा अर्ध सरकारी पत्र ज्यादा अनौपचारिक और व्यक्तिगत होते हैं। इनमें सरकारी पत्र लेखन की सभी औपचारिकता का पालन आवश्यक नहीं होता। ऐसे पत्रों का प्रयोग सरकारी अधिकारी आपस में विचारों अथवा सूचना के आदान-प्रदान केलिए करते हैं। जब किसी भी मुद्दे पर कार्यवाई में विलम्ब हो रहा हो तो सम्बन्धित अधिकारी को

व्यक्तिगत रूप से पत्र लिखकर कार्य के शीघ्र निपटान के लिए स्मरण कराया जाता है। इसके द्वारा व्यक्ति की दृष्टि आकर्षित होती है।

### पत्र-लेखन की विशेषताएँ :-

- (i) पत्र-लेखन की पहली शर्त है सरलता। किसी भी प्रकार का पत्र हो, उसमें सम्प्रेषणीयता होनी चाहिए। कठिन से कठिन विषय को भी सरल बनाकर लिखना चाहिए ताकि पाठक बड़ी ही सहजता से आपकी बात समझ जाय।
- (ii) इसमें सरलता के साथ-साथ स्पष्टता भी परम आवश्यक है ताकि बातें आसानी से समझी जा सकें। पत्र-लेखन में न तो पण्डित्य-प्रदर्शन की गुंजाइश है और न ही छन्द-अलंकारों से सौन्दर्य बढ़ाने की। पत्र-लेखक को हमेशा क्लिष्टता एवं रूढ़िवादिता से भी बचके रहना है। बोलचाल के शब्दों को लेकर छोटे - छोटे वाक्यों में अपनी बात कहें तो तुरन्त समझ में आ जाएगा।
- (iii) क्योंकि पत्र के जरिए लम्बे-चौड़े भाषण या वर्णनात्मकता की गुंजाइश नहीं रहती, पत्र-लेखक को संक्षिप्तता के साथ कम शब्दों में अपनी बात रखनी होती है।
- (iv) व्यवहार में जैसे हम शिष्टाचार की अपेक्षा रखते हैं, पत्राचार में भी हमारी भाषा शिष्ट और शालीन होनी चाहिए। किसी नकारात्मक बात बतानी भी हो तो उसे ऐसी विनम्रता से पेश करें कि पत्र-प्रापक को ठेस न पहुँचे। चाहे निजी पत्र हो या सरकारी, भाषा एवं शैली दोनों शालीनतापूर्ण होनी चाहिए।
- (v) पत्र की शैली में प्रभावोत्पादकता होनी चाहिए। पत्र ऐसा होना चाहिए पाठक पर उसका सीधा एवं संकलित प्रभाव पड़ सके। पत्र-लेखन को प्रभावी बनाने के लिए भाषा, पद एवं वाक्यों के साथ-साथ विचारों एवं भावों में भी अन्विति होनी चाहिए।

(vi) छात्र अगर परीक्षा दे रहा है तो पत्र के पहले भाग में अपना पता लिखने के स्थान पर 'परीक्षा भवन' लिखना चाहिए। इसी प्रकार पत्र की समाप्ति पर अपना नाम लेखने के स्थान पर 'क ख ग' लिखना चाहिए।

(vii) व्यावहारिक तथा निमन्त्रण पत्र में कुशल समाचार पूछने की जरूरत नहीं होती। इन पत्रों में केवल काम की बात ही अत्यन्त संक्षेप में लिख दी जाती है।

व्यक्तिगत पत्र मुख्यतः छः प्रकार के होते हैं – (i) पारिवारिक पत्र; (ii) आवेदन पत्र; (iii) पदाधिकारियों के नाम पत्र; (iv) व्यावसायिक पत्र; (v) संपादक के नाम पत्र; (vi) निमन्त्रण पत्र

परीक्षा अर्त्तीर्ण करने के लिए विद्यार्थियों को वैयक्तिक पत्रों की विधि की स्पष्ट जानकारी होनी चाहिए। प्रशस्ति, शिष्टाचार और समाप्ति के लिए जिन-जिन संबोधनों का प्रयोग किया जाता है, उनके कुछ नमूने इस प्रकार हैं—

**(क) अपने से बड़ों को**

**सम्बोधन**

पूज्य, मान्य, सम्मान्य, आदरणीय, प्रणाम, नमस्कार, नमस्ते, स्नेहपात्र, श्रद्धेय.....आदि

**अभिवादन**

सादर अभिवादन....आदि

**उपसंहार**

आज्ञाकारी, सेवक, कृपाभिलाषी, तुम्हारा स्नेही...दयाभिलाषी...

**(ख) अपने से छोटों को**

प्रियवर, आयुष्मान, चिरंजीव,

प्रिय.....

सुखी रहो, अभिनन्दित रहो,

आशीर्वाद, शुभाशीष....

शुभचिंतक,  
शुभाभिलाषी,

हितेच्छुक,

**(ग) मित्रों को**

प्रिय, प्रियवर, प्यारे, हृदयस्थ, अभिन्न हृदय....

नमस्ते, जयहिन्द, जय भारत, आपका मित्र, भवदीय सप्रेम नमस्ते, मधुर स्मरण... तुम्हारा ही, तुम्हारा स्नेही, तुम्हारा अपना ही....



उच्च अधिकारी के रूप में प्रतिष्ठित होता है; अतएव प्रारम्भ में 'मान्यवर' का सम्बोधन किया जाता है।

- (iv) प्रारम्भिक वाक्य विनय-भाव व्यक्त करनेवाले होते हैं। इसलिए शुरु में सादर निवेदन हैं, 'सेवा में निवेदन हैं' जैसे वाक्यांशों का प्रयोग किया जाता है।
- (v) पत्र की समाप्ति पर 'सधन्यवाद' शब्द का प्रयोग किया जाता है, जो शिष्टाचार का सूचक है।
- (vi) अन्त में स्वनिर्देश के रूप में भवदीय, विनीत, प्रार्थी जैसे शब्दों में से किसी एक का प्रयोग किया जा सकता है।

### आ. व्यापारिक पत्र कैसे लिखें

व्यापारिक पत्र लिखते समय निम्नलिखित बातों का ध्यान रखना चाहिए-

- (i) व्यापारिक पत्र संस्था के लैटर हेड पर ही लिखने चाहिए। इन पर संस्था का पूरा नाम, पता, फोन-संख्या, आदि लिखे रहते हैं। जिससे दूसरे पक्ष को सम्पर्क साधने अथवा उत्तर लिखने में सुगमता रहती है। यदि लैटर हैड न हो तो फिर ये सारी सूचनाएँ कागज के ऊपर टंकित करा लेनी चाहिए।
- (ii) चूँकि व्यापारिक पत्रों में पत्राचार के काफी समय तक बने रहने की संभावना रहती है; फलतः इन पर सबसे पहले बाईं ओर पत्र-संख्या एवम् क्रमांक अवश्य लिखते हैं। ठीक इसके सामने तथा लैटर हैड के दाईं ओर तिथि डाली जाती है।
- (iii) पत्रांक के एकदम नीचे उस व्यक्ति / संस्था का नाम लिखा जाता है जिसे पत्र भेजना अभीष्ट है।
- (iv) इसके बाद सम्बोधन तथा महोदय, प्रिय महोदय आदि लिखते हैं।
- (v) इसके बाद वे सब बातें लिखी जाती हैं जो आप कहना चाहते हैं। कारोबारी पत्रों में बात को घुमा-फिराकर कहने के स्थान पर संक्षेप में

सीधी – सीधी बात कही जाती है। यदि कोई स्पष्टीकरण देना होता है तो वह विश्वसनीय ढंग से दिया जाता है।

- (vi) इसके बाद स्वनिर्देश में 'भवदीय' लिखा जाता है।
- (vii) अन्त में हस्ताक्षर किये जाते हैं। कारोबारी पत्रों में हस्ताक्षर अत्यन्त महत्वपूर्ण स्थान रखते हैं। जो भी हस्ताक्षर करता है, उसके सम्बन्ध में यदि माना जाता है कि वह उस संस्था का एक महत्वपूर्ण, जिम्मेदार एवम् अधिकार-सम्पन्न व्यक्ति है। यही कारण है कि अत्यन्त महत्वपूर्ण पत्रों पर साझीदार अथवा व्यवस्थापक के हस्ताक्षर होते हैं जबकि कम् महत्वपूर्ण अर्थात् औपचारिक पत्रों पर इनसे छोटे पदों पर काम कर रहे व्यक्ति भी हस्ताक्षर करा देते हैं।

### (3) निमन्त्रण पत्र कैसे तैयार करें

सामाजिक पत्रों में निमन्त्रण – पत्रों का अत्यन्त महत्वपूर्ण स्थान है। शादी-ब्याह, मुण्डन, नामकरण, जन्मदिन जैसे उत्सव हर छोटे-बड़े घरों में होत रहते हैं। इन अवसरों पर निमन्त्रण – पत्र भेजने का भी पर्याप्त चलन है। यदि निमन्त्रित व्यक्तियों की संख्या अधिक होती है तो निमन्त्रण-पत्र प्रायः छोपे हुए भेजे जाते हैं। इन निमन्त्रण-पत्रों पर प्रायः ऐसे सम्बोधनों का प्रयोग किया जाता है जिनकी परिधि अत्यन्त व्यापक होती है- जो विभिन्न स्तरों तथा आयु-वर्गों के लिए समान रूप से प्रयोग में लाये जा सकते हैं। बंधुवर, मान्यवर आदि ऐसे ही हैं। अन्त में स्वनिर्देश के रूप में विनीत, दर्शनाभिलाषी, कृपाकांक्षी आदि शब्दों का प्रयोग किया जाता है। यह निमन्त्रण-पत्र के दाईं ओर अन्तिम पंक्ति से थोड़ा हटकर लिखा जाता है। निमन्त्रण-पत्र के दाईं ओर तथा स्वनिर्देश के एकदम सामने 'उत्तरापेक्षी' शब्द लिखकर नीचे परिवार के कतिपय महत्वपूर्ण व्यक्तियों के नाम लिख दिए जाते हैं। 'उत्तरापेक्ष' लिखने का मूल उद्देश्य यह होता है कि निमन्त्रित व्यक्ति अपने आने अथवा सम्मिलित न हो पाने की सूचना दे दे जिससे व्यवस्था में सुविधा हो सके।



**उदाहरण-१** (परिश्रम सफल होने पर पुत्र को बधाई पत्र)

चिरंजीव रमेश, सदासुखी रहो। बैंक लेन, भंजनगर (गंजाम)

७६०००१

१४ जुलाई २०१५

तुम्हारा पत्र अभी-अभी मिला। तुम्हारी सफलता का समाचार सुनकर मुझे, तुम्हारी माँ तथा तुम्हारे भाई-बहनों को जो प्रसन्नता हुई है उसका वर्णन शब्दों में नहीं किया जा सकता। परमात्मा का कोटिशः धन्यवाद है कि उन्होंने तुम्हारे परिश्रम का उचित फल तुम्हें दिया है।

प्रिय पुत्र! यह ठीक है कि इस वर्ष तुमने बी.ए. (प्रथम वर्ष) की परीक्षा में अच्छे अंक प्राप्त किये हैं, लेकिन तुम्हें इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि इस परिश्रम में अच्छे अंक प्राप्त किये हैं, लेकिन तुम्हें इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि इस परीक्षा में अच्छे अंक प्राप्त करके तुमने जिस यश का उपार्जन किया है वह भविष्य में खंडित न होने पाए। अतः तुम्हें नियमित रूप से कार्य करने का अभ्यास डालना चाहिए। ऐसा करने से तुम्हें परीक्षा के दिनों में अधिक परिश्रम न करना पड़ेगा तता तुम्हारे अंक भी अच्छे आएँगे।

घर पर सब लोग तुम्हारे आने की प्रतीक्षा अत्यन्त उत्सुकतापूर्वक कर रहे हैं। पत्र मिलते ही हमें लिखना कि तुम घर कब आ रहे हो? घर आते वक्त आशा और प्रतिभा के लिए कोई अच्छी-सी वस्तु अवश्य लेते आना।

तुम्हारा शुभाकांक्षी दिनेश कुमार महान्ति

उदाहरण-२ (छुट्टी के लिए प्रधानाचार्य को आवेदन-पत्र)

सेवा में,

प्रधानाचार्य,

सामन्त चन्द्रशेखर महाविद्यालय, पूरि-७२०००१

महोदय,

इस पत्र के द्वारा आपका ध्यान कालिया साहि स्थित झुग्गी-झोंपड़ी-वाली बस्ती की ओर आकर्षित करना चाहते हैं। यहाँ पर झुग्गी-झोंपड़ियाँ बनाकर रहनेवाले अधिकांश मजदूर श्रेणी के लोग हैं, जो ओड़िशा तथा आन्ध्रप्रदेश के गाँवों से जीविका की तलाश में आये हुए हैं। प्रायः अशिक्षित होने के कारण वे साफ-सफाई की ओर ध्यान नहीं देते। अपने आप बनी हुई बस्ती होने के कारण नगरपालिका का न तो कोई नियन्त्रण है और न ही साफ-सफाई का कोई प्रबन्ध है। परिणाम स्वरूप, दिन-ब-दिन बढ़ती गन्दगी से आसपास बदबू फैल रही है। जगह-जगह मच्छडों की आबादी भी तेजी से बढ़ रही है। इससे डेंगू, मलेरिया, चिकनगुनिया आदि की भी आशंका रहती है।

अतः कालिया साहि के आसपास की कालोनी में रहनेवाले निवासियों की ओर से आपसे अनुरोध करते हैं कि उस जगह की साफ - सफाई के लिए उचित प्रबंध करें। वहाँ पर रहनेवालों के स्वास्थ्य की जाँच की जाय और उन्हें स्वच्छ रहने का मार्ग-दर्शन किया जाय।

सधन्यवाद

आपके

ब्रिट कालोनी के निवासी, सालिया साहि,

२५ दिसंबर २०१६

भुवनेश्वर

**अभ्यास :-**

- (i) अपने विद्यालय के वार्षिकोत्सव का वर्णन कर मित्र को पत्र;
- (ii) छोटे भाई को बुरी आदतों में सुधार के लिए पत्र;
- (iii) समाचार-पत्र पढ़ने के लोगों का वर्णन कर छोटी बहन को पत्र;
- (iv) परीक्षा में असफल होने पर अपने मित्र को सहानुभूति-पत्र;
- (v) पिताजी को उनकी अस्वस्थता का समाचार पाकर चिन्ता जतानेवाला पत्र
- (vi) प्रधानाचार्य को फीस माफ कराने के लिए प्रार्थना - पत्र
- (vii) विवाह में सम्मिलित होने का अनुरोध कर निमन्त्रण-पत्र
- (viii) पुस्तक-विक्रेता को पुस्तक मँगाने के लिए पत्र
- (ix) नौकरी के लिए आवेदन-पत्र
- (x) हिन्दी की किसी मासिक-पत्रिका में एक साल के लिए ग्राहक बनने हेतु प्रबन्ध-कर्ता को पत्र
- (xi) उच्चतर माध्यमिक बोर्ड की परीक्षा में सर्वप्रथम आनेवाले अपने मित्र को बधाई पत्र
- (xii) मनीआर्डर के गुम हो जाने पर पोष्ट मास्टर को शिकायत-पत्र
- (xiv) रियायती टिकट प्राप्त करने के लिए स्टेशन मास्टर को पत्र
- (xv) मैच खेलने के लिए किसी दूसरी टीम को निमन्त्रण-पत्र।



## अपठित अनुच्छेद

अपठित अनुच्छेद का अर्थ है न पढ़ा हुआ अंश, चाहे गद्य हो या पद्य। अर्थात् विद्यार्थी अथवा परीक्षार्थी ने ऐसे अवतरण को कभी न पढ़ा हो या उससे सम्बन्धित न हो। दूसरे शब्दों में कहें तो अपठित गद्यांश या पद्यांश पाठ्य-पुस्तक से भिन्न हो। ये अवतरण प्रायः समाचार पत्रों, सामान्य ज्ञान की पुस्तकों और हिन्दी की विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं से लिये जाते हैं। ये न केवल साहित्य के दायरे में सीमित होते हैं, बल्कि विज्ञान, समाज-विज्ञान, इतिहास, भूगोल आदि किसी भी विषय से लिये जाते हैं। इससे विद्यार्थी के ज्ञान का विस्तार तो होता है, बौद्धिक गहराई, पहुँच और पकड़ की भी जाँच होती है। इससे छात्रों के सामान्य ज्ञान एवं स्वतन्त्र अध्ययन की भी परीक्षा हो जाती है। इसकी तैयारी में विद्यार्थी की कूपमण्डुकता समाप्त हो जाती है और वह विविध-विषयों की जानकारी पाता है, अपने ज्ञान को विस्तार देता है।

अपठित अनुच्छेद का अध्ययन प्रत्येक भाषा का एक महत्वपूर्ण अंश है। इसके जरिये विद्यार्थी के भाषा-ज्ञान का वास्तविक मूल्यांकन सम्भव होता है। किसी भी विषय को ध्यानपूर्वक पढ़ना, समझना और उसे दूसरे के सामने स्पष्ट रूप से समझा पाने का अभ्यास विकसित होगा। इस अभ्यास से विद्यार्थी भाषा एवं विषय दोनों पर अधिकार प्राप्त करता है। विषय के प्रत्येक पहलू को स्वयं समझने के साथ-साथ उसे स्पष्टता और पूर्णता के साथ दूसरों के सामने आस्था के साथ अभिव्यक्त करने में विद्यार्थी को सफलता मिलती है। अतः अपठित के निरन्तर अभ्यास से पठन-पाठन में एकाग्रता, सूझबूझ और अभिव्यक्ति - क्षमता का पूर्ण विकास होता है।

किसी अवतरण को पढ़कर भली-भाँति समझना और उससे सम्बन्धित प्रश्नों के उत्तर अपने शब्दों में देना एक समर्थ, जागरूक और संवेदनशील पाठक के लिए ही सम्भव है। परीक्षाओं में अपठित सम्बन्धी प्रश्नों का उद्देश्य विद्यार्थी की इस क्षमता को परखना होता है। अपठित सम्बन्धी प्रश्न कई प्रकार के हो सकते हैं। जैसे-व्याख्या, सारांश, भावार्थ, आशय, मुख्यार्थ, संक्षेपण, विशिष्ट शब्दों या अंशों के अर्थ, अवतरण से सम्बन्धित प्रश्न, शीर्षक-निर्धारण इत्यादि।

व्याख्या का जहाँ तक प्रश्न है, किसी गद्यांश या पद्यांश की विशेषताओं या उसके सौष्ठव के उद्घाटन को हम व्याख्या कहते हैं। इसका आकार मूल अवतरण के आकार से बड़ा हो सकता है। लेकिन इसका मतलब कतई यह नहीं है कि व्याख्या का अर्थ बढ़ाचढ़ाकर कहना या प्रस्तुत करना ही है; अपितु उसका अभिप्राय यह कि आप उस अवतरण को समझ गये हैं और समझी हुई बातों को दूसरों को समझाने में सक्षम है। व्याख्या में दृष्टान्त आदि का सहारा लिया जा सकता है। इसमें प्रसंग-निर्देश और विवेचित विषय की अनुकूल-प्रतिकूल समीक्षा भी हो सकती है। इसीप्रकार उसका सारांश, भावार्थ, आशय, मुख्यार्थ या संक्षिप्तीकरण पर भी प्रश्न किये जा सकते हैं। लेकिन अपठित अनुच्छेद में से हम जिन प्रश्नों के उत्तर की अपेक्षा करते हैं, वह कोई विशेष कठिन काम नहीं है, बल्कि एक प्रकार से मानसिक व्यायाम है। ऐसे गद्यांशों के मूल भाव को समझने के लिए परीक्षार्थियों को बुद्धि बल से काम लेना पड़ता है। थोड़ी सावधानी और धैर्य से काम लेने पर सारे सवालों के जवाब निकल आते हैं, क्यों कि सभी प्रश्नों के उत्तर उसी गद्यांश में ही रहते हैं।

- (i) अपठित गद्यांश से सम्बन्धित प्रश्नों को हल करने के लिए उसके मूल-भाव को समझना निहायत जरूरी है। एक बार में अगर विषय स्पष्ट न हों तो उसे एकाधिक बार ध्यान से पढ़ना चाहिए।

- (ii) फिर अवतरण के मूल भावों, महत्त्वपूर्ण विचारों और विशिष्ट शब्दों को रेखांकित कर लेना चाहिए।
- (iii) कभी-कभी अवतरण में क्लिष्ट शब्दों, वाक्यांशों या वाक्यों की व्याख्या पूछी जाती है। ऐसे शब्द, वाक्यांश या वाक्य प्रायः रेखांकित, तारांकित अथवा मोटे या काले अक्षरों में होते हैं, ये मूल-भाव को स्पष्ट करने में सहायक होते हैं। अतः इन पर विशेष ध्यान देना चाहिए। इनकी व्याख्या अपने ही शब्दों में कीजिए। कठिन शब्दों के मात्र पर्यायवाची लिखना उपयुक्त नहीं है। अपनी भाषा में 'भाव' सरलता और स्पष्टता से व्यक्त होते हैं। अतएव अपने ही शब्दों में लिखना अत्यन्त आवश्यक है।
- (iv) अगर रेखांकित व तारांकित शब्द अनेकार्थक हैं तो उनका अर्थ प्रसंग के अनुकूल ही लिखना चाहिए।
- (v) प्रश्नों के उत्तर मूल अवतरण में ही विद्यमान हैं, अतः उन्हें मूल अवतरण में ही ढूँढ़ें, बाहर नहीं। प्रायः प्रश्नों के क्रम में ही मूल अवतरण में उत्तर रहते हैं, अतएव प्रश्नों के क्रम में ही उत्तर खोजना सुविधाजनक होता है।
- (vi) प्रश्नों के उत्तर में मूल अवतरणों के शब्दों का प्रयोग किया जा सकता है, लेकिन भाषा - शैली अपनी होनी चाहिए।
- (vii) प्रश्नों के उत्तर प्रसंग और प्रकरण के अनुकूल ही संक्षिप्त, स्पष्ट और सरल भाषा में प्रस्तुत करने चाहिए, प्रश्नों के उत्तर में अपनी ओर से कुछ भी नहीं जोड़ना चाहिए और न कोई उदाहरण आदि देना चाहिए।
- (viii) प्रायः अपठित अनुच्छेद का शीर्षक देने को कहा जाता है। अगर न भी पूछा गया हो तो देने में कोई हर्ज नहीं है। हाँ, शीर्षक प्रसंग के अनुकूल होना चाहिए। साथ ही उसे यथा सम्भव संक्षिप्त, सरल एवं मूल-भाव को व्यक्त करनेवाला ही होना चाहिए।

## अपठित गद्यांश

### उदाहरण- १

“संयुक्त राज्य अमेरिका ने एटम बम बनाया और गत द्वितीय महायुद्ध में जापान पर उसका प्रयोग किया। जापान ध्वस्त हो गया और युद्ध के लिए तत्काल वह फिर उठ न सका। इसका यह निष्कर्ष निकाला गया कि एटम बम या ऐसे ही शक्तिशाली बमों के आतंक से युद्ध रोका जा सकता है। एटम बम से भी शक्तिशाली है हाइड्रोजन बम, जो पूरे विश्व के लिए खतरनाक है। अतः इन मारणास्त्रों की भयंकरता से विश्व को बचाने का एकमात्र उपाय है इनके प्रयोग पर रोक लगाना।”

**प्रश्न:** ऊपरलिखित गद्यांश को पढ़कर पूछे गए प्रश्नों के उत्तर दीजिए:

- (i) द्वितीय महायुद्ध में किसने जापान पर एटम बम का प्रयोग किया ?
- (ii) एटम बम के गिराये जाने से जापान का क्या नुकसान हुआ ?
- (iii) इसका क्या निष्कर्ष निकाला गया ?
- (iv) कौन-सा बम एटम बम से भी शक्तिशाली है ?
- (v) उन मारणास्त्रों से विश्व को बचाने का क्या उपाय है ?

### अपेक्षित उत्तर

- (i) संयुक्त राज्य अमेरिका ने गत द्वितीय महायुद्ध में जापान पर एटम बम का प्रयोग किया था।
- (ii) एटम बम के गिराये जाने से जापान में काफी तबाही हुई और युद्ध के लिए तत्काल वह फिर तैयार नहीं हो सका।
- (iii) इसका यह निष्कर्ष निकाला गया कि एटम बम या ऐसे ही शक्तिशाली बमों के आतंक से युद्ध रोका जा सकता है।
- (v) इन मारणास्त्रों से विश्व को बचाने का एकमात्र उपाय है इनके प्रयोग पर रोक लगाना।

## शीर्षक : मारणास्त्र और विश्व शान्ति

### उदाहरण- २

प्रश्न- निम्नलिखित गद्यांश को पढ़कर पूछे गये प्रश्नों के उत्तर दीजिए:

साहित्योन्नति के साधनों में पुस्तकालयों का अत्यन्त महत्त्वपूर्ण स्थान है। इनके द्वारा साहित्य के जीवन की रक्षा, पुष्टि और अभिवृद्धि होती है। पुस्तकालय सभ्यता के इतिहास का जीता-जागता गवाह है। इसीके बल पर वर्तमान भारत को अपने अतीत गौरव पर गर्व है। पुस्तकालय भारत के लिए कोई नई वस्तु नहीं है। लिपि के आविष्कार से आजतक लोग निरन्तर पुस्तकों का संग्रह करते रहे हैं। पहले देवालय, विद्यालय और नृपालय इन संग्रहों के प्रमुख स्थान होते थे। इनके अतिरिक्त, विद्वजनों के अपने निजी पुस्तकालय भी होते थे। मुद्रण-कला के आविष्कार से पूर्व पुस्तकों का संग्रह करना आजकल की तरह सरल बात न थी। आजकल साधारण स्थिति के पुस्तकालय में जितनी सम्पत्ति लगती है, उतनी उन दिनों कभी-कभी एक-एक पुस्तक की तैयारी में लग जाया करती थी।

- (i) पुस्तकालय से साहित्य का क्या उपकार होता है ?
- (ii) पुस्तकालय के कारण भारत को कैसा गौरव प्राप्त था ?
- (iii) पुराने समय में अधिक व्यय क्यों होता था ?
- (iv) पहले पुस्तकों का संग्रह किन-किन जगहों से होता था ?
- (v) कबसे हमारे यहाँ पुस्तकों का संग्रह लगातार होता रहा ?

### उत्तर

- (i) पुस्तकालय के द्वारा साहित्य के जीवन की रक्षा, पुष्टि और अभिवृद्धि होती है।
- (ii) पुस्तकालय की प्रसिद्धि के कारण देश-विदेश में भारत को गौरव प्राप्त था।



- (iii) पुराने समय में मुद्रण की व्यवस्था न होने के कारण पुस्तकालयों पर अधिक व्यय होता था।
- (iv) लिपि के आविष्कार से आजतक लोग निरन्तर पुस्तकों का संग्रह करते रहे हैं।

**शीर्षक- 'पुस्तकालय और भारत' ।**

**अभ्यास:**

**१. निम्नलिखित गद्यांश को पढ़कर पूछे गए प्रश्नों के उत्तर दीजिए।**

इस संसार में धन ही सबकुछ नहीं है। धन की पूजा तो बहुत कम जगहों में होती देखी गई है। संसार का इतिहास उठाकर देखिए और उदाहरण ढूँढ-ढूँढकर सामने रखिए तो आपको विदित हो जाएगा कि जिनकी हम उपासना करते हैं, जिनके लिए हम आँखें बिलाने तक को तैयार रहते हैं, जिनकी स्मृति तरोताजा रखने के लिए हम अनेक तरह के स्मारक-चिन्ह बनाकर खड़े करते हैं, उन्होंने रुपया कमाने में अपना समय नहीं बिताया था, बल्कि उन्होंने कुछ ऐसे काम किये थे जिनकी महत्ता हम रुपये से अधिक मूल्यवान समझते हैं। जिन लोगों के जीवन का उद्देश्य केवल रुपया बटोरना है, उनकी प्रतिष्ठा कम हुई है। अधिकांश अवस्था में उन्हें किसीने पूछा तक नहीं है।

**प्रश्न**

- (i) धन की पूजा से क्या अभिप्राय है ?
- (ii) संसार में किस प्रकार के मनुष्यों की पूजा होती है ?
- (iii) किसकी महत्ता हम रुपये से अधिक मूल्यवान समझते हैं ?
- (iv) संसार में धन के पूजारियों की क्या गति होती है ?
- (v) संसार के इतिहास से कैसे-कैसे उदाहरण मिल जाएँगे ?

## शीर्षक- 'धन से महान है महत काम'

### अभ्यास- II

हमारी हिन्दी सजीव भाषा है। इसी कारण, इसने अरबी, फारसी आदि के सम्पर्क में आकर इनके तो शब्द ग्रहण किये ही हैं, अब अंग्रेजी के भी शब्दग्रहण करती जा रही है। इसे दोष नहीं, गुण ही समझना चाहिए; क्यों कि अपनी इस ग्रहण शक्ति से हिन्दी अपनी वृद्धि कर रही है, ह्रास नहीं। ज्यों-ज्यों इसका प्रचार बढ़ेगा, त्यों-त्यों इसमें नए शब्दों का आगमन होगा। क्या भाषा की विशुद्धता के किसी भी पक्षपाती में यह शक्ति है कि वह विभिन्न जातियों के पारस्परिक सम्बन्ध को न होने दे अथवा भाषाओं की सम्मिश्रण क्रिया में रूकावट पैदा कर दे? यह कभी सम्भव नहीं। हमें तो केवल इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि इस सम्मिश्रण के कारण हमारी भाषा अपने स्वरूप को तो नहीं नष्ट कर रही - कहीं अन्य भाषाओं के बेमेल शब्दों के मिश्रण से अपना रूप तो विकृत नहीं कर रही।

### प्रश्न-

- (i) हिन्दी ने किन-किन भाषाओं से शब्द - ग्रहण किए हैं?
- (ii) इसमें नए - नए शब्द कैसे आते रहेंगे?
- (iii) भाषा की विशुद्धता के पक्षपाती में कौन-सी शक्ति नहीं है?
- (iv) हिन्दी भाषा की कौन-सी विशेषता है जिसे लेखक ने गुण माना, दोष नहीं।
- (v) हमें किस बात का ध्यान रखना चाहिए?

## अपठित पद्यांश

अपठित पद्यांश से सम्बन्धित प्रश्नों के उत्तर देने के लिए उन तमाम निर्देशों से सहायता ली जा सकती है, जो अपठित गद्यांश के सन्दर्भ में कहे गये हैं। उनके अतिरिक्त कतिपय निम्न विन्दुओं पर भी ध्यान देना अपेक्षित है-

- (i) पद्य में कभी-कभी गूढ़ अर्थ छिपा रहता है, जिसे बार-बार पढ़कर पद्य के सन्दर्भ के अनुसार उसके रहस्य तक पहुँचा जा सकता है।
- (ii) पद्य में अक्सर अलंकारों, बिंबों और प्रतीकों के द्वारा बात कही जाती है। काव्य-कला के अनुसार उनका तात्पर्य समझना होगा। वरना अर्थ का अनर्थ हो सकता है।
- (iii) अगर कविता वर्णनात्मक हो तो उसका अर्थ सीधा, स्पष्ट और सरल होता है। अतः उसमें अपनी ओर से किसी गूढ़ अर्थ का आरोप नहीं करना चाहिए।
- (iv) मध्यकालीन कविता की भाँति उसमें छन्द, अलंकार की भरमार हो तो उत्तर छन्द, अलंकार के साथ न देकर सीधा और स्पष्ट देना चाहिए।

**उदाहरण के लिए:** निम्नलिखित पद्यांश पढ़कर पूछे गए प्रश्नों के उत्तर दीजिए

- (1) किसलय-कर स्वागत हेतु हिला करते हैं,  
मृदु मनोभाव-सम सुमन खिला करते हैं।  
डाली में नव फल नित्य मिला करते हैं,  
तृण-तृण पर मुक्ता-भार झिला करते हैं।  
निधि खोले दिखला रही प्रकृति निज माया,  
मेरी कुटिया में राज-भवन मन भाया।  
कहता है कौन कि भाग्य टगा है मेरा ?

वह सुना हुआ भय दूर भगा है मेरा।  
कुछ करने में अब हाथ लगा है मेरा,  
वन में ही तो गार्हस्थ्य जगा है मेरा।  
वह वधू जानकी बनी आज यह जाया  
मेरी कुटिया में राज-भवन मन भाया।

**प्रश्न-**

- (i) वन में किसलय क्यों हिला करते हैं?
- (ii) डाली में किसे रोज फल मिलते हैं?
- (iii) कौन कहता था कि वधू जानकी का भाग्य ठगा है?
- (iv) उन्हें वन में क्या करने का अवसर मिला है?
- (v) सीता जी को कुटिया में राज-भवन- सा सुख कैसे मिलता है?

**उत्तर**

- (i) वनवास के समय सीता जी के परिवार के स्वागत में नये पत्ते हिला करते हैं?
- (ii) खाने के लिए सीता जी को पर्याप्त फल मिलते हैं, जिन्हें वह डाली में संग्रह करती हैं।
- (iii) कल प्रातः काल राम को अयोध्या का राजा और सीता जी को रानी बनना था, पर अचानक कैकेयी के वर मांगने के कारण राम को वनवास जाना पड़ा। तभी प्रजा एवं इष्ट मित्रों ने उसे उनके भाग्य के ठगे जाने की बात कही।
- (iv) सीता जी को वन में अपने गार्हस्थ्य जीवन बिताने हेतु पति एवं देवर के लिए कुछ-न-कुछ करने का अवसर मिला।
- (v) जहाँ राजा राम हों, वहीं राज भवन है। प्राकृतिक सम्पदाओं से भरे वन में उन्हें राजभवन का-सा किसी चीज की कमी नहीं है।

## शीर्षक-वन में राज-भवन।

### उदाहरण

(2) निम्नलिखित पद्यांश पढ़कर पूछे गए प्रश्नों के उत्तर दीजिए:  
सबसे विराट् जनतन्त्र जगत् का आ पहुँचा,  
तैंतीस कोटि-हित सिंहासन तैयार करो;  
अभिषेक आज राजा का नहीं, प्रजा का है,  
तैंतीस कोटि जनता के सिर पर मुकुट धरो।  
आरती के लिए, तू किसे ढूँढता है मूरख,  
मन्दिरों, राजप्रासादों में, तहखानों में ?  
देवता कहीं सड़कों पर मिट्टी तोड़ रहे;  
देवता मिलेंगे खेतों में, खलिहानों में।

### प्रश्न

- (i) कवि ने किसे जगत् का सबसे बड़ा जनतन्त्र कहा है ?
- (ii) किसके लिए तैंतीस कोटि सिंहासनों की जरूरत है ?
- (iii) कवि ने ऐसा क्यों कहा कि आज राजा का नहीं प्रजाओं का अभिषेक होगा ?
- (iv) कवि ने किसे मूरख कहा है और क्यों ?
- (v) कवि ने किसे देवता बताया है ?

### उत्तर-

- (i) कवि ने भारत को ही जगत् का सबसे बड़ा जनतन्त्र कहा है।
- (ii) भारत की तत्कालीन जनसंख्या तैंतीस करोड़ थी, इसलिए कवि दिनकर ने उन तमाम प्रजाओं को सिंहासन देने को कहा, न किसी राजा, महाराजा को।
- (iii) उस समय राजतन्त्र का लोप और प्रजातन्त्र का उदय हो रहा था; अतः राजा की जगह अब जगता का ही अभिषेक होगा। अर्थात् जनता को सारे अधिकार प्राप्त होंगे।

- (iv) जो आज भी राजा, देवी-देवता और धनवानों के चक्कर में हैं, उन्हें कवि ने मूर्ख कहा है।
- (v) कवि ने किसान और मजदूरों को ही देवता कहा है, जो मन्दिरों में नहीं, खेत-खलिहानों में तथा सड़कों पर मिट्टी तोड़ते हुए पाये जाते हैं।

### शीर्षक- 'जनतन्त्र का स्वागत'

#### अभ्यास

(i) निम्नलिखित पद्यांश को पढ़कर पूछे गये प्रश्नों के उत्तर दीजिए:  
 तुम करोगे कल चलो मैं आज करता हूँ।  
 हर मुसीबत को नजरअन्दाज करता हूँ।  
 दुःख भी जो पास आये क्यों रहे कंगाल,  
 अश्रु के हीरक कणों का ताज धरता हूँ।  
 कौन हो मुँहताज बेदर्दी समय का  
 सामने जो है, उसे स्वीकार करता हूँ।  
 कौन गिरवी पड़े हाथ भविष्य के, मैं  
 रीतते में, बीतते में शाण धरता हूँ।  
 है परस्पर मुग्ध याचक बूँद और समुद्र!  
 श्रेष्ठ हर दाता, न होता हर भिखारी क्षुद्र!

- प्रश्न (i) कवि क्यों मुसीबत को नजर अन्दाज करने की बात करता है?
- (ii) दुःख के प्रति कवि का क्या अन्दाज है?
- (iii) कवि क्यों बेदर्दी समाज का मुँहताज होना नहीं चाहता है?
- (iv) 'भविष्य के हाथ गिरवी पडने' का तात्पर्य क्या है?
- (v) बूँद और समुद्र परस्पर मुग्ध याचक कैसे हैं?

## अभ्यास

(ii) निम्नलिखित पद्यांश को पढ़कर पूछे गए प्रश्नों के उत्तर दीजिए:  
आज मुक्ति के अरमानों ने मिलकर यों ललकारा है;  
ओ सब सोनेवाले जागो, गूँज रहा नक्कारा है!  
कैसी रात? कहाँ के सपने? यह नव प्रात पधारा है!  
ऐसे हँसते-से प्रभात का तुम करने सम्मान उठो,  
उठो, उठो, ओ नंगो-भूखो, ओ तुम सब इन्सान उठो ॥१॥  
ले प्राणों के फूल करों में, हिय में अमित उमंग भरे-  
कन्धे पर ले विजय-पताका, नयनों में रण-रंग भरे,  
नवल प्रात ले स्वागत को, तुम चलो वीर निशंक अरे,  
क्या भय? क्या डर? आज झिझक क्या ओ मानव सन्तान उठो;  
उठो, उठो, ओ नंगो-भूखो, ओ तुम सब इन्सान उठो ॥२॥

## प्रश्न-

- (i) कवि सोनेवालों को क्यों जगा रहा है?
- (ii) 'नव प्रभात' से कविका क्या अभिप्राय है?
- (iii) कविने 'नंगो-भूखो' किसके लिए कहा है?
- (iv) क्या-क्या लेकर नव प्रभात के स्वागत के लिए कवि आह्वान करते हैं?
- (v) सभी इन्सानों को कवि क्यों उठा रहे हैं?

शीर्षक- 'आम जनता का उत्थान'

